IMPACT FACTOR 2023
7.012

Year 14 (01) Vol. XXVII
August 2023

ISSN : 0976-8149
UGC List No. 48216
I.S.O. 9001-2015

Manglam

Half Yearly Journal of Humanities & Social Sciences

मङ्गलम्

मानविकी एवं समाज विज्ञान की अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका

A Peer Reviewed 'Refereed' Journal

Editor
Dr. Dinkar Tripathi

Manglam Sewa Samiti, Prayagraj (U.P.) India
(Regd. Under Society Registration Act 21, 1860)

सम्पादक :

डॉ० दिनकर त्रिपाठी

एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
फीरोज़ गाँधी कॉलेज, रायबरेली–229001 (उ.प्र.) भारत
1304/A आचार्य द्विवेदी नगर, जेल रोड, रायबरेली–229001 (उ.प्र.) भारत
मो० : 91-7398180008
Email : drdinkartripathi@gmail.com

प्रकाशक :

मङ्गलम् सेवा समिति

शिवम् अपार्टमेन्ट, नया ममफोर्डगंज, प्रयागराज–211002 (उ.प्र.) भारत
मो० : 91-9044666672
Website : www.manglamallahabad.com
Email : manglamjournal01@gmail.com
manglamsewasamiti@gmail.com

तकनीकि सहयोग :

डॉ० (श्रीमती) वंदना त्रिपाठी

मो० : 91-7398180009
Email : tripathivandana01@gmail.com

आवृत्ति :

अर्द्धवार्षिक

प्रथम अंक : फरवरी
द्वितीय अंक : अगस्त

मूल्य :

विदेश में : **$13**
देश में : **₹1000**

मङ्गलम् (अर्द्धवार्षिक द्विभाषीय) शोध पत्रिका में प्रकाशित सामग्री में दृष्टि, विचार और अभिमत लेखकों के अपने हैं, सम्पादक के नहीं। इनमें सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। अतः पत्रिका के सम्पादक एवं प्रकाशक पर इसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। विवाद माननीय न्यायालय प्रयागराज में ही विचारणीय होंगे।

PATRONS

- **Prof. P.C. Trivedi**, Ex. Vice Chancellor, Jay Narayan Vyas University, Jodhpur (Rajasthan)
- **Prof. Manoj Dixit**, Ex. Vice Chancellor, Dr. Rammanohar Lohia Avadh University Ayodhya (U.P.)
- **Prof. D.P. Tiwari**, Ex. Vice Chancellor, Veer Kunwar Singh Ara University Ara (Bihar)
- **Prof. Sri Prakash Mani Tripathi**, Vice Chancellor, Indira Gandhi National Tribal University Amarkantak (M.P.)
- **Prof. Sanjeev Kumar Sharma**, Ex. Vice Chancellor, Mahatma Gandhi Central, University of Bihar, Motihari (Bihar)
- **Prof. Suresh Chandra Pandey**, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Ram Hit Tripathi**, Ex. Principal, Pt. Mahadev Shukla Krishak Post Graduate College Gaur, Basti (U.P.)
- **Prof. R.N. Tripathi**, Member, Uttar Pradesh Public Service, Commission, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. M.S. Kambli**, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Prof. Umesh Prasad Singh**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. Ramjee Tiwari**, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Prof. A.K. Kaul**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. A.K. Srivastav**, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)

EDITORIAL BOARD

- **Prof. Rama Shankar Mishra**, University of Lucknow (U.P.)
- **Prof. Rajendra Singh Chauhan**, Himachal Pradesh University Shimla (Himachal Pradesh)
- **Prof. Anand Kumar Srivastav**, Ex. Principal, CMP College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Diwakar Tripathi**, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Dr. Ritesh Tripathi**, C.M.P. Degree College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)

- **Prof. Noor Mohhammad**, University of Delhi, Delhi
- **Prof. R.K. Mishra**, University of Lucknow (U.P.)
- **Prof. Geeta Tripathi**, Ganpat Sahai P.G. College, Sultanpur, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Prof. Awdesh Kumar Singh**, Feroze Gandhi PG College, RaeBareli, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)
- **Prof. Lokesh Tripathi**, Baba Raghav Das PG College Deoria, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Dr. Bhasker Shukla**, Hemwati Nandan Bahuguna Government P.G. College Naini, PRS University, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Vandana Tripathi**, Basic Education Board, Raebareli (U.P.)

ADVISORY BOARD

- **Prof. Anand Prakash Tripathi,** Dr. Hari Singh Gour University, Sagar (Madhya Pradesh)
- **Prof. K.K. Pandey**, Ex. Principal, DAV College Lucknow (U.P.)
- **Prof. R.S. Aadha**, Jai Narayan Vyas University, Jodhpur, (Rajasthan)
- **Prof. Nagendra Pratap Chauhan**, B.R.A. Bihar University, Muzzaferpur, (Bihar)
- **Prof. Anupam Sharma**, Indira Gandhi National Tribal University, Amarkantak, (M.P.)
- **Prof. Ravindra Kumar Sharma**, Kurukshetra University, Haryana
- **Prof. Mamta Mani Tripathi**, Udit Narayan P.G. College, Kushinagar, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Dr. Meera Pal**, Uttar Pradesh Rajshree Tandon Open University, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Shyam Prasad Saidal**, Bal Kumari Mahavidyalaya, Narayangarh, Chitwan, (Nepal)
- **Dr. Digvijay Nath Rai**, Agra College, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (U.P.)
- **Dr. Joydeb Garal**, University of Chittagong (Bangladesh)
- **Dr. Sanjay M. Wagh**, S. Gholap Arts Science & G. Pawar Commerce College, Shivle, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Dr. Mohd. Younes Bhat**, Government Degree College Kulgam, University of Jammu (J & K)
- **Dr. Sheelam Bharti**, Mata Sundari College for Women University of Delhi, Delhi

सम्पादकीय

वर्तमान में वैश्विक परिदृश्य में भारत राष्ट्र की छवि निरन्तर प्रगतिमान हुई है। वह चाहे आर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के बढ़ते कदम हो, चाहे अकादमिक उच्चता के प्रति निरन्तर गतिमयता हो, चाहे खेल जगत की प्रतिस्पर्धा में क्रीडकों की विजयोपलब्धियाँ हों, चाहे किसी देश में आयी प्राकृतिक आपदा के समय सहायता की उपलब्धता सुनिश्चित करना हो, चिकित्सा सुविधायें मुहैय्या कराना हो तथा चाहे दो देशों के बीच तनाव अथवा युद्ध की समस्या को सुलझाना हो, भारत अपनी अग्रणी भूमिका का निर्वहन करता रहा है। विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र में हमारे देश के वैज्ञानिकों ने जो ख्याति अर्जित किया है, वह पूरे विश्व के लिए चुनौतियों से भी हुई है। चाँद के दक्षिणी ध्रुव के रहस्यों की खोज के लिए चन्द्रयान–3 की वहाँ पर सफलतापूर्वक उतरने तथा वहाँ की रहस्यमयी स्थितियों का संज्ञान प्रदान किये जाने की अभूतपूर्व सफलता से सम्पूर्ण जगत् चकित हुआ है।

इस सफलता से भारत विश्व में प्रथम स्थान प्राप्त देश सिद्ध होकर इतिहास रच दिया है। इस देश की महिमा की स्पष्टता होने जा रही इस वर्ष भारत में G-20 शिखर सम्मेलन की बैठक से भी हो रही है, जिसकी अध्यक्षता भारत (1 दिसम्बर 2020 से 30 नवम्बर 2023 तक) करेगा। G-20 का लोगो भी भारतीय राष्ट्रीय ध्वज के जीवन्त तीन रंगों – केसरिया, श्वेत, हरे तथा पीले रंगों से सम्प्रेरित है। इसके अन्तर्गत भारत के राष्ट्रीय पुष्प कमल को पृथ्वी ग्रह के साथ संयुक्त कर बहुविध चुनौतयों के मध्य विकास को प्रदर्शित कराया गया है। लोगो के नीचे देवनागरी लिपि में ''भारत'' अंकित कर हमारे देश की महिमा ख्यापित की गई है। भारत द्वारा की जा रही G-20 की अध्यक्षता का विषय ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' अर्थात् ''एक पृथ्वी एक कुटुम्ब : एक भविष्य'' है। जो सम्पूर्ण पृथ्वी और व्यापक ब्रह्माण्ड में सभी प्रकार के जीवन मूल्यों, मानव, पशु, पक्षी, पौधे तथा सकल सूक्ष्म जीवों के परस्पर सम्बन्धों को लक्षित एवं पुष्टित करता है।

जी–20 का गठन 26 सितम्बर सन् 1999 ई० में यूरोपियन यूनियन और 19 देशों का एक अनौपचारिक समूह है, जिसके नेता प्रतिवर्ष जुटकर वैश्विक अर्थव्यवस्था की प्रगति किए जाने पर चर्चा करते हैं। अपनी आरम्भिक

अवस्था में यह वित्त मन्त्रियों और केन्द्रीय बैंकों के गवर्नर्स के संगठन का ही स्वरूप प्राप्त था, लेकिन सन् 2008 ई० में दुनिया की भयानक आर्थिक मन्दी की त्रासदी के पश्चात् इसे शीर्ष नेताओं के संगठन के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। साथ ही निश्चित हुआ है कि प्रतिवर्ष एक बार जी–20 के राष्ट्रों के नेताओं की बैठक अनिवार्य रूप से की जाएगी। जी–20 के सदस्यों को कुल 5 वर्गों में विभक्त किया गया है जिसमें ग्रुप–1 के अन्तर्गत– आस्ट्रेलिया, कनाडा, सउदी अरबिया और यूनाइटेड स्टेट सदस्य राष्ट्र हैं। जी–20 के ग्रुप–2 में भारत, रूस, दक्षिणी अफ्रीका तथा टर्की हैं। ग्रुप–3 में अर्जेण्टीना, ब्राजील तथा मैक्सिको हैं। ग्रुप–4 में फ्रांस, जर्मनी, इटली और यूनाइटेड किंगडम हैं। ग्रुप–5 में चीन, इण्डोनेशिया, जापान एवं साउथ कोरिया नामक देश हैं। जी–20 का शिखर सम्मेलन इस वर्ष 9–10 सितम्बर 2023 को भारत में आयोज्यमान है, जिसकी अध्यक्षता भारत ही करेगा।

मङ्गलम जर्नल का वर्ष 14(02) अंक XXVII अगस्त 2023 का यह पुष्प अपने सुविचारों की अनुसन्धित्सा से परिपूर्ण विद्वज्जनों के शोध लेखों को प्रस्तुत करता हुआ, सुधीजनों एवं अन्वेषकों से सुझावों की सादर अपेक्षा करता है।

दिनकर त्रिपाठी

(डॉ० दिनकर त्रिपाठी)
सम्पादक

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149

विषयानुक्रम

क्र.सं.	शोधपत्र / शोधार्थी	पृष्ठ
1.	**The India-Iran-US relationship under the Trump presidency** *- Dr. Ramesh Chandra Mishra*	1-13
2.	**The 1857 Revolution and Dalit Historiography : A Comparative Study** *- Prof. Alok Prasad, Vijay Kumar*	14-22
3.	**G20 and India-Africa Strategic Relationship** *- Dr Santosh Kumar Singh*	23-31
4.	**Defence Technology and Foreign Policy : An Indian Perspective** *- Akanksha Dhayal*	32-42
5.	पूर्वी उत्तर प्रदेश में किसान समस्या *- डॉ० अरुण कुमार सिंह*	43-49
6.	स्थितप्रज्ञ एवं अतिमानस की तुलनात्मक विवेचना *- डॉ० अरविन्द शुक्ल*	50-64
7.	जाति और राजनीति के बीच अन्तर्सम्बन्ध *- डॉ० सुरेन्द्र नारायण*	65-70
8.	उत्तर प्रदेश के मध्यकालीन भक्ति आंदोलन में निर्गुण संत आपा साहब का योगदान *- डॉ० मीना मिश्रा*	71-77
9.	मुल्ला दाउद कृत चांदायन (बैसवाड़ी–अवधी बोली–संस्कृति का अमर प्रेम ग्रन्थ) *- डॉ० आजेन्द्र प्रताप सिंह*	78-85
10.	वेश्यावृत्ति का ऐतिहासिक एवं समसामयिक परिप्रेक्ष्य : समाजशास्त्रीय अनुशीलन *- डॉ० श्याम नारायण वर्मा*	86-90
11.	प्रभावी विधायक कैसे बने *- डॉ० बृजेश स्वरूप सोनकर*	91-95
12.	संस्कृत अलङ्कार शास्त्र के आचार्य "भट्टदेव शङ्कर पुरोहित" *- डॉ० नीलम पाण्डेय*	96-99
13.	1857 ई. के स्वतंत्रता आन्दोलन में जौनपुर की भूमिका *- डॉ० रेफाक अहमद, आलोक कुमार*	100-109
14.	स्वाधीनता संग्राम में महिलाओं का योगदान *- डॉ० दिवाकर त्रिपाठी, साधना*	110-118

ISSN-0976-8149

15. मुगल कालीन कृषक वर्ग की आर्थिक दशा 119-125
- सत्य प्रकाश वर्मा, प्रो (डॉ०) शाहिद परवेज
16. नई सदी में शहरी ग्रामीण लिंकेज का अभिनव प्रयास 126-130
- डॉ० दिनकर त्रिपाठी
17. भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं की भूमिका 131-136
- डॉ० धीरज कुमार चौधरी, अजीत कुमार गौतम
18. दलित महिलाओं का भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान : एक अध्ययन 137-143
- डॉ० अंकिता सिंह, चित्रा सिंह
19. ग्रामीण शिक्षा एवं स्वास्थ्य का बदलता स्वरूप 144-148
- डॉ० ऋतेश त्रिपाठी
20. भारतीय स्वाधीनता संग्राम में महिलाओं की भूमिका एक विवेचन 149-154
- मधु मिश्रा
21. पंचदशी में वर्णित ब्रह्मविचार 155-159
- स्मिता पटेल
22. भारतीय रक्षा का आधुनिकीकरण और सामरिक स्वायत्तता : एक ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक अध्ययन 160-170
- आशा
23. पूर्वी उत्तर प्रदेश में ब्रिटिश भू–धृति पद्धति 171-176
- कुमार गौरव सिंह
24. एक राष्ट्र एक चुनाव लागू करने के लिए संवैधानिक पहलू और चुनौतियाँ 177-186
- काजोल तिवारी

- पुस्तक समीक्षा : **"परिहास–विजिल्पितम्"** – *समीक्षक प्रो० (डॉ०) गीता त्रिपाठी*

Manglam - Year 14(02) Vol. XXVII Aug. 2023
ISSN-0976-8149, PP. 01-13

The India-Iran-US relationship under the Trump presidency

Dr. Ramesh Chandra Mishra*

Abstract

The article highlights the convergence and divergence between US and India regarding Iran during the Trump administration and makes the following arguments. First, as Trump's hard line on Iran was viewed negatively by India, New Delhi took measures to assert its long held tradition of "strategic autonomy" in foreign policy which could not be ignored by the U.S. establishment despite Trump's personal choices. Second, as Iran responded to the Trump's hardening policies by gravitating toward China, the Trump administration became slightly more sensitive toward the complexities of Iran-China bonhomie for Indian diplomacy. Third, although India was forced to cut back on importing Iranian oil due to sanctions in mid-2019, American officials began to view India-Iran-Afghanistan collaboration on the Chabahar port project as an opportunity to boost the Afghan economy, and exempted the project from sanctions. The article concludes that despite strong divergences on Iran, the Trump administration came to pursue a combination of pressure and engagement with India to reduce divergence on Iran.

Introduction

Converging interests on maritime security, counter-terrorism and China's phenomenal rise serve to deepen India's strategic partnership with the US (see contributions in the special issue). However, India-Iran bilateral ties have been facing several challenges ever since the US imposed sanctions on Iran following its exit from the Joint Comprehensive Plan of Action (JCPOA) in 2018. India's dependence on Iran for meeting a portion of its energy needs and New Delhi's reliance on Tehran as a strategic counterweight to Islamabad made it challenging for India to accommodate America's interests in the Persian Gulf. Drawing on Singer's levels of analysis which focuses on the role of the leader or the decision maker (first level), domestic factors such as interest groups, political parties, media and public opinion and other factors (second level) and the systemic factor (third level) which captures the changes in the distribution of material

* ***Associate Professor & HOD, Nehru Gram Bharti Deemed University, Prayagraj***

capabilities in the international system,[1] this article finds that the nature of interactions between India and Iran is impacted as much by India's strategic interests as by individual motivations of American president, the US domestic political dynamics, and the systemic constraints imposed by the international system.

Background

India and Iran have shared a long history of ties. The close historical ties were broken by the British rule and the subsequent loss of geographical contiguity due to the creation of Pakistan in 1947. Iran's alliance with the West and India's nonalignment policy were the key determinants of India-Iran relations until the 1979 Islamic Revolution. Although the revolutionary leadership in Iran was generally well disposed toward India, differences persisted between New Delhi and Tehran throughout the 1980s and the early 1990s.[2] After the end of the Cold War, the economic dimension with a focus on energy acquired as much importance as the strategic dimension in India-Iran relations.[3] Shared interests in the stability of Central Asian republics and a common opposition to the Pakistan-backed Taliban regime in Afghanistan also brought them closer.[4] However, growing international attention toward Iran's nuclear program added an element of confusion and uncertainly in India's Iran policy[5] with the US factor influencing India's stance toward Iran under Trump.[6]

Since the Iranian revolution in 1979, when the Iranian state turned ideological, the West Asian region has witnessed some momentous developments such as the disintegration of the Soviet Union and the emergence of Central Asian Republics, the 9/11 attacks in America and the subsequent war on terrorism on the Afghan soil, the war in Iraq, the Arab Spring, and the rise and downfall of Islamic State in Iraq and Syria. Since most of these events have occurred in Iran's vicinity, American attention toward Iran has not diminished. Following the Iranian revolution, bilateral relations between Washington and Tehran have remained complicated bordering on hostility, except for the brief rapprochement during the initial years of the "war on terror" to support American military operations in Afghanistan, and thereafter under former President Barack Obama. Besides the idiosyncrasies of each American president, the agency of their Iranian counterparts has also been a key factor impacting their ties. For instance, it was a more conciliatory approach of Iran's

reformist President Hassan Rouhani, compared to that of President Mahmoud Ahmadinejad, which had allowed reduction in tensions in bilateral relations.[7] However, after Trump came to power in Washington, there was a tectonic shift in the US attitude/policy toward Iran.

There are many convergences between India and the US that brings them closer (see contributions in the special issue). But divergences on Iran created many hurdles in improving Indo-US bilateral relationship during the Trump administration. There was considerable divergence on Iran's nuclear program and Tehran's alleged role in promoting terrorism. While political rhetoric by Trump suggested irresolvable divergence regarding Iran, the actual record was mixed. Both sides largely accommodated each other's core strategic interests. Despite Trump's essentially transactional worldview, the US did not force India to abandon its strategic autonomy, particularly on trilateral connectivity initiative for Afghan development through Iran's Chabahar port.

Application of levels-of-analysis

Any crisis or conflict between the US and Iran would have an adverse impact on Indian interests given the region's importance for India's energy imports, and the need for balancing Pakistan and China. For India, a key objective in West Asia has been to balance its partnership with the US with its interests related to Iran. To achieve a comprehensive understanding of how India's foreign policy toward Iran was conducted during the Trump administration, it is important to study the political dynamics at all three levels of analysis postulated by Singer. First, it is important to understand how Trump's beliefs, perceptions and personality affected his actions. Second, the US domestic politics and strategic interests dictated the Trump administration's choices. Third, at the systemic level, a perception of increase in Iran's power due to JCOPA raised concerns in Iran's Middle-Eastern neighbors especially Israel, which also influenced Trump administration's Iran policy.

Donald Trump's mercurial character, his hatred for JCPOA as a legacy of the Obama administration, and his vision of a new era of US-Israel relations led to his administration pulling out of Iran nuclear deal. Trump's intent to affect a regime change in Iran and rollback of Iranian presence to its territorial borders affected US-Iran

relations.[8] Trump and his close advisors believed that the JCPOA did not restrict Iran's desire to possess nuclear weapons,[9] and it jeopardized American interests. Trump's hardening posture not only increased the possibility of the US imposing more sanctions on Iran, but also brought India-Iran ties to another difficult phase.

The US domestic political institutions and influential actors have significantly shaped their country's policy choices toward Iran. It has been argued that the appointment of Jared Kushner, Trump's son-in-law and security adviser, despite having no diplomatic credentials, and of Jason Greenblatt, the son of Hungarian Jewish refugees, was an indication of Trump's determination to lend strong support to Israel.[10] In particular, Kushner's real estate company's linkages with major Israeli financial institutions, and a personal friendship with Israeli Prime Minister Benjamin Netanyahu, along with previous links to the West Bank settler movement, had already raised conflict of interest accusations.[11] Since the pro-Israeli political voices in the US have always advocated an uncompromising policy of economic coercion and military toughness against Iran,[12] factors such as the war on terror, Iraq War, Arab uprisings and Iran's nuclear program that reinforced the Iran threat in America's domestic political discourse further contributed to escalation in US-Iran relations.[13]

Arguably, what has influenced Washington's strategic thinking toward Tehran more than other issues is the Israel-Iran rivalry, though other US allies like Saudi Arabia and UAE have also played important roles. The JCPOA between Iran and the five permanent members of the United Nations Security Council and Germany (P5 + 1) was aimed at preventing Iran from acquiring nuclear weapon capability and enabling it to resume normal relations with the world by lifting sanctions.[14] However, the deal also created a perception that it would strengthen Tehran's position in the Middle East, and the rising presence of Iran's military or its proxies in Iraq, Syria, Lebanon, and Yemen made Israel (and other countries in the region) particularly nervous.[15] Since Saudi Arabia also showed greater interest in undermining Iran's status as a major regional power,[16] the reported bonhomie between Saudi Crown Prince Mohammed bin Salman and Kushner resulted in closer alignment between US and Saudi positions on Iran, reinforcing the view of Iran as a security threat.[17]

This uncomfortable situation was not entirely new to India which has the experience of having to minimize damage to its ties with

Iran when the US imposed sanctions to pressure Tehran into negotiations. But despite voting alongside the US in the International Atomic Energy Agency meetings, India was able to maintain high stakes in its ties with Iran. Between 2012 and 2015, India continued to import Iranian oil, seeking to circumvent the restrictions by supplying goods to Iran in exchange for oil.[18] India was also granted waivers to transfer parts of about US$ 6.5 billion for importing oil from Iran. However, the value of oil imports declined from US$ 11.6 billion in 2011–2012 to US$ 4.3 billion in 2015–16.[19]

Turbulence after US exit from the nuclear deal

Even before Trump became president, there was broad bipartisan support in Congress for stronger ties with India, and closer affinity between the people of both countries. But despite the upward trajectory of Indo-US ties, the renewed Iran sanctions put New Delhi in a great dilemma as it did not want this impression to gain ground that India would compromise on its independent policies and trade relations for the sake of pleasing American president.

Trump announced America's withdrawal from the Iran nuclear deal on May 8, 2018, with imposition of new rounds of sanctions aimed at coercing Iran into signing a new agreement. However, Washington initially provided a six-month exemption period for India and some other countries to wean themselves off Iranian crude. From Washington's perspective, since this waiver did not bear much fruit in terms of persuading Tehran back to the negotiating table, Trump announced that the US would not extend waivers. This was bad news for New Delhi as it had to shift the dynamics of India's energy choices.

Exemption for Chabahar port

India was involved in intense negotiations with the Trump administration to secure a waiver for the Iranian port of Chabahar which has been projected by India as a strategic gateway to Afghanistan and Central Asia. In the aftermath of the Iran nuclear deal, New Delhi and Tehran agreed to build the strategic Iranian port of Chabahar as part of a project that would allow India to use Iran as a channel for access to Central Asia bypassing Pakistan.[20] The deal might have created other interesting geopolitical possibilities such as improvement in Iran-US relations which always suited India. New Delhi has always desired the US to reduce its dependence on Pakistan and put pressure on it to stop supporting state sponsored terrorism.

India's strategic and economic investments in Afghanistan could only bear fruit if New Delhi was able to build reliable transportation links through Iran. And if the Trump administration's new Afghan strategy relied on a greater Indian role, it was difficult to implement it with the US directly confronting Iran.[21] These complex regional geopolitical dynamics might have given Trump pause.

Trump's erratic style

Initial warmth in bilateral relations expressed in optimistic rhetoric from senior US officials not too long ago gave way to a sense of disillusionment due to Trump's slow decisions on staffing and prioritization of other issues including protectionist obsession with tariffs.[22] The defense and foreign ministers talks between India and the US under the 2 + 2 format were postponed by Washington twice. The first delay was caused by the transition from Rex Tillerson to Mike Pompeo as Secretary of State, whereas Pompeo's visit to North Korea to engage in nuclear diplomacy led to the second delay. Finally, when the 2 + 2 meeting happened in September 2018, the issue of Chabahar port was one of the important agendas. When a senior US official struck a conciliatory note by mentioning India's positive role in Afghanistan with particular reference to Chabahar, it seemed that the US was taking a favorable view.[23] India, including the US allies such as Japan and South Korea, were granted waivers from the first round of sanctions in November 2018. But after six months of stiff opposition by many within his administration, Trump eventually ended the debate on April 22, 2019, denying additional exemptions for India and some other countries from US sanctions on Iran oil purchases.[24]

The Trump administration's stated aim in this regard was to bring Iran's oil exports to zero. That Trump ordered his officials to "go to zero" was confirmed by John Bolton, a former national security advisor. In his controversial book, Bolton quotes Trump's phone call with Secretary Pompeo in which "Trump had not been sympathetic to India's Prime Minister Narendra Modi, saying, 'He'll be okay.'"[25] Besides Trump's transactional worldview and unilateral decision-making style, the exits of some senior US officials such as Rex Tillerson, H.R. McMaster and James Mattis also proved detrimental for India as the bilateral relationship lost important advocates inside the administration.[26]

India's dilemmas vis-à-vis Afghanistan and China

The Iran sanctions issue came at a time when other irritants in the Indo-US ties also surfaced. There were trade frictions; particularly regarding tariffs on steel and aluminum (see Surupa Gupta's contribution). If the US was unhappy with India's defense deals with Russia, India was equally concerned about what the US might cede to the Taliban in the Afghan peace talks.[27] Trump's uncompromising stance on Iran sanctions waivers had the potential to further fuel the age-old Indian instinct for strategic autonomy.[28] Notwithstanding India's rhetoric on strategic autonomy, New Delhi became disposed to accommodate Washington's policy priorities vis-à-vis Iran as Trump too showed willingness to meet India halfway[29] as reflected in his decision to keep New Delhi's strategic investments in Chabahar port out of sanctions' ambit. India also tried to substitute oil imports from Iran with US crude exports; the US crude oil exports to India increased from zero in 2016 to more than 90 million barrels in 2019.[30]

The imposition of US sanctions on Iran and Trump's "maximum pressure" policy, while empowering hardline figures in Tehran, elevated the importance of China in Iranian foreign policy.[31] With India being caught in the crosshairs, Tehran sought new ways of breaking out of its geopolitical isolation, and the new situation worked to benefit Chinese companies that were relatively isolated from global markets and remained unaffected by the US punitive measures. It has been claimed that Beijing was keen to ensure the success for the Trump administration's mismatched Iran policy so that Tehran could easily facilitate the implementation of China's Belt and Road policy in the country.[32] From China's perspective, deepening partnership with Iran was a means to increase its stature among political leadership in the region at India's expense. It is reasonable to believe that Trump's anti-Iran policy combined with America's intensifying "trade war" against China drove Beijing and Tehran toward each other. Though the divergences between Indian and American approaches to diplomacy with Iran highlighted the limitations of characterizing India and the US as a durable alignment against China in the Indo-Pacific, Indian strategic pragmatism about resilience of American global hegemony despite Trump's follies prevented New Delhi to challenge Washington's decision to enforce Iran sanctions. On the contrary, as buying crude from Iran become increasingly difficult, India decided to increase oil imports from the US. The

bottom line is that India's decision to buy oil from the US was primarily informed by New Delhi's desire to avoid unnecessary friction with Washington. India preferred to suffer some strategic loss in terms of lack of access to Central Asia and decided to make forays to the UAE and Saudi Arabia.[33] Moreover, Iran's disruptive behavior, such as disruption of maritime trade in the Strait of Hormuz through the seizure of foreign vessels in mid-2019, also frustrated India's attempts for wider engagement with Iran.[34]

India has maintained a tri-dimensional West Asia policy, balancing Arab countries, Iran and Israel; if India's ties with Gulf States are aligned with their proximity to the US and covert closeness with Israel, India's Iran policy is independent and not aligned with other actors in the region.[35] But as Trump turned up the heat on Iran, India's policy options with Iran increasingly became untenable. Despite viewing India as a key power in its Indo-Pacific Strategy, Trump's withdrawal from the Iran nuclear deal hurt India's interests vis-à-vis China, to the detriment of American interests.[36]

Managing differences on "terrorism"

In April 2019, Washington officially designated the Islamic Revolutionary Guard Corps (IRGC) as a foreign terrorist organization. With rivalries sharpening between the US and Iran, India had to spend its political capital wisely as Trump's cavalier attitude often threatened to show India in a subordinate status. This became visible in early January 2020 when India was caught in the crossfire between Washington and Tehran after Trump justified the killing of Major General Qasem Soleimani in a missile attack on his convoy outside the Baghdad airport. It has been speculated that Trump's decision to escalate tensions was aimed at saving his presidency ahead of his impeachment trial as well as boosting his political standing for reelection bid later in the year.[37]

Terming Soleimani as "number-one terrorist anywhere in the world," Trump argued that as the head of Iran's IRGC international operations, Soleimani was responsible for several terror attacks in many locations. When he included New Delhi in the list of sites targeted by the IRGC the US president was apparently referring to bombing attack on an Israeli diplomat in New Delhi in February 2012 which had indicated involvement of Iranian state agencies.[38] Trump might have drawn India into the debate to justify US actions against

Iran, but India's Ministry of External Affairs (MEA) refused to comment on Trump's statement. From India's perspective, the major problem with the Trump administration's sanctioning of IRGC and characterization of Iranian officials as terrorists was that it complicated efforts to offer Tehran a "carrot" to amend its policies in the Middle East. Since IIRGC is an arm of the Iranian state and not a non-state actor, and Soleimani was not an UN-designated terrorist, the MEA statement referred to him as a "senior Iranian leader."[39] This could be interpreted as India's signal to the Trump administration that it would continue to accord significance to its special ties with Iran.[40] Since Trump's reversal of Obama's policy of engagement with Iran was linked to America's view of Iran as a state-sponsor of terrorism, it would have been self-defeating for India to be seen supporting the rationale on which Trump justified Soleimani's killing; New Delhi has always termed Pakistan as the main state-sponsor of terrorism.

When it became clear that Pakistan's influence would rise substantially in the Taliban-ruled Afghanistan (see Stuti Bhatnagar's contribution), India attempted to offset the negative effects of the Trump presidency. New Delhi stepped up its diplomatic and military interactions with Tehran, as reflected in the meeting of India's Defense Minister, Rajnath Singh, with his Iranian counterpart in Tehran on September 5, 2020. Though, while dealing with Iran, the Modi government did not ignore the higher stakes in Indo-US ties and its growing engagement with the Arab world,[41] there were still some expectations that the US might acknowledge that development of trade routes by India through Iranian territory would facilitate its own access to Afghanistan and Central Asia bypassing Pakistan and Russia.[42] Indian calculations may have changed somewhat following the US-Taliban deal and the Taliban's capture of power in Afghanistan.

In July 2021, the Minister of External Affairs, Subrahmanyam Jaishankar became the first foreign dignitary to meet Iran's new president, Ebrahim Raisi, after he came to power in June. Jaishankar's short Tehran visit was primarily aimed at coordinating India's position with Iran on the evolving situation in Afghanistan as the US' exit approached, but also sent a message to the Biden administration that India continued to accord great significance to its ties with Iran. Joe Biden had made reviving the Iran nuclear deal a key foreign policy

priority when he began his presidency. He also talked about reviving the JCPOA in his presidential debates, yet, it is no longer a key foreign policy priority for Biden. The complexities of a potential failure of the revival of the nuclear deal are not just confined to the US–Iran dynamic; this will also influence India's Iran policy in the future.

Conclusion

This article has shown how President Trump's choice to back out of the Iran Nuclear Deal, and continued US sanctions on Iran, affected the decision-making process of India's policy makers. However, the Trump administration and the Modi government were largely accommodative of each other's strategic interests and therefore took the longer view while dealing with their divergences. Although India was forced to cut back on importing Iranian oil due to sanctions in mid-2019, American officials began to view India-Iran-Afghanistan trilateral collaboration on the Chabahar port project as an opportunity to boost the Afghan economy, and decided to exempt the project from sanctions. Despite divergences on Iran, the Trump administration came to pursue a combination of pressure and engagement with India to reduce divergence, while maintaining engagement to consolidate shared interests in the areas of convergence.

Reference

1. *For a more detailed analysis see the "Introduction" to the special issue.*
2. *Mushtaq Hussain, "Indo-Iranian Relations during the Cold War," Strategic Analysis 36, no. 6 (2012): 859–870.*
3. *C. Christine Fair, "India and Iran: New Delhi's Balancing Act," The Washington Quarterly 30, no. 3 (2007): 145–159; Shebonti Ray Dadwal, "India–Iran Energy Ties: A Balancing Act," Strategic Analysis 36, no. 6 (2012).*
4. *David Brewster, "India and the Persian Gulf: Locked out or staying out?," Comparative Strategy 35, no. 1 (2016): 58–71.*
5. *Zahid Shahab Ahmed and Stuti Bhatnagar, "The India-Iran-Pakistan Triad: Comprehending the Correlation of Geo-economics and Geopolitics," Asian Studies Review 42, no. 3 (2018): 517–536; P. R. Kumaraswamy, "India's Energy Dilemma with Iran," South Asia: Journal of South Asian Studies 36, no. 2 (2013): 288–296.*
6. *Uma Purushothaman, "American Shadow over India–Iran Relations," Strategic Analysis 36, no. 6 (2012): 899–910.*

7. *Louise Fawcett & Andrew Payne, "Stuck on a hostile path? US policy towards Iran since the revolution," Contemporary Politics. https://doi.org/10.1080/13569775.2022.2029239.*
8. *Steven Simon and Jonathan Stevenson, "Trump's Dangerous Obsession With Iran," Foreign Affairs, August 13, 2018, https://www.foreignaffairs.com/articles/iran/2018-08-13/trumps-dangerous-obsession-iran.*
9. *"Iran nuclear deal: Trump pulls US out in break with Europe allies," BBC, May 9, 2018; "Trump Advisers Made a 'Dumb Bet', Zarif Says of US JCPOA Withdrawal," Tasnim News Agency, June 5, 2020.*
10. *Rotem Nusem, "A Year of Readjustment: The Trump Administration's New Policy on Israel and Iran," Israel Journal of Foreign Affairs 12, no. 1 (2018): 55–64.*
11. *Daniel Estrin, "Trump son-in-law's ties to Israel raise questions of bias," The Times of Israel, March 25, 2017, https://www.timesofisrael.com/trump-son-in-laws-ties-to-israel-raise-questions-of-bias/.*
12. *DovWaxman,"The Pro-Israel Lobby in the United States," in Israel and the United States: Six Decades of US-Israeli Relations, ed. Robert O. Freedman (Boulder, CO: Westview Press, 2012); Eric Lichtblau and Mark Landler, "Hawks Steering Debate on How to Take On Iran," New York Times, March 18, 2012.*
13. *Louise Fawcett and Andrew Payne, "Stuck on a hostile path? US policy towards Iran since the revolution," Contemporary Politics, https://doi.org/10.1080/13569775.2022.2029239.*
14. *Chintamani Mahapatra, "US–Iran Nuclear Deal: Cohorts and Challenger," Contemporary Review of the Middle East 3, no. 1 (March 2016): 36–46.*
15. *Matthew Kroenig, "The Return to the Pressure Track: The Trump Administration and the Iran Nuclear Deal," Diplomacy & Statecraft 29, no. 1 (2018): 94–104.*
16. *Ilan Goldenberg, "Kushner's Peace Plan Is a Disaster Waiting to Happen," Foreign Policy, June 25, 2018.*
17. *Mahan Abedin, Iran Resurgent: The Rise and Rise of the Shia State, (London: C. Hurst & Co, 2019): 163.*
18. *PTI, "India to pay in rupees for Iranian oil from November," Economic Times, September 20, 2018.*
19. *Shubhajit Roy, "US ends waiver for Iran oil, India second biggest buyer after China," Indian Express, April 23, 2019, https://indianexpress.com/ article/india/us-ends-waiver-for-iran-oil-india-second-biggest-buyer-after-china-5689393/.*

20. *Victor Mallet, "India to bypass Pakistan on the road to Central Asia," Financial Times, May 24, 2016, https://www.ft.com/content/8510176c-2188-11e6-9d4d-c11776a5124d.*
21. *Neil Bhatiya, "Iran May Have a Lot of Friends in a Future Sanctions Fight With the United States," World Politics Review, August 30, 2017, https://www.worldpoliticsreview.com/articles/23023/iran-may-have-a-lot-of-friends-in-a-future-sanctions-fight-with-the-united-states.*
22. *Anubhav Gupta, "Tensions, Many Exacerbated by Trump, Overshadow High-Level U.S. Talks in India," World Politics Review, September 6, 2018, https://www.worldpoliticsreview.com/articles/25771/tensions-many-exacerbated-by-trump-overshadow-high-level-u-s-talks-in-india.*
23. *"Exploring alternative oil supplies for 'our friend India': US," The Week, September 29, 2018, https://www.theweek.in/news/india/2018/09/29/Exploring-alternative-oil-supplies-for-our-friend-India-US.html.*
24. *Bill Chappell, "U.S. Won't Renew Sanction Exemptions For Countries Buying Iran's Oil," NPR, April 22, 2019, https://www.npr.org/2019/04/22/715938722/u-s-wont-renew-sanction-exemptions-for-countries-buying-irans-oil.*
25. *John Bolton, The Room Where It Happened: A White House Memoir, (Simon & Schuster, 2020).*
26. *Samir Saran and Richard Verma, "Strategic Convergence: The United States and India as Major Defence Partners," Observer Research Foundation, June 2019, https://www.orfonline.org/wp-content/uploads/2019/06/Strategic-Convergence1.pdf.*
27. *Richard Fontaine, "U.S.-India Relations: The Trump Administration's Foreign Policy Bright Spot," War on the rocks, January 24, 2019, https://warontherocks.com/2019/01/u-s-india-relations-the-trump-administrations-foreign-policy-bright-spot/.*
28. *Tanvi Madan, "Trump tightens sanctions on Iran's oil exports – How India will respond," Brookings, April 23, 2021, https://www.brookings.edu/blog/order-from-chaos/2019/04/23/trump-tightens-sanctions-on-irans-oil-exports-how-india-will-respond/.*
29. *Sumitha Narayanan Kutty, "Dealing with Differences: The Iran Factor in India-U.S. Relations," Asia Policy 14, no. 1 (January 2019): 95–118.*
30. *Jeff Smith, "India-US ties were paralysed 7 years ago. But Modi-Trump moved farther than others before," The Print, February 21, 2020, https://theprint.in/opinion/india-us-ties-were-paralyzed-7-years-ago-but-modi-trump-moved-farther-than-others-before/368714/.*

31. *Saeid Jafari, "Trump Has Pushed Iran Into China's Arms," Foreign Policy, August 8, 2020; Wesley Dockery, "Trump's Iran policy pushes Tehran into the arms of China," DW, June 8, 2018, https://www.dw.com /en/trumps-iran-policy-pushes-tehran-into-the-arms-of-china/a-44024702.*
32. *Alex Vatanka, "China's Great Game in Iran," Foreign Policy, September 5, 2019, https://foreignpolicy.com/2019/09/05/chinas-great-game-in-iran.*
33. *Mohsen Solhdoost, "Iran's geo-strategic orientations toward China and India," Journal of the Indian Ocean Region 17, no. 1 (2021): 60–77.*
34. *Sumitha Narayanan Kutty, "India's Iran Policy: Civilisational Past, Complicated Present," in Aparna Pande (ed.), Routledge Handbook on South Asian Foreign Policy, London:Routledge, 2021, p. 211.*
35. *Sima Baidya, "India's Policy towards Iran: Reflection of Intentions, Ambiguities and Complexities," International Studies 54, no. 1–4, (2018): 148.*
36. *Zoe Leung and Hari Prasad, "Why Continued Indian Engagement With Iran Is in America's Interest," The Diplomat, October 23, 2018.*
37. *Rezaul Laskar, "Qassem Soleimani killing: Strike could snowball conflict," Hindustan Times, January 4, 2020; Associated Press, "Donald Trump campaign seizes on Soleimani killing," India Today, January 8, 2020.*
38. *Suhasini Haidar, "India caught in the crossfire as Trump invokes Delhi post Soleimani killing," The Hindu, January 4, 2020, https://www. thehindu.com/news/national/trump-invoking-delhi-after-soleimani-killing-puts-new-delhi-in-a-fix/article30479336.ece.*
39. *Ministry of External Affairs, "Killing of a senior Iranian leader by the US," Government of India, January 3, 2020, https://mea.gov.in/press-releases.htm?dtl/32251/Killing_of_a_senior_Iranian_leader_by_the_US.*
40. *Tanvi Madan, "India's reaction to the killing of Iranian commander Qassem Soleimani," Brookings, January 3, 2020, https://www. brookings.edu/blog/order-from-chaos/2020/01/03/indias-reaction-to-the-killing-of-iranian-commander-qassem-soleimani/.*
41. *Harsh V. Pant, "If India is losing Iran, Tehran too is responsible for dip in ties," The Print, July 24, 2020, https://theprint.in/opinion/if-india-is-losing-iran-tehran-too-is-responsible-for-dip-in-ties/467483/.*
42. *P.S. Raghavan, "What is in a NAM and India's alignment," The Hindu, September 9, 2020.*

Manglam - Year 14(02) Vol. XXVII Aug. 2023
ISSN-0976-8149, PP. 14-22

The 1857 Revolution and Dalit Historiography : A Comparative Study

Prof. Alok Prasad*

Vijay Kumar**

Abstract

The revolution of 1857 has been a very controversial topic among historians because of its nature and motives. Even after 150 years of the revolution, scholars are not unanimous on the fact whether the event of 1857 was a revolt or a revolution. Since it was the first event that spread over such a large area and created turbulence in the British Indian empire on a remarkable scale, it becomes one of the most significant subjects to interpret in favour of the paramountcy of the British rule. That was the reason that lots of English historians took interest in the revolution of 1857. As the 1857 revolution inclusively possessed variety of aspects related to it that worked as fuel in the fire, historians have chosen aspects of their own choice to interpret the event. Earlier historians have written the History of 1857 revolution on the basis of elite sources. Initially historiography of 1857 revolution had mostly revolved around the kings, queens, zamindars but after 1960, subaltern and popular Dalit's history provide an alternative account of the revolution, weaving together various element such as conversing histories, myths, realities and retelling of the past. These accounts often aim to challenge dominant narratives that have historically marginalized and silence Dalits voice. This research paper examines the ways in which Dalits literature dealt with the role of Dalits in 1857 revolution.

Keywords : *1857, Revolution, Dalits, Talukadar, Matadin Bhangi*

Let's quickly review the conventional and standardised histories of the revolution before we get into these accounts. Most historical perspectives appear to be in agreement, especially when it comes to the subject of the revolution caste-based nature. Nationalist historians like *S. B. Chaudhuri*, *Tara Chand*, and *R. C. Mazumdar*

---

* ***Professor & Head, Med. & Mod. History Department, University of Allahabad***
** ***Research Scholar, Med. & Mod. History Department, University of Allahabad***

claim that the conventional elite of society and the ruling class made up the social structure of 1857 and served as the "natural leaders" of the uprising. By characterising the uprising as a general movement of Muslims and Hindus-princes, landowners, warriors, scholars, and theologians.[1] Marxist Historian appear to share the same paradigm in that they essentially saw the revolution as the elite mediaeval order's final effort to halt the process of collapse and regain its lost status. *Thomas R. Metcalf* underlines the fact that it wasn't only a rebellion or an independence struggle. According to him, 1857 was "a traditionalist movement in which those who stood to lose the most from the new sought to restore the old pre-British order."[2] In his significant study, Eric Stokes emphasises the local context of the rebellion while also making the argument that the usage of fat-greased cartridges, which may have led to the loss of upper caste status, was the catalyst for the revolt. He demonstrates how Ashraf Muslims, brahmins, and Rajputs had almost concentrated admittance into the Bengal army and they were worried about losing their status.[3] Many other contemporary editions focus a strong emphasis on the hurt and worry about pollution that upper caste Hindus felt as an important factor of the uprising. How do the Dalit histories of 1857 fit within these narratives? The purity/pollution ties of the upper castes and classes, associated with crossing oceans or chewing into cow or pig flesh, do not suit with Dalits. Other scholars have emphasised on the revolution lower caste origins.

Subaltern's and Social Historian's approach of the 1857 Revolution

Earlier historians have written the History of 1857 Revolution on the basis of elite sources. But after 1960, the subaltern historians and Dalits literature tried to interpret the history of 1857 revolution from the perspective of common people. Historians such as *Rudrangshu Mukherjee*, *Awadh in Revolt, 1857- 58: A Study of Popular Resistance*, who took up specific area studies that brought to light interesting complexities of popular militancy that had remained ignored by earlier historian for a century. He attempts to uncover the

dimension of popular peasant protest. He examined the linkages between the *talukdars* and the *peasants*.[4] While doing this, he focused on the leadership of the talukdars in the Awadh region and emphasised that the real strength of the talukdars resistance and the 1857 revolution was based on the general support of the peasantry and the people in the countryside.[5] He explained this by referring to the agrarian relations in the region, which marked by an interdependence of the talukdars and the peasants. He also referred to the wide scale peasant base of the revolution in the region.[6] In his effort to explore the popular basis of the revolution, where the people of Awadh fought the British, Mukherjee mentioned the number of ordinary and common weapons that were recovered, including firearms from ordinary peasants. On the basis of these sources, he contested the dominant picture provided by "mutiny" literature about the nature of "Magnate leadership". As Mukherjee put it, the peasants did not play a mere rear-guard, subaltern role. In fact, the peasants were on the side of the rebellion in areas where the talukdars remained loyal to the British.[7] This perhaps illustrates that the rebellion was not always elitist in character and that in Awadh it had a mass, popular base. Gautam Bhadra also highlights the common leaders of the revolt.[8] *Badri Narayan*, a social historian, presents a detailed discussion of Dalit accounts of the1857 revolution from the various localities in Uttar Pradesh and Bihar. One such article's '*Identity and Narratives: Dalits and memories of 1857*'[9]. In this article he discussed many Dalits leader's stories such as Matadin Bhangi, Jhalkari Bai, Shahid Baba,Ganga Baba and Raghu Chamar, whose contribution has not been mentioned by earlier historians.[10] In order to show the role of Dalits in 1857 revolution, Badri uses the tool of social memory that was present in dalit communities for decade in the local areas of the struggle. He drags our attention to some religious saints (babas) whose epitomes are still being worshiped by local villagers for their heroic sacrifice in the 1857 revolution. They all belonged to lower caste communities that reveal the role of Dalits in the great revolution.[11] He argues that there has been wide gap between the academic history and

oral history of 1857 revolution.40 Where the academic historian's documented history only told the stories of rich feudal lords, queens and kings like Bahdur shah Zafar, Nana sahib, Tantaya tope, Rani Lakshami Bai and Begam Hajrat Mahal, but the stories of unsung heroes who played vital role in the revolution were circulated only in the oral history in rural north India, especially among the marginalised Dalits castes and communities. Further in his article he says that Dalits have an emotional links with the 1857 war of independence. For they believe that it was initiated by them because the majority of soldier who took part in the revolution were belonging to Dalits communities.[12] They believed that Dalits were fighting for their motherland rather than gaining power. Although mainstream history credits Mangal Pandey with leading the revolt, they believe that it was actually a Dalit Matadin Bhangi who inspired him to revolt.[13] Thus Dalits, through their narrative's of 1857 revolution tried to established their own heroes.

Badri Narayan 'Popular Culture and 1857; *A memory against forgetting'*[14]. In this article he says history- writing has many sources for special events, but where can we have found common people reaction expects 'folk culture' the historian uses folklore to connect the missing poles of history. It also fills in the blank of history. folk lores are not authenticate sources in the study of history, but they definitely contain a mixture of folk and poetic expressions of that time.[15] He argued that historians have studied the revolution of 1857 with many research methods. but till now we have been able to create only its vertical form but what was horizontal form? How will the dynamics of the mass mobilization be studied in it? from where can get the most suitable and specific information regarding this? For creating an alternative public history of 1857 revolution, above questions can be answered by the study of the folk culture. Further in this article he presented many folk lore's and folksongs of 1857 revolution. He tried to understand the revolution from the perceptive of common people participation. One such song is followed:

"*Ab chhod re firanfiyal hamara deswa*
lutpatkaile tuhun majwa udaile

kailas, des par julam jor.
Sahar gaon luti phunki,dihat firagiya ,
suni suni Kunwar ke hridaya me legal agiya,
ab chhod re firangiya !hamara deswa"[16]

(Bhojpuri folk song)

(British, now quit our country, for loot us, enjoy the luxuries of us countrymen [in return]. you have looted and burnt the hamlets our cites and village. Kunwar's heart burn to know all this. O British! now quit our country) further he discusses the process of assimilation of the memory of the revolution through the symbols and rituals in the folk tradition especially in the Eastern Uttar Predesh. he discusses about the *Sohar* (it's a song which is generally sung by women during theceremony of child birth) such is a popular sohar in the eastern Uttar Pradesh sung by women. This sohar contains the memory of 1857 revolution. For example, notice the follow sohar:

"*Bhado mas andheria, badariya gagan ghere ji,*
Tahl rate challe, Kunwar Singh lare laraiya ji."[17]

(It was the month of bhadon; night and dark clouds were covering the sky when Kunwar Singh went to war, at the end of the night.) Further in his article Badari Narayan discusses many folk songs tounderstand the marginalised communities feeling towards the revolution.

Badri Narayan 'Women Heros and Dalit Assertion in North India: Cultural, Identity and Politics[18] in this book he discusses dalit politics in north India, how were dalit 'Viranganas' of 1857 revolution such as Jhalkari Bai and Uda Devi became the symbols of parties like BSP (Bahujan Samaj Party) Thus, Badri Narayan presents alternative sources such as folk songs and social memory of dalit communities about 1857 revolution. Through the new sources explore by him we understand the participation of dalit communities in the revolution. But vast sources of Dalits are still not documented.

Charu Gupta, a social historian, present a details discussion of Dalit accounts of the1857 revolution. She wrote an article *'Dalit*

Viranganas and reinvention of 1857'[19]. In this article first, she discussed about the historiography of the 1857 revolution. Like *Badri Narayan* she also argued that the history of the revolution however, has been completely inversed, Contemporary dalit perceptions and compositions of 1857 are very different from academic historical studies on the subject.[20] Dalit writers are attempting here to look upon the revolution as part of their struggle for freedom. The revolt has taken on the character of a dalit resistance, where alternative Dalit heroes are represented as the real symbols of1857 in Dalit literature. In these accounts, the armies of soldiers against British consist largely of dalits. New dalit histories argue that the Dalits had nothing much to lose in pre-British times, as their condition had been miserable even then. So, it was actually dalits a who fought for mother land in the revolution, while the upper caste Hindus and Indian rulers only fought to restore their rule.[21] In her article she wrote famous Dalit poet *Bihari Lal Harit* quote regarding 1857 revolution:

> *"nai, dhobi, kurmi, kachchi/bharbhuje bhaat kumhaar lare.*
> *Lare khak rub mochi dhanak/sab daliton ke parivar lare."*[22]

(Barbers, washermen, kurmis, gardeners, grain-parchers, bards and potters fought. Cobblers rolling in dust and cotton carders fought. All dalit families fought. Further in her article she discussed about the dalit viranganas stories who took the part in 1857 revolution such as Jhalkari Bai (kori caste) Uda Devi(pasi) Mahaviri devi (bhangi caste) Avanti Bai (Lodi caste) and Asha devi (gurjari caste).[23] These are not just stories of brave dalit women but of all Dalit, of their legacy, of their bravery, of their pride, of their sacrifice in the service of the nation. They have become the symbols of bravery of particular dalit castes ultimately of all Dalits. Thus, she provided extensive work on Dalits *'Viranganas'* role in 1857 revolution. In addition to this, *D. C. Dinkar 'swatantra sangram me acchuto ka yogdan'*[24] provided an extensive work with detailed list of freedom fighters, belonging to Dalit community who took part in Indian Freedom Struggle, especially in reference to the revolution of 1857. He mentioned some dalit heroes as Banke Chamar, ChetramJatav, Veera Pasi, Udaiya

Chamar, Mahaveeri Devi and many more who took part in the revolution of 1857 at a large scale and gave the sacrifices for their motherland.[25] *Mohandas Namishray 'Dalit freedom fighters'*[26] also agrees with the involvement of Dalits in the 1857 Revolution and questioning the ignorance of earlier historians. As D.C. Dinkar he provided vast list of dalit freedom fighters, who took part in the revolution. *Tapati Roy* explored the popular world of the countryside in the Bundelkhand region and its relationship with the 1857 revolution.[27] Another historian *Shashank S Sinha* explores the gender angle that has hardly attracted any historian. His exploration draws upon women who were involved in the uprising more as victims than as active participants.[28]

Many others historian also wrote on Dalits involvement in 1857 revolution such as *Satnam Singh,Ram Dayal Verma, Ram Prakash Saroj, K. Nath, Bhavani Shankar Vmaishrad, mata prasad and Ram Shankar Paswan* they are also emphasised on active participation of dalit in the 1857 revolution. Thus, the colonial, nationalist and Marxist historians have provided with the descriptions and interpretation of 1857 revolution of the elite point of view and ignored the involvement and of common people, specially, the contributions of Dalit leaders. From late 1960s subaltern and Dalit historians paid illustrious attention to rewrite the history of marginal communities. it can be concluded that the Dalits of northern India has an emotional link with the 1857 War of Independence for they believe that it was initiated by them. They claim that the Soldier Revolution by the mostly Dalit Indian soldiers in the British Army that took place in Barrackpore in 1857, snowballed into the War of Independence. Although mainstream history credits Mangal Pandey with leading the revolt, they believe that it was actually a Dalit Matadin Bhangi who inspired him to revolt. The Dalit narratives of the first freedom struggle are filled with stories about brave martyrs belonging to suppressed communities who fought bravely against the British for the sake of the freedom of their motherland. These heroes are now being used by Dalit communities for proving their spirit of nationalism

and their role in the freedom of the country. Through this process they are also demanding an appropriate share in the power structure of state and society. Since the 1857 rebellion was mainly a revolution of peasants and sepoys at the people's level, most of which was undocumented and unrecorded, it provided them ample space to search for their own local heroes of this revolt and posit them alongside mainstream nationalist heroes. In some places in UP and Bihar where the revolt was mainly confined and where the lower castes still lead a marginalized existence, these heroes have been reincarnated as deities who are considered to have godly powers. These deities are worshipped by the Dalits of these regions, who pray to them to fulfils their wishes and inundate their families with prosperity. Thus, the memory of the 1857 revolt is still being kept alive in the collective psyche of the Dalits which is helping to inspire them in their struggle against the social, economic and political exclusion and discrimination in their daily lives.

Reference

1. *S B Chaudhuri, Civil Rebellion in the Indian Mutiny, World Press, Calcutta, 1957; R C Majumdar, The Sepoy Mutiny and the Revolt of 1857, Mukhopadhyay, Calcutta, 1963; Tara Chand, History of Freedom Movement in India, Vol II, Government of India, Delhi, 1967, pp 42-43.*
2. *Thomas R Metcalf, The Aftermath of the Revolt – India, 1857-1870, Princeton University Press, Princeton, 1964, pp xiii-iv.*
3. *9 Eric Stokes, The Peasant Armed: Indian Revolt of 1857, Oxford University Press, New York, 1986, pp 50-51.*
4. *Rudrangshu Mukherjee, Awadh in Revolt, 1857- 58: A Study of Popular Resistance, Oxford University Press, Delhi, 1984.*
5. *Ibid.*
6. *Ibid.*
7. *Ibid.*
8. *Gautam Bhadra, 'Four Rebels of Eighteen-Fifty-Seven' in Ranajit Guha (ed), Subaltern Studies IV: Writings on South Asian History and Society, Oxford University Press, Delhi, 1985, pp 229-75.*
9. *Badri Narayan, Identity and narratives: Dalits and memories of 1857, in Crispin Bates (Ed), Mutiny at the Margins Volume: 5, Sage Publications, London. 2013.*

10. *Badri takes examples of Shahid baba of Azamgarh, U.P.; Rajit baba of Shahapur-Arrah, Bihar; Raghu Chamar of Janaidih, Bihar; Gangu baba of Bithoor, U.P.*
11. *Badri Narayan, Identity and narratives: Dalits and memories of 1857, p. 07*
12. *Ibid*
13. *Ibid*
14. *Badri Narayan 'Popular Culture and 1857; A memory against forgetting' 'facet of the great revolt 1857' Shireen Moosvi (Ed).*
15. *Badri Narayan, Loksanskrati Me Rastrabad, Lokmati Prakashan, Allahabad, 2014, p. 32.*
16. *Badri Narayan 'Popular Culture and 1857; A memory against forgetting', p.70*
17. *Ibid*
18. *Badri Narayan 'Women Heros and Dalit Assertion in North India: Cultural, Identity and Politics.*
19. *Charu Gupta, Dalit Viranganas and reinvention of 1857, Economic and political weekly, may2007, pp.1739-1746*
20. *Ibid*
21. *Ibid*
22. *Ibid*
23. *Ibid*
24. *D.C. Dinkar, Swantantrata Sangram Me Acchuto Ka Yogdan, Gautam book center, delhi ,2007.*
25. *Ibid.*
26. *Mohan das Naimisarai, Swatantrata Sangram Ke Dalit Krantikari, Nilkant Prakashan, Delhi, 2016*
27. *Tapti Roy, The Politics of a Popular Uprising: Bundelkhand in 1857, Oxford University Press, Delhi, 1994.*
28. *Shashank S Sinha, 'In Search of Alternative Histories of 1857: Witch-hunts, Adivasis, and the Uprising in Chhotanagpur.*

Manglam - Year 14(02) Vol. XXVII Aug. 2023
ISSN-0976-8149, PP. 23-31

G20 and India-Africa Strategic Relationship

Dr Santosh Kumar Singh*

Abstract

India and Africa have very different relationships. In the recent years, they have witnessed several changing patterns. It is due to the changing dynamics of global politics. The global politics has seen the emergence of China and European Union and many regional and international organisations. India has witnessed continuity and change in its relationship with Africa. In this series the G20 has also evolved as an important actor. In 2023, India is assuming the Presidency of G20. India has called for democratisation of global institutions. India has proposed to include the Africa Union as full member of the group. This research paper will access the role and impact of G20 in India-Africa's relations. It will also evaluate the changing patter of India and Africa relationship.

Keywords*: G20, Strategic relations, India, Africa, Compact with Africa, African Union*

Introduction

India and Africa have strong historical roots of social, economic, cultural and economic relationship. India's has always supported African countries struggle against the colonialism. Mahatma Gandhi thought that as long as the countries of Africa were still subject to colonial control, India's freedom would be incomplete. India, a recently established independent nation, was conscious of its obligations and eager to take on a distinctive position in world affairs. The nation utilised a number of venues, such as the United Nations General Assembly, to draw attention to the negative effects of colonialism and worked to provide moral and financial assistance to African nations battling colonialism.

Only two years after gaining its independence, India began its development cooperation plan. Anti-colonialism, the sharing of

* ***Assistant Professor, Sri Venkateswara College, University of Delhi, Delhi***

development expertise, and solidarity with the "*third world"* were the guiding themes of India's development cooperation. The post-war global assistance scene was mostly controlled by the West, which was primarily focused on maintaining unequal relations between the Global North and the Global South, making these ideas of enormous normative relevance at the time. India's capacity-building measures have greatly benefited African nations, and India continues to give the continent consideration in its foreign policy.

Evolution and role of G20

The greatest economies in the world are represented by the G20, which was established in 1999 after the Asian financial crisis. The G20 member states are Australia, Argentina, Brazil, China, Saudi Arabia, Canada, Mexico, Turkey, France, India, Russia, Japan, Indonesia, Italy, Germany, South Korea, South Africa, United Kingdom, USA, and the European Union (EU) (Larionova & Kirton, 2015). After the global financial and economic crisis of 2007, it was elevated to the level of Heads of State/Government, and in 2009 it was named the "premier forum for international economic cooperation." The major objective of the G20 is to include including commerce, sustainable development, energy, ecology, anti-corruption, agriculture, and health. The G20's early emphasis was mostly on broad macroeconomic concerns (PIB-2, 2022).

The G20 works as a platform for international cooperation amongst the world's main industrialised and developing nations. About two-thirds of the world's population, over 75 percent of the world's commerce, and 85 percent of the world's GDP are all represented by the members (Jain, 2023). 173 nations are not members of the G20, which only represents a tiny portion of the global population and nations; strategies should be developed to take these nations' issues into account. Positively, it should be noted that the G20 is making more efforts to engage in communication with developing nations. As well as individual members' advisory procedures with adjacent nations, regional groups like the African Union and the

Association of Southeast Asian Nations (ASEAN) are invited to G20 meetings. But the G20 is only now starting to listen to the concerns of non-governmental organisations and groups in civil society (Kathrin. B, Fues.T & Volz. U, 2011).

In order to encourage growth and development, the G20 offers analysis, consistency in policy, and useful instruments. As a result, G20 members are able to focus their collaboration with poorer nations more effectively, which may advance global development initiatives. It advocates for diverse and inclusive cultures and equal opportunity (Larionova & Kirton, 2015). The G20 is crucial in establishing the conditions for equitable global growth and development.

India and Africa Under G-20

India is hosting the 18th Heads of State and Government Summit of the Group of 20 (G20) in September 2023. The theme of India's G20 Presidency "*Vasudhaiva Kutumbakam*" or "*One Earth, One Family, One Future*" closely ties with *LiFE* (Lifestyle for Environment) (PIB, 2022). This Summit will be held at New Delhi, India, on September 9 and 10, 2023. In this G20 presidency India is trying to establish the G20 true global colour under the theme '*Vasudhaiva Kutumbakam'* with including the African Union as one of the full member in G20. In a letter to the G20's top leaders, Indian Prime Minister Narendra Modi suggested that during the group's forthcoming meeting (September 9 and 10th 2023) in India, the African Union be awarded full, permanent membership (Jain, 2023). At present, South Africa is the only African country enjoys member status in the G20.

The Indian administration has concentrated on include the goals of African nations in the G20's agenda as part of India's G20 chairmanship. The Voice of Global South Summit, with the theme "*Unity of voice, Unity of purpose*," was held in India on January 12–13, 2023. Bringing together nations from the Global South to discuss their goals and views on a wide variety of topics was the goal of this innovative and special project. The project was motivated by Prime

Minister Shri Narendra Modi's vision of "*Sabka Saath Sabka Vikas Sabka Vishwas aur Sabka Prayas*" which was also supported by '*Vasudhaiva Kutumbakam'*, India's founding philosophical principle. In that summit India's Prime Minister Narendra Modi mentioned;

> *"We all agree on the importance of South-South Cooperation, and collectively shaping the global agenda. In the field of health, we share an emphasis on promoting traditional medicine, developing regional hubs for healthcare, and improving mobility of health professionals. We are also conscious of the potential of quickly deploying digital health solutions* (PIB, 2023)."

At the third meeting held on 14th July 2023 of the G20 sherpas in Hampi, Karnataka, text referencing the incorporation of the African Union has been included to a revised draught of the joint leaders' statement (Laskar, 2023). The AU should be admitted as full members at the summit, according to a proposal made to G20 members in July 2023 by Indian Prime Minister Narendra Modi. The African Union, which is made up of 55 nations on the African continent, made the request, and the suggestion was made in response. In his 2018 address at the Ugandan Parliament, Prime Minister Narendra Modi mentioned "India's engagement with Africa will continue to be guided by 10 principles. One, Africa will be at the top of our priorities. We will continue to intensify and deepen our engagement with Africa. As we have shown, it will be sustained and regular (Hindustan Times, 2018)." India and Africa's bilateral trade increased by 9.26 percent in 2022 to reach $100 billion. It follows that China has a far larger economic presence in Africa than does India. India may benefit from greater understanding with its African partners if Africa is admitted to the G20 (Kumar, 2023).

India's stance in putting the idea forward to other G20 members has been that Africa needs to have a stronger voice in all multilateral forums, particularly one that is focused on the global economy and sustainable development. The admission of a large organisation like

the AU would have its own difficulties, they recognised. The idea, according to the India is intended to strengthen the Africa's voice on the global arena and help shape the future of a shared world. India is a firm believer in giving the Global South, especially African nations, a stronger voice on international stages (Times of India, 2023).

Along with other individual members like France, Germany, and Italy, the inclusion of the AU will mirror the sort of representation that the European Union (EU) represents as a G20 member. However, since it is the only African country represented in the G20, South Africa often finds it challenging to strike a balance between its own national interests and those of other African nations whose national goals and demographics vary greatly from its own. Unfortunately, the African continent continues to be terribly underrepresented even though it often appears in the G20's discussions. In the G20, this has an impact on African efforts to advance their interests, agency, and voices (Mishra, 2022).

Africa has always been a priority for the G20. The first mention was made back in 2010 during the Toronto Summit, when it was pledged that, despite the 2008 global crisis, financial assistance would be provided to the African Development Bank (AfDB) via concessional loans. Following that, the Seoul Summit in 2010 stressed the dual goals of developing infrastructure and promoting regional economic integration via trade facilitation. Since then, invitations to G20 meetings have continuously been extended to African nations. The collaboration culminated in a G20 Compact with Africa (CwA) in 2017 under Germany's G20 leadership (Paulao, 2017).

Without a doubt, the 55 AU nation deserves a spot in the G20. For far too long, the affluent countries of the Global North have treated Africa as a charity case, ignoring it in geopolitics on a global scale. This impression, however, is quickly shifting. Angola, Ethiopia, Nigeria, Kenya, and South Africa were predicted by the IMF earlier this year to have among of the fastest expanding economies in the world. A survey by the Mo Ibrahim Foundation claims that Africa is

about to surpass Asia as the continent with the highest rate of growth. The justification for increasing India's own involvement with Africa still stands, however. The third India-Africa Forum Summit was a great event, and all 54 African countries were invited (Times of India, 2023).

When the AU Summit officially decided to join the G20 in February 2023 after taking into account a report from Macky Sall, the President of Senegal and the AU chair at the time, it marked a significant turning point. The summit reiterated "the need for Africa to be more fully involved in the decision-making processes" on global governance challenges since they have an equal impact on Africa and the rest of the world. In a pragmatic and astute move, the AU called on "all other G20 members to support such a bid" and expressed "deep appreciation" to those G20 participants who backed its inclusion. The G20 leaders received a letter from President Sall shortly after. India's full support of the AU's supremely logical proposal was reaffirmed by PM Modi's most recent message (Hindustan Times 2023).

There has been much discussion among officials and academics on whether or not the AU should join the G20 as a full member. Those who support it contend that the inclusion of the AU will increase the G20's diversity and inclusiveness, increasing its influence. It will eventually speak for nearly 80 percent of humanity, as opposed to about 65 percent as it already does. The cause of justice and fairness will advance as a result of the group's increased moral authority. The G20 needs the AU for two reasons: to improve African participation and to contribute to economic progress, as Development Reimagined, a women-led African consultancy, recently noted (Hindustan Times 2023).

Conclusion

Africa and India are natural allies because of their close historical and cultural links. India actively strives to realise this goal more quickly since it firmly believes in the global importance of Africa's emergence. In order to speak for the interests of the Global

South in global fora, India aspires to become their voice. India has always advocated loudly for African participation in international forums.

India's perspective was highlighted by External Affairs Minister S. Jaishankar, who said: "India believes that Africa's growth and progress are intrinsic to global rebalancing (Ministry of External Affairs, 2022)." The globe is now seeing a deepening polarisation between democratic countries headed by the United States and authoritarian governments gathering around China, making this attitude even more crucial. African leaders are being forced to make difficult decisions as a result of the unintended repercussions of the Russia-Ukraine war and its related issues, like increased gasoline and food prices, inflation, financial instability, and the energy crisis.

The G20 presidency of India is set to grab the opportunity to achieve its objective at this turbulent time. When the difference between the US and China are at a record high. Either on the question of economic competition or on the question of Taiwan. On the other hand, the Russia's invasion of Ukraine proceeds unabatedly, Chinese ships and planes are breaking the median line at the Taiwan Strait. While these concerns continue to have an adverse effect, it is also vital to recognise the good steps India has made in its efforts to fortify its relationship with Africa, a continent and a partner that will have a profound effect.

References

1. *Laskar, Rezaul H (2023), Hindustan Times 14th July 2023, 'India's proposal for African Union's G20 membership included in draft communique,' accessed from https://www.hindustan times.com/india-news/indias-proposal-to-include-african-union-as-full-member-of-g20-included-in-draft-communique-101689330151377.html on 12th August 2023.*
2. *Hindustan Times (2023), 20th June 2023, 'The African Union and India's G20 presidency', accessed from https://www.hin dustantimes.com/ht-insight/international-affairs/the-african-unio n-and-indias-g20-presidency-101687241566368.html on 18th July 2023.*

3. *Times of India (2023), 17th July 2023, 'Africa quotient: India's G20 pitch for the continent is welcome. But China is ahead in this game as of now, Accessed from https://timesofindia. indiatimes.com/blogs/toi-editorials/africa-quotient-indias-g20-pitch-for-the-continent-is-welcome-but-china-is-ahead-in-this-game-as-of-now/on17th July 2023.*
4. *Larionova, Marina & Kirton, John J (2015), The G8–G20 Relationship in Global Governance, Ashgate Publication: London.*
5. *PIB (2023), 'Prime Minister Shri Narendra Modi's Closing Remarks at the Concluding Leaders' Session of the Voice of Global South Summit,' accessed from https://pib.gov.in/Press ReleaseIframePage.aspx? PRID=1891138 on 12th July 2023.*
6. *Kathrin. B, Fues. T & Volz. U (2011), 'The G20: Its Role and Challenges', Briefing Paper: Bonn: German Development Institute accessed from https://www.idos-research.de/uploads/ media/BP_16.2011.pdf on 12th May 2023.*
7. *PIB (2022), G-20 and India's Presidency, Ministry of External Affairs, accessed from https://pib.gov.in/PressReleaseIframe Page.aspx?PRID =1882356 on 12th July 2023.*
8. *Jain, Rupam (2023), Reuters June 18 2023, 'India's Modi seeks African Union's full membership in G20,' accessed from https://www.reuters. com/world/indias-modi-seeks-african-unions-full-membership-g20-2023-06-18/ 17th July 2023.*
9. *Mishra, Abhishek (2022), Why India should support greater African representation under its G20 presidency, Observer Research Foundation, accessed from https://www.orfonline.org/ research/why-india-should-support-greater-african-representation-under-its-g20-presidency/on 12th June 2023.*
10. *Paulao, Sebastian (2017), The G20 Compact with Africa: Overview, Assessment, and Recommendations for India, ORF Issue Brief, June 2017 (188).*
11. *Ministry of External Affairs (2022), Address by External Affairs Minister, Dr S. Jaishankar at the Launch of Book: India-Africa Relations: Changing Horizons, accessed from https://mea.gov.in/ Speeches-Statements.htm?dtl/35322/ on 12th July 2023.*

12. *Hindustan Times (2018), July 25, 2018, 'Africa will be India's top priority, says PM Narendra Modi in Uganda,' accessed from https://www.hindustantimes.com/india-news/africa-to-be-india-s-top-priority-says-prime-minister-narendra-modi/story-R7ypDK152HYiayKYxjgx8I.html from 12th July 2023.*

13. *Kumar, Ranjit (2023), ABP live, July 02, 2023, 'Why Backing African Union's G20 Membership Bid Is A Smart, Strategic Move By India,' accessed from https://news.abplive.com/ news/india/india-at-2047-opinion-africa-in-g20-smart-strategic-move-by-india-to-back-african-union-g20-membership-bid-1612969 on 16th July 2023.*

14. *PIB -2, (2022), 'Group of Twenty (G20),' Ministry of Information and Broadcasting, Government of India, accessed from https://static.pib.gov .in/WriteReadData/specificdocs/documents/2022/nov/doc20221111123 301.pdfon 18th July 2023.*

Manglam - Year 14(02) Vol. XXVII Aug. 2023
ISSN-0976-8149, PP. 32-42

Defence Technology and Foreign Policy : An Indian Perspective

Akanksha Dhayal*

Abstract

Extensive array of instances put into perspective that advances in science and technology (S&T) have long influenced the course of international politics. It remains a crucial tool for promoting economic development and national interest and security. The Indian governments, especially in the new millennium, too have realised this and put science and technology at the forefront of India's diplomatic engagement. Moreover, recent discourses in global and national media on India's membership to the Nuclear Suppliers Group (NSG), Missile Technology Control Regime (MTCR), etc. and leadership demonstrated by India in global COVID-19 pandemic crisis highlight the fact that there lies great opportunity for Ministry of External Affairs to venture into existing as well as emerging avenues of science diplomacy. In this paper Defence Technology has been examined and analysed, which influence and shape the foreign relations of India. Also examined is the question of how defence technology related issues could be managed through diplomacy to draw some conclusions on contentious issues and bargaining strategies while highlighting areas where diplomacy is required.

Keywords: *defence technology, science and technology, India, national interest, contentious issues, bargaining strategies, diplomacy*

As we commenced the 21st century, a technology driven revolution in world affairs was perceived to be occurring, largely due to the infusion of ICT in planning, execution and monitoring of politico-military activities of advanced countries. The outlook is for the rapid evolution of new technologies eventually leading to the development of several advanced defence capabilities and a system-of-systems approach that will take advantage of the cumulative effect of employing each of the new capabilities simultaneously and in proper synchronisation. Modern battlefields today have significantly advanced use of electronics, optoelectronics, radars, computers etc. to

* ***Department of Political Science, University of Rajasthan, Jaipur, Rajasthan***

fully exploit technology to achieve a digital battlefield advantage. Technology sophistication of each component, the high cost of systems and the efficacy of integration will determine the extent to which a country can achieve true technological battlefield advantages.

The origins of defence technology in the area of nuclear power in India can be found in early acquisition of nuclear reactor technology from the west, mainly in the form of setting up of the Tarapur Atomic Power Station with the American support and CANDU reactors from Canada (Mallik, 2016, 31). Vis-à-vis nuclear diplomacy, a blend of pragmatism and idealism gets reflected in India's decisions to avoid joining the NPT and CTBT and simultaneous commitment to non-proliferation and a nuclear free world. India has adopted an unambiguous 'no-first use' policy and unilateral moratorium on further tests. Though India has defence technology agreements with many defence giants, Russia holds a significant place. Military cooperation with the USSR was considered and brought into action especially after the Indo-Sino war of 1962 and it was oriented towards developing advanced military technology. India's defence purchases have also helped Russia to tide over the difficult post-Soviet transition period. Su-30MKI multi-role fighter aircraft, Mi-17-IV military transport helicopters, R-77 air-to-air missiles, Kilo class/type 877E submarines, frigates, Ka-31 Helix airborne early warning helicopters, aircraft carrier Admiral Gorshkov, MiG fighter jets, T-90 tanks, fire control, air and sea surveillance radar, anti-tank and anti-ship missiles, etc. are the major weapon systems acquired from Russia. (Chandra,2017,37) Taking the cooperation a step ahead in 1998, the long-term agreement on military technical co-operation was not only extended temporally, it was also upscaled from buyer-seller relationship to the joint development of new technologies like BrahMos, 5th Generation Fighter Aircraft, Medium Transport Aircraft Development Programme (MTA), etc. (Chandra,2017,37). Though Moscow condemned India's nuclear tests, it did not impose any sanctions on India. Furthermore, Russia went ahead with the Soviet-era deal to build nuclear reactors at Kudankulam without caving in to US pressure. Though Russia had initially objected to India's attempts

to diversify its arms supply, it seems to have finally adapted to the inevitable change. Despite this diversification of the sources of military equipment and technology acquisitions, long-established ties and ongoing projects will ensure Russia remains as the major defence partner of India in future too.

India's defence diplomacy can't get complete without the involvement of the USA. The equation between India and USA remained in cold waters vis-à-vis defence diplomacy, especially during the Nixon Administration, till the dissolution of the Soviet Union in 1991. While Post 1990s, India build closer ties with USA in the unipolar world, USA also accommodated India's core national interests under the Bush (2001-09) and Obama (2009-17) administrations in the spheres like multilateral export control regimes (MTCR, Wassenaar Arrangement, Australia Group), support for admission in the Nuclear Suppliers Group, joint-manufacturing through technology sharing arrangements, etc. among others.(Bishoyi,2011). The U.S.A. and India have signed four 'foundational' agreements that equate India's status as its major defence partner viz., General Security Of Military Information Agreement (GSOMIA), in 2002; Logistics Exchange Memorandum of Agreement (LEMOA), in 2016; Communications Compatibility and Security Agreement (COMCASA) in 2018; and Basic Exchange and Cooperation Agreement (BECA), in 2020 (The Print, October 27, 2020). Thus, India has emerged as a major defence partner to the USA in the latter's pursuit of creating a stable balance of power in the larger Indo-Pacific region in face of Chinese onslaught.

The establishment of the strategic partnership with France in 1998 paved the way for significant progress in Indo-France bilateral cooperation, especially commercial exchanges in strategic areas such as defence, nuclear energy and space. France holds the distinction to be the first country to sign an agreement on nuclear energy after obtaining the IAEA and NSG waiver. Eventually, France has become one of the largest suppliers of nuclear fuel and nuclear reactors to India after signing a 'Framework Agreement for Civil Nuclear Co-operation' in 2008. (The Indian Express, October 1,2008) Overall,

Indo-French bilateral relations had fluctuated after defence sales to Pakistan but were offset by strong relations in the fields of civil nuclear energy and aerospace. France is also a major defence supplier to India. Acquisition of Dassault Mirage 2000 fighter aircrafts and Scorpène-class submarines (called Kalvari-class submarines) are shining instances. (The Indian Express, October 1, 2008)Israel has emerged as the second-largest defence supplier to India after Russia since the establishment of diplomatic relations. Starting with supply of UAVs to India in 1996, Israel Aerospace Industries (IAI) has signed several large contracts with the Indian Air Force like the upgrading of the Russian-made MiG-21 aircraft, sales of Barak 1 surface-to-air (SAM) missiles, Phalcon AWACS radar system, Spike anti-tank missiles, Heron TP drones and laser-guided bombs. India also launched a military satellite TecSAR for Israel through ISRO in 2008.(The Indian Express, November 18,2022) Despite making rapid strides in defence technology and industrial base, India is yet to cover good ground. The scope for investment in R&D and production in the defence sector can't be enhanced if India relies only on domestic demand. The Stockholm International Peace Research Institute (SIPRI) report presented that India accounted for 13 percent of the world's arms imports between 2012 and 2016 making it a top arms importer (Report of SIPRI, 2021, p. 2). Certain developments in the past few years like policy changes and marketing of its defence platforms mark the overall transition towards shedding reluctance for defence exports. A major defence export breakthrough was witnessed when India sold its first indigenously designed and built multi-role offshore patrol vessel (OPV), Barracuda, to Mauritius in 2011. This was followed by various other deals including that of lightweight torpedoes with Myanmar in 2017, Akash surface-to-air missile to Vietnam, etc.(The Hindu, June 01,2016). The most remarkable arms deal prospect is the supply of the supersonic missile BrahMos (Indo-Russian joint production) to Vietnam and other countries, thus establishing a Russia-India-Vietnam troika of defence collaboration. Thus, defence exports are poised to attain a crucial aspect of defence diplomacy of India, shaping regional dynamics in the Indian Ocean Region, Southeast Asia and South America.

India's Prime Minister Narendra Modi, in his first term in office, had taken his proactive style of governance to the foreign office. In his inauguration ceremony Modi left many political commentators off-guard by inviting leaders of the South Asian Association for Regional Cooperation (SAARC) for his swearing-in ceremony. Since then, diplomats do diplomacy both in India's backyard and further abroad. As the new government's foreign policy agenda crystallized, it appeard that military diplomacy had found new footing in the foreign office. India is keen to strengthen defence relations with "Friendly Foreign Countries". In the past also India has endeavored to use defence diplomacy as a tool to further its foreign policy goals and advance its strategic interests. Despite its nonaligned credentials India has maintained dialogue on security challenges, trained foreign military personnel, made "goodwill calls" as well as conducted joint-exercises and training exchanges. India's defence diplomacy has been focused on training, joint-exercises, repairs and maintenance support, ship visits and student exchanges. However, the government is keen to enhance the matrix of India's defence cooperation. New Delhi has shown willingness to start exporting indigenously made defence equipment to "friendly" countries in Southeast Asia and South America. This strategy of export promotion has been identified by the Ministry of External Affairs and Ministry of Defence as compatible with India's foreign policy goals; it is also in accordance with the government's new stratagem to industrialize defence production. Given the high-handed nature of India's relations with its neighbors and the inability to create trust and goodwill, New Delhi was branded as a bully. Such a plan of defence export promotion is fairly new to India and there is awareness within the foreign affairs establishment that this policy needs regulatory controls. The MOD recently issued a 'Strategy for Defence Exports' (SDE), a five-page document to standardize operating procedures for defence exports. According to the SDE, the government will constitute a Defence Export Steering Committee (DESC) and an Export Promotion Body (EPB) to harness the commercial and diplomatic potential for military exports. (India Today, September 6 2014). The initiative will also make use of the line of credit service to facilitate military sales to

foreign countries. Interestingly, military transfers are set to become an important component of India's 'Look East Policy'.

India's 'Look East Policy' transformed into "Acting East"; and augmenting defence exports to India's ASEAN partners will certainly help galvanize the 'Look East Policy'. India have identified Vietnam as the first beneficiary of its defence export promotion policy. High-profile bilateral exchanges between the two nations have been on the rise. President Pranab Mukherjee's state visit to Vietnam from 14 to 17 September 3 2014 came close on the heels of the Swaraj visit in late-August. During his trip to Ho Chi Minh City and Hanoi, President Mukherjee announced a US$100-million line of credit to Vietnam for defence procurement, and both nations agreed to consolidate energy cooperation. Further dialogue between the two countries took place during Vietnamese Prime Minister Nguyen Tan Dung's State visit to India on 27 and 28 October 2014. (Deccan Herald, September 12,2014)

Behind the scenes and away from all the pomp and regalia associated with presidential delegations, work continues through diplomatic channels; Foreign Office Consultations (FOC) and Strategic Dialogue at the secretary level are readily backing-up what is now a political and strategically convenient bilateral relationship. India remains keen to strengthen defence relations with Vietnam. The joint communiqué coming out of then President Mukherjee's visit to Vietnam outlined security cooperation and defence engagement as a crucial aspect of the strategic partnership. Between India and Vietnam there exists already a framework of military and strategic cooperation; indeed, it predates India's 'Look-East' policy. India signed a Protocol on Defence Cooperation with Vietnam in 2000 and then followed it up with a joint declaration in 2007. The joint declaration called for the "development of bilateral defence and security ties" and pledged to "strengthen cooperation in defence supplies, joint projects, training cooperation and intelligence exchanges". (The Hindu, June 08, 2022) This has seen India's naval presence in the region increase over the years. Having expanded their operational reach, warships from the Indian Navy's Eastern Fleet have been operating off the Vietnamese coast in the South China Sea region. The Indian Navy has also been

sending its vessels to Vietnamese ports to make goodwill visits as well as to improve interoperability between the two navies. Both countries were brought closer together following their respective hostilities with China in 1962 and 1979. Thereafter, India posted a military attaché in Hanoi in 1980 and Vietnam did the same in 1985. India also offered Vietnam defence technology in 1994.(Diplomatist, March 05,2020). India has already trained Vietnamese sailors to operate Russian Kilo-class submarines that are being inducted into the Vietnamese navy. The Indian Air Force also operates 200 Russian origin Sukhoi-30MKI fighter jets and will help train Vietnamese air force pilots to operate the 36 Sukhoi-30MK2 fighter jets that Vietnam will deploy by 2015. (Indian Defence Review, March 03,2015) .Hitherto, India's defence diplomacy with Vietnam has not gone beyond training, joint-exercises, ship visits and staff exchanges. However, the new government's emphasis on action or "acting east" has led to new elements being introduced in Indo-Vietnamese defence cooperation, namely defence exports. The US$100-million line of credit, the first to be offered to a country outside South Asia by India, will fund the purchase of four off-shore patrol vessels for the Vietnamese Navy. (Indian Defence Review, March 03,2015) The supply of leading technologies to Vietnam will give it an effective deterrent and further its anti-access/area denial strategy; this will likely antagonise China with whom Vietnam has a long-ranging dispute in the South China Sea. Indian involvement here could further complicate the geopolitical environment. New Delhi will have to conduct diplomacy and ensure that 'looking East via military diplomacy' does not endanger its bilateral relations with China. With Southeast Asia, India has been enjoying the historical legacy of the strong influence of the Indic civilization and has been strengthening its linkages through strategic engagement, economic liberalization and Free Trade Agreement with the ASEAN countries. After 1992, India formulated its defence diplomacy in consonance with the 'Look East' policy to safeguard its eastern seaboard and secure its strategic interests in the Indian Ocean region. India's defence diplomacy in Southeast Asia aims to accommodate concerns of its neighbours and wants to project its benign role in the region but, of late, the defence diplomacy has China

containment strategy also. However, India needs a structured approach in its strategic planning and defence diplomacy while dealing with Southeast Asian countries.

In South Asia, India and Pakistan have also engaged in a technological nuclear arms race since the 1970s. The nuclear competition started in 1974 with India detonating the device, codenamed Smiling Buddha, at the Pokhran region of the Rajasthan state. The Indian government termed this test as a "peaceful nuclear explosion". This test generated great concern and doubts in Pakistan, with fear it would be at the mercy of its long–time arch rival. Pakistan had its own covert atomic bomb projects in 1972 which extended over many years since the first Indian weapon was detonated. After the 1974 test, Pakistan's atomic bomb program picked up a great speed and accelerated its atomic project to successfully build its own atomic weapons program.(Khan,2012) In the last few decades of the 20th century, India and Pakistan began to develop nuclear-capable rockets and nuclear military technologies. Finally, in 1998 India, under Atal Bihari Vajpayee government, detonated 5 more nuclear weapons. While the international response to the detonation was muted, domestic pressure within Pakistan began to build steam and Prime Minister Nawaz Sharif ordered the test, detonating 6 nuclear war weapons (Chagai-I and Chagai-II) in a tit-for-tat fashion and to act as a deterrent.(Khan,2012)

Contrary to popular belief, Pakistan did acquire nuclear weapons to counter India’s arsenal, but rather to “offset” India’s conventional superiority. Pakistan is seeking tactical nuclear weapons to use on the battlefield against India, especially in light of Delhi’s “Cold Start” doctrine. After all, NATO deployed tactical nuclear weapons because it sought to use nuclear weapons to offset the Soviet Union’s conventional superiority. All of this is to say that with highly accurate missiles, nuclear weapons become a viable weapon of war.

For India with long coastlines and land borders, conventional military capabilities will continue to be important for the foreseeable future. In addition, the armed forces will also have to be prepared to combat insurgency and terrorism being fuelled by adversarial States.

The proxy war of low intensity is fairly unique to India, and specific technologies for fighting such low intensity conflicts with non-lethal weapons will need major attention. Much like modern conventional war-fighting, reaction time needs to be reduced for enhanced effectiveness. Military modernisation in India for the immediate future will have to concentrate on enhanced use of Unmanned Aerial Vehicles (UAVs) for reconnaissance and combat use of multispectral sensors and data fusion, better signal processing technology, hypersonic missile technology, and military satellite systems. Precision Guided Munitions (PGMs), enhanced underwater technology and energy beam technologies may provide the much desired decisive regional superiority for India. For short border conflicts, India will have to acquire robust early warning systems with C4ISR integration to move towards 'network-centric' strategies. While the navy will have to focus more on littoral warfare rather than blue water capabilities, the air force will need to establish clear dominance in its sphere of influence, with day and night precision strike capability. There is an urgent need to mobilise space assets for better surveillance and coordination of integrated operations. Missiles and missile defence technology will have to keep pace with the developments in the world. Indigenous capabilities will be crucial in the areas of electronic warfare, missile defence technologies, Directed Energy Weapons (DEWs) and satellite defence, as these critical technologies will always be vulnerable to technology controls by supplier nations.

India's nuclear doctrine of credible minimum deterrence and no first- use posture presents a unique set of challenges for the strategic planners and diplomats. Since India continues to advocate total nuclear disarmament by all nations, and does not support the logic of large-scale stockpiling of weapons, India must rely more on deterrence value from non-nuclear technology superiority over the adversary. For India, the real challenge in the next few decades will be to manage large-scale demands of the armed forces for national security, while attempting to stay ahead in economic competition, to achieve a leadership role in global affairs. Technology and diplomacy must therefore join hands to achieve this.

References

1. *Allison, Graham .(2005). Nuclear Terrorism: The Ultimate Preventable Catastrophe. New York: Henry Holt.*
2. *Barnett, J. (2001). The Meaning of Environmental Security. London: Zed.*
3. *Bishoyi, Saroj. (2011). Defence Diplomacy in US-India Strategic Relationship, accessed from https://idsa.in/system/files/ jds_5_1_ sbishoyi.pdf, accessed on 24 January,2023.*
4. *Buzan, Barry. (1987). An Introduction to Strategic Studies: Military Technology and Internal Relations. London: Macmillan in association with the International Institute for Strategic Studies.*
5. *Chandra, Rekha. (2017). India-Russia Post Cold War Relations: A New Epoch of Cooperation. Oxfordshire: Routledge.*
6. *Coopey, Richard, et al. (1993). Defence Science and Technology. Switzerland:Harwood Academic*
7. *Deccan Herald (September 12,2014), India plans to supply Vietnam BrahMos missiles accessed from https://www.deccanherald.com/ content/430576/india-plans-supply-vietnam-brahmos.html, accessed on 24 October, 2022.*
8. *Diplomatist (March 05,2020), India-Vietnam Strategic Cooperation: A Key Element in India's 'Act East' Policy, accessed from https://diplomatist.com/2020/03/05/india-vietnam-strategic-cooperation-a-key-element-in-indias-act-east-policy/, accessed on 23 February, 2022.*
9. *Indian Defence Review (March 03,2015). Vietnamese Pilots to be trained on Su-30 MKI by IAF, accessed from http://www.indiandefencereview.com/news/vietnamese-pilots-to-be-trained-on-su-30-mki-by-iaf/, accessed on 27 January 2023.*
10. *India Today (September 6, 2014). Modi government notifies new strategy for export of defence products, accessed from https://www.indiatoday.in/india/north/story/narendra-modi-defence-export-strategy-nda-desc-defence-ministry-indian-arms-207424-2014-09-05, accessed on 25 August , 2021.*
11. *Kavic, Lome J.(1967). India's Quest for Security: Defence Policies, 1947-65. Dehradun: EBD.*

12. *Khan, F. (2012). Eating Grass: The Making of the Pakistani Bomb. United States: Stanford University Press.*
13. *Mallik, Amitav. (2016). Role of Technology in International Affairs. New Delhi: Pentagon Press.*
14. *Street, John. (1992). Politics and Technology. England: Palgrave Macmillan.*
15. *Sukumar, Arun Mohan. (2019). Midnight's Machines: A Political History of Technology in India. Gurgaon, India: Penguin Random House India.*
16. *The Hindu (June 01,2016), India exports its first warship 'CGS Barracuda' to Mauritius, accessed from https://www.thehindu.com/news/national/india-exports-its-first-warship-cgs-barracuda-to-mauritius/article6711039.ece , accessed on 21 May 2019.*
17. *The Hindu (June 08, 2022), India and Vietnam sign mutual logistics agreement, accessed from https://www.thehindu.com/news/national/india-vietnam-ink-military-logistics-support-pact-vision-document-to-expand-defence-ties/article65506502.ece, accessed on 03 July 2022.*
18. *The Indian Express (October 1, 2008), India, France ink nuclear deal, first after NSG waiver, accessed from https://indianexpress.com/article/news-archive/india-france-ink-nuclear-deal-first-after-nsg-waiver/, accessed on 16 July 2021.*
19. *The Indian Express (November 18, 2022), From UAVs to refuellers: How Israel is helping India keep an eye on LAC ,accessed from https://indianexpress.com/article/india/from-uavs-to-refuellers-how-israel-is-helping-india-keep-an-eye-on-lac-8272676/ , accessed on 17 December 2022.*
20. *The Print (October 27, 2020), The 3 foundational agreements with US and what they mean for India's military growth, accessed from https://theprint.in/defence/the-3-foundational-agreements-with-us-and-what-they-mean-for-indias-military-growth/531795/, accessed on 09 April 2022.*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 43-49

पूर्वी उत्तर प्रदेश में किसान समस्या

*डॉ० अरुण कुमार सिंह**

सारांश

भारतीय समाज में कृषि व्यवसाय को कभी उत्तम व्यवसाय का दर्जा प्राप्त था किन्तु समय के साथ उनकी परिस्थिति में परिवर्तन आता गया और मध्यकाल के उत्तरार्द्ध में मुगलों की जागीरदारी, जमींदारी और राजस्व नीति के अलावा मराठों की वसूली इत्यादि कारणों से किसानों की दशा में निरंतर गिरावट आने लगी। इस दौर के बाद जब भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का पदार्पण कृषि राजस्व के वसूली क्षेत्र में हुआ तब से अंग्रेजी शासन काल तक किसानों की दशा में निरंतर ह्रास हुआ तथा ये दलित वर्ग में सम्मिलित हो गये। जब शोषण एवं अत्याचार की पराकाष्ठा सहन सीमा से बाहर होने लगी तो, किसानों ने भी अंग्रेजी सत्ता और उनके पालित जमींदारों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया। ऐसी दशा में किसान संगठनों का उदय हुआ। इस सन्दर्भ में पूर्वी उत्तर प्रदेश में किसान संगठनों की विशेष भूमिका रही, क्योंकि यहाँ के किसानों के संघर्षों के परिणामस्वरूप अखिल भारतीय किसान संगठन अस्तित्त्व में आये और किसानों के हित के लिए आंदोलन को एक नयी दिशा प्रदान किये। इससे किसानों में न केवल अपने अधिकार के प्रति जागरूकता आयी, बल्कि संघर्ष के लिए संगठन के महत्त्व को भी ये समझने लगे। प्रस्तुत शोध–पत्र में पूर्वी उत्तर प्रदेश में किसानों की समस्याओं का मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है।

शब्द कुंजी : *कृषक, समस्या, संगठन, जमीन, काश्तकार, भू–स्वामी, कर।*

पूर्वी उत्तर प्रदेश में किसान समस्याओं के प्रति जागरूकता को देखते हुए सर्वप्रथम कांग्रेस ने पहल किया। यद्यपि कांग्रेस एक राजनीतिक संस्था थी, जिसका मुख्य ध्येय देश की आजादी थी, किन्तु इस देश के किसानों की दुर्दशा से मुक्ति की लड़ाई को भी वह अपने मुद्दों में सम्मिलित करती रही है। कांग्रेस के बैनर तले ही महात्मा गाँधी ने सर्वप्रथम नील आन्दोलन की सफल लड़ाई लड़ी, इसी तरह कांग्रेसी नेता सरदार पटेल ने बारदोली आन्दोलन लड़ी और इन्हीं कड़ियों में अन्ततः प्रदेश की कांग्रेस सरकार ने ही आजादी के तत्काल बाद जमींदारी प्रथा को समाप्त करने में अहम् भूमिका निभाई। इसीलिए किसानों के सन्दर्भ में राजनीतिक आन्दोलनों की भूमिका को मार्क्स, लेनिन, माओत्सेतुंग इत्यादि विद्वानों ने स्वीकार किया है।

---

* *एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, डी०ए०वी० पी०जी० कालेज, आजमगढ़*

औपनिवेशिक काल में किसानों की समस्याओं का अन्त नहीं था, जिसमें नजराना प्रथा से किसान अत्यंत खौफ खाते थे, क्योंकि जमींदार कब किस नजराने की माँग कर दे। उदाहरणार्थ, जनपद *प्रतापगढ़* के तालुकेदार की बहन के गाँव 'गुजारा' का बंसपती नामक काश्तकार भूस्वामी की बदतमीजी एवं नीच हरकतों से परेशान होकर जब अदालत पहुँचा, तो अदालती कार्यवाही से इस कदर बौखलाया कि अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठा। अदालत को उसे पागलखाने भेजना पड़ा, जहाँ 9 महीने तक उसका इलाज चला।[1]

किसानों से अमानवीय व्यवहार का एक ढंग मुर्दाफरोशी कानून था। इसके तहत किसी काश्तकार की मृत्युहोने पर भूमि से उसके वारिस को बेदखल कर जमींन को खुलेआम बोली लगाकर ऊँची दर की लगान पर दूसरे काश्तकार को दे देती थी। 'अवध रेन्ट एक्ट' की धारा 48 के अनुसार भू–स्वामियों को यह अधिकार प्राप्त था कि सात वर्षीय पट्टे की समय–सीमा पूर्ण होने पर मृत काश्तकार के वारिस को भू–स्वामी बेदखल कर सकता था। किन्तु वे 07 वर्ष पूरा होने का इंतजार नहीं करते थे।[2] *मेहता* लिखते हैं कि, परिवार को सहारा देने वाले व्यक्ति की मौत पर जाहिल जमींदार के कारिन्दे व गाँववाले मृतक के अंतिम संस्कार के पूर्व ही उसके जमीन की सौदेबाजी में व्यस्त हो जाते थे। यह प्रथा तालुकेदारी जागीरों के साथ *'कोर्ट्स ऑफ वार्डस' (सरकारी जमींनों)* में भी चलन में था। एक काश्तकार *वी.एन. मेहता* के समक्ष बयान देते हुए कहा कि, यह एक नये किस्म का महाब्राह्मण वजूद में आ गया है। ..... जिसे चिता की राख ठण्डी होने से पहले सन्तुष्ट करना पड़ता है।[3]

काश्तकारों की समस्याओं की फहरिश्त इतनी बड़ी थी कि, उसे सूचीबद्ध नहीं किया जा सकता; यथा–*प्राकृतिक आपदा* से किसी काश्तकार का *मकान गिर* जाता था, तो उसके पुनर्निर्माण की इजाजत के लिए भू–स्वामी नजर वसूल करते थे। इसी तरह काश्तकारों द्वारा 'कर' अदा करने में एवं *'रकमसेवाई'* में विलम्ब करने पर भी जुर्माना वसूला जाता था।[4] इसी तरह काश्तकार द्वारा नई झोपड़ी लगाने पर अथवा पेड़–पौधा लगाने पर काश्तकार को 'नजर' देनी पड़ती थी, यदि किसान इससे मना करता तो बगीचों वाली जमीन को 'नाजूल' भूमि (सरकारी भूमि) घोषित करने की धमकी दी जाती थी।[5]इसी तरह की एक घटना में काश्तकारों ने अपनी 1.5 बीघा जमीन में बाग लगाया तो उसे तालुकेदार को 200 रूपये नजर देनी पड़ी। इसके अलावा तालुकेदार अपनी 'सीर' बढ़ाने के लिए काश्तकारों को उनके बाग–बगीचों से बेदखल कर देते थे।[6]

काश्तकारों को भूस्वामी के यहाँशादी या अन्य उत्सवों के अवसर पर अनिवार्य रूप से *'न्यौते'* रकम देनी पड़ती थी। एक भूस्वामी अपनी बेटी की शादी पर 13 रूपये काश्तकार से यह कहकर वसूला कि आगामी लगान में इसकी कटौती कर दी जायेगी, लेकिन जब लगान वसूलने का समय आया तो इस रकम की कटौती नहीं की गयी थी।[7] भूस्वामियों द्वारा किसानों से बाजार भाव से सस्ते दामों पर अनाज, घी इत्यादिखरीदा जाता था।[8] भूस्वामी जानवरों को चराने के एवज में *'चराई कर'* वसूलते थे।[9] इस कर के लिए कई तरह की चालबाजी भूस्वामी करता था, यथा–अधिकांशतः जमींदार गाँव की सारी परती जमीन को *'रख' या आरक्षित* जमीन में बदल देता था, यदि उस जमीन पर किसी जानवर का पैर पड़ जाये तो वह दो रूपये दण्ड शुल्क के रूप में वसूलता था।[10]

मेहता रिपोर्ट के अनुसार, सिंचाई व्यवस्था बड़ी दयनीय थी, बारिश के पानी को छोड़ अन्य सभी स्रोतो पर जमींदारों का अधिकार था, जिसके चलते वे किसानों को खेतों की सिंचाई में बाधा पहुँचाते थे। जमींदार सार्वजनिक तालाबों, कुँओं आदि से सिंचाई पर जमींदार नजराना वसूल करते थे, जबकि तालाब या कुँआ खोदवाने का खर्च भी काश्तकारों से जमींदार वसूलता था।[11]इस समस्या से किसानों को मुक्त करने के लिए सरकार *'तकावी ऋण'* किसानों को देती थी, किन्तु जमींदारों के विशेषाधिकारों के चलते इससे भी कृषकों की दुर्दशा में सुधार नहीं हुआ।[12] सरकारी ऋण का लाभ सामान्यतया जमींदारों को मिलता था, जिससे काश्तकारों को महाजनों से ऋण लेना पड़ता था, जो 18 से साढ़े 36 प्रतिशत तक ब्याज वसूलते थे। इसमें भी महाजन खातों के आंकड़ों में हेराफेरी करके एक बार कर्ज लेने के बाद काश्तकार को पीढ़ी दर पीढ़ी ब्याज देने के लिए बाध्य कर देते थे।[13]

इसी तरह जमींदार अपने जानवरों के लिए काश्तकारों से मुफ्त भूसा अथवा बाजार मूल्य से कई गुना कम मूल्य में प्राप्त करते थे। अनाज के ऊँचे बाजार भाव के कारण इस 'कर' की वसूली जमींदारों द्वारा नकद न करके कर्बी या पयाल से दो से दस बोझकी वसूली करते थे।[14] गन्ने की खेती करने वाले काश्तकारों से जमींदार गुड़, गन्ने की पत्तियाँ, गन्ने का रस और गन्ने के बंडल के अतिरिक्त *'कोल्हूवान कर'* सवा आना प्रति बीघा वसूलता था।[15] जागीर के नौकरों की झोपड़ियों एवं छप्परों के लिए काश्तकारों से गन्ने की पत्तियाँ वसूली जाती थी, जिसके लिए गन्ने का रस अतिरिक्त लिया जाता था।[16] जमींदार अपनी जलावन आवश्यकता की पूर्ति के लिए उपले अथवा कण्डों की वसूली करते थे।[17] दुधारू पशुओं के पालकों से दूध, गड़रियों से

बकरी एवं ऊन, कम्बल, चमार जाति से जूते व चरसा वसूला जाता था।[18] इसी तरह नाई, धोबी, भंगी आदि से जमींदारों द्वारा बेगारी कराई जाती थी।[19]

'हारी बेगारी' प्रथा द्वारा जमींदार अपने खेतों को मुफ्त में जोतवाते थे, तो इसी तरह खरीफ एवं रबी की फसलों की सिंचाई बेड़ी/दोगला से कराते थे,[20] प्रायः काश्तकारों से 12 से 18 हारी प्रतिवर्ष ली जाती थी।[21] जमींदार मुफ्त में अथवा बहुत कम मजदूरी में अपना काम कराते थे। प्रतापगढ़ जिले में जमींदार 3 से 6 आना मजदूरी में काम कराते थे, जबकि बाजार दर 8 आना थी।[22] काश्तकारों की महिलाएँ कूटने–पीसने का काम और बच्चे जमींदारों के पशुओं का गोबर साफ करने का काम करते थे।[23]

औपनिवेशिक शासन काल में अधिकारियों द्वारा जब गाँवों में कैम्प किया जाता था, तो उनके कैम्प लगाने से लेकर सेवा एवं सेवा–सामग्रियों को काश्तकारों से मुफ्त ली जाती थी। अधिकारियों का दौरा राजकीय अभिलेख में किसानों की दशा के निरीक्षण के लिए दर्ज होता था, जबकि वे आमतौर पर चिड़ीमारी एवं शिकार में अपना वक्त गुजारते थे। इस दौरान उनके चपरासी घोड़ों के चारे को काश्तकारों के फसलों से प्राप्त करते थे एवं अपने लिए मुफ्त में दूध, अनाज, मुर्गे, बत्तख, और कबूतर ले भी लेते थे तथा ग्रामीणों से बोझा ढुलवाने का काम भी करवाया जाता था।[24] इस अवसर पर जमींदार काश्तकारों से *'नजर'* [25] नामक 'कर' वसूलता था। इन गैर कानूनी 'करों' की उगाही *कमिश्नरावन, डिप्टी कमिश्नरावन, लट्टयावन, उटाँवन, मुड़ावन, अन्नाप्रशान* आदि नामों से की जाती थी।[26]

जमींदार दशहरा, होली, ईद आदि मौके पर त्यौहारों पर *'नजर'* कर लेते थे।हद तो यह थी कि, मुसलमान तालुकेदार केवल ईद के साथ दशहरे पर भी नजर लेते थे।[27] इसी तरह जब कोई तालुकेदार राजा की उपाधि धारण करता था, तो वह *'रजौटी'* कर और गाड़ी खरीदता था *'मोटरावन कर'*, और नई हाथी खरीदने के लिए *'हाथियावन कर'* लेते थे।[28] इसी तरह घोड़ा खरीदने के लिए *'घोड़ावन कर'* वसूला जाता था और घोड़े के बूढ़े हो जाने पर लॉटरी बेचकर जमींदार मुनाफा कमाते थे।[29] जमींदारों के कर वसूलने का कोई मानक नहीं होता था; यथा– *'ग्रामोंफोनिंग कर'* एक जमींदार अपने पुत्र के ग्रामोंफोन बाजा खरीदने पर लगाया था, क्योंकि उसका आवारा लड़का गानों की आवाज गाँव वालों को सुनायी थी। प्रतापगढ़ की एक ठकुराइन तालुकेदार का एक पैर जल गया और पककर फोड़ा हो गया तो उसने 1500 रूपये फकीरों में बांटने के लिए *'पकावन कर'* वसूला।[30]

तालुकेदारों पर मुकदमों का अत्यधिक बोझ होता था, जिसके खर्च के लिए वे काश्तकारों से कर वसूलते थे।[31] इसी तरह तालुकेदार द्वारा कोई 'दान' करता था, तो उस धनराशि की वसूली काश्तकारों से की जाती थी। जैसा सन् 1920 ई0 में लखनऊ विश्वविद्यालय के निर्माण के लिए सिसेंडी जागीर ने 50,000 रूपये 'दान' करने का वचन दिया, जिसकी राशि को उसने लगान की तरह वसूली किया। *जवाहरलाल नेहरू* ने ऐसे दान को *'प्रतिनिधिक दान'* की संज्ञा दी थी।[32] यद्यपि ऐसे अवैध कर की वसूली गैर कानूनी थी, किन्तु बेसहारा काश्तकारों बेदखली के डर से अदालत में न्याय के लिए नहीं जाते थे। इसलिए व्यवहार में ऐसे कर वसूले जाते थे, क्योंकि एक चमार या कुर्मी अपने ठाकुर भूस्वामी के विरोध में मुकदमा करने के बाद उस गाँव में रहे, ऐसा संभव नहीं था।[33] इसी तरह ज्यादातर तालुकेदारों को ऑनरेरी या स्पेशल मजिस्ट्रेट अथवा मुन्सिफ का का दर्जा मिला होता था,[34] जो अपने वर्ग तालुकेदार के पक्ष में ही निर्णय देते थे।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान युद्ध खर्च के लिए काश्तकारों से धन उगाही के निमित्त उत्पीड़न और असंतोष अपने चरम पर पहुँच गया था। करीब सभी तालुकेदारों ने ऐलान कर दिया था कि भूराजस्व के आधे के बराबर लड़ाई चन्दा वसूला जायेगा, जबकि व्यवहार में उन्होंने साल भर के राजस्व के बराबर चन्दा वसूले। साथ ही साथ काश्तकारों को बेदखली का भय दिखाकर युद्ध के लिए सेना में भर्ती होने के लिए विवश किया गया। युद्ध में एक काश्तकार अपने बेटे को युद्ध नहीं करवाने के एवज में तालुकेदार को 200 रूपये दिये थे।[35] तालुकेदारों ने सेना में भर्ती होने के समय वादा किया था कि बकाया लगान माफ होगा, जंग के दौरान लगान से मुक्ति और जंग से लौटने पर सस्ती दरों पर जमीन का आश्वासन इत्यादि।[36] किन्तु जब युद्ध समाप्त हुआ और सैनिक अपने घर लौटे, तो जमींदार अपने वायदों से साफ–साफ मुकर गये।[37] युद्ध के दौरान जिन सैनिकों के माता–पिता की मृत्यु हो चुकी थी, उन्हें अपनी जमीन पुनः पाने के लिए भारी भरकम नजराना देना पड़ रहा था। कई सैनिकों की विधवाओं को 'मुर्दाफरोशी प्रथा' के तहत बेदखल कर दिया गया।[38] दूसरी ओर युद्ध के दौरान अनाजों के दाम आसमान छूने लगे थे,[39] जिनका लाभ सूदखोरों को मिला अर्थात् प्राप्त रकम को उनके कर्ज व ब्याज देने में चुकता किया जाता था और तालुकेदार बढ़ी कीमतों से निपटने के लिए नजराना वसूल करते थे।[40]

संक्षेप में, सम्पूर्ण प्रान्त के काश्तकारों में *अवध और पूर्वी जिलों* की स्थिति अत्यंत खराब थी, जबकि पश्चिम जिलों में औद्योगीकरण एवं नगरीकरण

के विस्तार से व्यवसाय के अन्य अवसरों की उपलब्धता बढ रही थी।[41] इसी तारतम्यता में पश्चिम जिलों में जनसंख्या का घनत्त्व बढ़ने के बजाय कम हो रहा था, कानूनी दृष्टि से काश्तकार अधिक सुरक्षित थे और दखलकारी काश्तकारों की संख्या में वृद्धि हो रही थी, चौथा गैर कानूनी 'कर' कम ही वसूले जाते थे, नहरों से सिंचाई की सुविधा होने के वहां सूखे में भी कृषि उन्नत थी। दूसरी तरफ *अवध* में औद्योगीकरण की प्रक्रिया अति–मंद थी, जिसके चलते व्यवसाय के अन्य अवसरों की उपलब्धता का आभाव था, कानून से मात्र 1 प्रतिशत काश्तकार ही सुरक्षित थे, गैर–कानूनी 'कर' और कृषि मजदूरों की बढ़ोत्तरी से अवध की स्थिति आगरा प्रांत से अधिक शोचनीय थी इत्यादि। इन कारणों से *असंतोष की आवाज सर्वप्रथम अवध में उठी* जो प्रथम विश्वयुद्ध के बाद उपजी आराजक परिस्थितियों में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी थी।

सन्दर्भ

1. *मेहता रिपोर्ट, पृ० 25*
2. *वही, पृ० 9*
3. *वही, पृ० 9*
4. *मालवीय, एच.डी. : लैंड रिफार्म इन इण्डिया, पृ० 104, प्रतापगढ़ सेटेलमेण्ट रिर्पोट, 1896, पृ० 86–87*
5. *मेहता रिपोर्ट, पृ० 43*
6. *वही, पृ० 43*
7. *वही, पृ० 45*
8. *वही, पृ० 47*
9. *वही, पृ० 48–59*
10. *वही, पृ० 76*
11. *वही पृ० 74*
12. *वही, पृ० 48*
13. *कांग्रेस अग्रेरियन इंक्वायरी कमेटी रिपोर्ट, 1936, पृ० 71*
14. *मेहता रिपोर्ट, पृ० 56–58*
15. *वही, पृ० 46*
16. *वही, पृ० 58–59*
17. *वही, पृ० 58*
18. *वही, पृ० 59*

19. स्टीवर्ट रिपोर्ट, पृ० 67–69, एवं मेहता रिर्पोट, पृ० 59, 60, 67
20. वही, पृ० 60
21. वही पृ० 69
22. वही पृ० 60
23. वही, पृ० 69
24. कपिल, कुमार : किसान विद्रोह, कांग्रेस और राज (अवध 1986–1922), पृ० 41
25. फाइल नं0 271/1922, स्टीवर्ट रिपोर्ट, रेवेन्यूमिनिस्ट्रेशन, राजकीय अभिलेखागार उ0प्र0, पृ० 73–74
26. वही, पृ० 70
27. स्टीवर्ट रिपोर्ट, 73–74
28. मेहता रिर्पोट, पृ० 70–73
29. वही, पृ० 73–74
30. कपिल कुमार, वही, पृ० 34
31. मेहता रिर्पोट, पृ० 74
32. इन्डेपेन्डेन्ट, समाचारपत्र, दिनाँक 3–7–1920
33. सिद्दकी, माजिद एच. : अग्रेरियन अनरेस्ट इन नॉर्थ इंडिया, द यूनाइटेड प्रोविंसेज, 1918–22, पृ० 16
34. अभ्युदय, समाचारपत्र, दिनाँक 26–1–1918
35. मेहता रिपोर्ट, पृ० 71
36. कपिल कुमार, पृ० 47
37. मेहता रिपोर्ट, पृ० 71
38. वही, पृ० 22–24
39. एग्रीकल्चर स्टैटिस्टिक्स ऑफ इंडिया, 1916–22 एवं कपिल कुमार पृ० 53
40. कपिल कुमार, पृ० 52
41. अपर्णा : संयुक्त प्रांत में कृषक समस्याएं और कांग्रेस 1920–39, पृ० 39

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 50-64

स्थितप्रज्ञ एवं अतिमानस की तुलनात्मक विवेचना

*डॉ अरविन्द शुक्ल**

श्री अरविन्द ने अतिमानव शब्द का प्रयोग बहुत कम किया है, जबकि अतिमानव शब्द के स्थान पर अतिमानसिक मानव या प्रज्ञानपुरुष कहना अधिक उपयुक्त समझा है। अतिमानस युक्त जिस मानव को श्री अरविन्द ने अतिमानसिक मानव की संज्ञा दी है, वह अतिमानसिक मानव को प्रज्ञान पुरुष कहना अधिक उपयुक्त है, गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ की अवस्था से पर्याप्त समानता रखता है, क्योंकि श्री अरविन्द ने प्रज्ञानपुरुष के स्वभाव, स्वरूप की जो विवेचना की है, उस विवेचना से यह प्रमाणित होता है कि स्थितप्रज्ञ जैसा स्वरूप 'प्रज्ञानपुरुष' का भी है। दार्शनिक दृष्टि से प्रज्ञानपुरुष एवं स्थितप्रज्ञ के स्वरूप, अवस्था में साम्य की विवेचना कर पाना यद्यपि कठिन है, फिर भी सामान्य लक्षण के आधार पर वैचारिक दृष्टि से समानता का जो स्वरूप परिलक्षित होता है, वह स्वरूप तार्किक एवं वैचारिक दृष्टि से इस प्रकार हैः–

जब चेतना केवल आत्म केन्द्रित हो जाती है, तो वही अवस्था स्थितप्रज्ञ की अवस्था है। गीता के ही समान श्री अरविन्द ने भी अतिमानसिक मानव के जिस स्वरूप को स्वीकार किया है, उसके अनुसार निश्चेतन का अतिचेतना के रूपान्तरण से ही प्रज्ञानपुरुष का निर्माण होगा।

गीता एवं श्री अरविन्द के अतिमानसिक चेतना का स्वरूप लगभग समान है, क्योंकि जहाँ गीता में यह स्वीकार किया गया है, कि स्थित प्रज्ञ पूर्णरूपेण बाह्य प्रभाव रहित है, सुख और दुःख से अप्रभावित है। इसी के अनुरूप श्री अरविन्द भी यह प्रमाणित करते हैं कि जब हमारे अन्नमय, प्राणमय तथा मनोमय पुरुष पूर्णचैत्यीकरण हो जाता है, तो वही अतिचेतना या प्रज्ञान पुरुष है। इस प्रकार, प्रज्ञान पुरुष एवं स्थितप्रज्ञ के स्वरूप में अभेद प्रमाणित हो जाता है। यदि स्थितप्रज्ञ की अवस्था चेतना की पराकाष्ठा है, तो प्रज्ञान पुरुष अतिचेतना है।

श्री अरविन्द प्रज्ञानपुरुष की विवेचना में यह स्वीकार करते हैं कि देह, प्राण, मन का पूर्णचैत्यीकरण ही प्रज्ञानपुरुष है, क्योंकि अतिमानसिक स्थिति में

---

* *एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, दर्शनशास्त्र एवं योग विभाग, नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज*

प्रज्ञानपुरुषों का ज्ञान अन्तरानुभूति से ही संचालित होगा। इस अवस्था में ज्ञान पूर्ण रूपेण स्वानुभूतिजन्य ही होता है, जो कि बाह्य विषयों से पूर्ण मुक्ति द्वारा ही संभव है। गीता में भी इस तथ्य को स्वीकार किया गया है कि जिस प्रकार कछुआ सम्पूर्ण अंगों को संकुचित कर लेता है, उसी प्रकार कछुए के अंगों की भाँति जब पुरुष समस्त इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटाकर अर्न्तमुखी कर देता है तो वही स्थितप्रज्ञ है। स्थितप्रज्ञ की यह अवस्था देह, प्राण, मन के पूर्ण चैत्यीकरण की अवस्था है। तभी तो श्री कृष्ण ने स्थितप्रज्ञ की अवस्था को ब्राह्मी स्थिति की संज्ञा दी है।

वस्तुतः ब्राह्मी स्थिति पूर्ण चैत्यीकरण ही है, जिस चैत्यीकरण को श्री अरविन्द अतिमानसिक मानव या प्रज्ञानपुरुष की संज्ञा देते हैं, वह चैत्यीकरण ही स्थितप्रज्ञ है। यहाँ प्रज्ञानपुरुष का स्वभाव और स्वरूप किसी अर्थ में स्थितप्रज्ञ से भिन्न प्रतीत नहीं होता।

श्री अरविन्द प्रज्ञानपुरुष के सम्बन्ध में यह स्वीकार करते हैं कि अतिमानसिक मानव के लिए यह संसार आत्मा में आत्मा के लिए आत्मा की प्राप्ति है। ज्ञान, विचार या कर्म चाहे वह धार्मिक, नैतिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, जैविक अथवा भौतिक उपयोगिता मूलक या सुखवादी हो और चाहे वह मानसिक, जैविक अथवा भौतिक सत्ता से संगठित हो, ये हमारे जीवन के लक्ष्य नहीं हो सकते। इसलिए अतिमानसिक प्रज्ञानपुरुष के लिए सभी उद्देश्य या कर्म आत्मा से ही उद्भूत होते हैं और आत्मा के लिए ही संचालित होते हैं। वह सार्वभौम चेतना के साथ तथा सर्वगत और वैयक्तिक आत्माओं में पूर्ण गति के साथ कार्य करेगा। उसका व्यक्तिगत संकल्प सामुदायिक संकल्प से भिन्न नहीं होगा। इसलिए उसका व्यक्तिगत कर्म समुदायिक कर्म से सदा ही संगतिपूर्ण रहेगा। दूसरों के साथ सामंजस्य तथा संगति को बनाए रखने में उसे कोई कठिनाई नहीं होगी, क्योंकि श्री अरविन्द के अनुसार वह अहंकार से पूर्ण मुक्त हो जायेगा। यह अवस्था तभी संभव है जबकि व्यक्ति में 'मैं' या कर्तापन का पूर्ण समापन हो। स्थितप्रज्ञ की विवेचना में श्री कृष्ण ने भी यह प्रमाणित किया है कि 'निर्ममोनिरहंकारः स शान्तिम्ऽधिगच्छति' अर्थात आत्माभिमान से रहित ब्रह्मवेत्ता ही यदि स्थितप्रज्ञ है तो अवश्यमेव उसके सभी कर्म या उद्देश्य आत्मा के लिए ही संचालित होंगे। उसका कर्म का उद्देश्य बाह्य विषयगत न होकर आत्मगत ही होगा। श्री अरविन्द और श्री कृष्ण का अतिचेतना सम्बन्धी

यह धारणा भी दार्शनिक दृष्टि से एक जैसी ही है, क्योंकि जहाँ श्री अरविन्द यह स्वीकार करते हैं कि, प्रज्ञानपुरुष के लिए सभी ज्ञान आत्मज्ञान होगा, सभी शक्ति आत्मशक्ति होगी, सभी आनन्द आत्मानन्द होगा। वही श्री कृष्ण भी यह स्वीकार करते हैं कि जब समस्त कामनायें आत्मा में लीन हो जाती हैं तो उसे अपने वश में नहीं कर सकती। आत्मा में 'लीन' से तात्पर्य यही है कि स्थितप्रज्ञ की यह अवस्था आत्मज्ञानी की अवस्था है, जिसके समस्त कर्म आत्मा के लिए ही संचालित हैं।

श्री अरविन्द यह प्रमाणित करते हैं कि अतिमानसिक मानव के लिए शरीर पर पूर्ण नियंत्रण संभव होगा, क्योंकि उस अवस्था में शरीर अपने पृथक भौतिक नियमों द्वारा संचालित न होकर सर्वगत आध्यात्म का एक अंग बन जायेगा। दूसरे शब्दों में शरीर का परिहार नहीं करेगा, उसे ग्रहण करेगा। जिसे हम सुख–दुःख कहते हैं, उसके लिए उनका कोई अस्तित्त्व नहीं रहेगा। प्रज्ञान चेतना का सार्वभौम आनन्द भौतिक, जैविक तथा मानसिक सभी स्तरों पर अभिव्यक्त होने लगेगा। अतः वह सब कुछ आनन्द का ही प्रकाश समझेगा। श्री अरविन्द की धारणा के समान ही गीता में भी स्थितप्रज्ञ के लिए 'युक्त एवं मत्परः' शब्द का प्रयोग किया है। युक्त वही है जिसकी अनुभूति परमात्मा से भिन्न नहीं है अर्थात अपने आपको जब साधक परमात्मा से पूर्ण रूपेण अभिन्न मान लेता है तो उसका सब कुछ परमात्मा तत्त्व पर ही आश्रित हो जाता है और तब युक्त का भी भौतिक शरीर भी भौतिक नियमों से नहीं अपितु आध्यात्मिक नियमों से संचालित होने लगता है, अर्थात भौतिक शरीर का पूर्ण वैक्तीकरण होकर भौतिक नियमों से विमुक्त होना ही मत्पर है, तो यह प्रमाणित है कि स्थितप्रज्ञ पर बाह्य जगत् के भौतिक नियम लागू नहीं होते, क्योंकि उसका स्वरूप ईश्वर से युक्त होने के कारण भौतिक न होकर पूर्ण रूपेण आध्यात्मिक हो जाता है।

श्री अरविन्द के अनुसार प्रज्ञानपुरुष के सभी अनुभव एक नवीन प्रकार के होते हैं। गीता में भी स्थितप्रज्ञ की अवस्था की विवेचना में यह स्वीकार किया है कि ''नैनंप्राप्यविमुह्यति'' अर्थात् स्थित प्रज्ञता प्राप्त मनुष्य फिर मोहित नहीं होता।

गीता में स्थितप्रज्ञ के लिए 'विगतस्पृहः' शब्द का प्रयोग किया है :– अर्थात्

''दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषुविगतस्पृहः ।

वीतरागभय क्रोधःस्थित धीर्मुनिरुच्यते''।।

दुःखों की प्राप्ति होने पर जिसके मन में उद्धेग नहीं होता, सुखों की प्राप्ति में जो सर्वथा निःस्पृह है, जिसके राग, द्वेष, भय और क्रोध नष्ट हो गये हैं, ऐसा स्थिर बुद्धिवाला या स्थितप्रज्ञ है। इसके साथ ही साथ गीता में 'वीतराग' शब्द का भी प्रयोग 'स्थितप्रज्ञ' के लिए हुआ है, अर्थात जब अनेकता पूर्ण जगत् की वस्तुओं से कोई राग या अनुराग न हो तो यही लक्षण है स्थितप्रज्ञ का। यहाँ इस विवेचन से यह प्रमाणित होता है कि यथार्थ ज्ञान हुए बिना राग का मूलोच्छेद नहीं होता। रागात्मक सूक्ष्म आसक्ति भी जब समाप्त हो जाती है, तो उसे ही वीतराग की संज्ञा दी जाती है और यह तभी संभव है, जब साधक को 'अहं ब्रह्मास्मि' का बोध हो जाता है। अहं ब्रह्मस्मि के बोध की यह अवस्था पूर्ण चैत्यीकरण की ही अवस्था है, जिसकी प्राप्ति होने पर ही विगतस्पृह और वीतराग की अवस्था संभव है।

गीता के स्थितप्रज्ञ की इस धारणा के समान ही श्री अरविन्द ने अतिमानसिक मनुष्य की विवेचना जो की है, उसके अनुसार प्रज्ञानपुरुष आध्यात्मिक मनुष्य की परिपूर्ति है। प्रज्ञानपुरुष की सम्पूर्ण सत्ता स्वात्मिक और आध्यात्मिक शक्ति से परिचालित होगी। सभी आत्माएँ उसके लिए अपने आत्मा जैसे ही होंगे। वास्तविक अर्थ में अतिमानसिक मनुष्य ही व्यक्ति है, क्योंकि सच्चा व्यक्ति की कोई पृथक् सत्ता नहीं, उसकी वैयक्तिकता वैश्विक होती है। क्योंकि वह विश्व का वैयक्तीकरण करता है। वह इस विश्व में होगा और विश्व का होगा, लेकिन अपनी चेतना में इसके परे भी होगा। वह विश्व में स्वतंत्र रहकर भी वैश्विक होगा, किन्तु पृथक्कारी वैयक्तिकता से सीमित न होते हुए भी व्यक्ति होगा।

गीता में स्थित प्रज्ञ के लक्षण को स्पष्ट करते हुए कहा गया हैं कि स्थितप्रज्ञ की अवस्था प्राप्त होने पर मनुष्य सुख, और दुःख के प्रभाव से मुक्त रहता है। तात्पर्य यह है कि दुखों की प्राप्ति होने पर जिसके मन में उद्वेग नहीं होता, सुखों की प्राप्ति में जो सर्वथा निःस्पृह है तथा जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो गये हैं, ऐसा मुनि स्थितप्रज्ञ कहा जाता है :– अर्थात स्थितप्रज्ञ दुःख और सुख की सीमाओं में आबद्ध नहीं होता। वह पूर्ण आध्यात्मिक स्वरूप

में अवस्थित रहता है। ऐसी ही धारणा श्री अरविन्द प्रज्ञानपुरुष के सम्बन्ध में स्वीकार करते हैं। उनका मानना है कि अतिमानसिक मानव चूँकि आध्यात्मिक नियमों से संचालित है, इसलिए जिसे हम सुख दुःख कहते हैं, उसके लिए उसका कोई अस्तित्त्व नहीं रहेगा। प्रज्ञान चेतना का सार्वभौम आनन्द भौतिक, जैविक तथा मानसिक सभी स्तरों पर अभिव्यक्त होने लगेगा क्योंकि उस अवस्था में प्रज्ञानपुरुष का शरीर अपने पृथक् भौतिक नियमों द्वारा संचालित न होकर आध्यात्म का एक अंग बन जायेगा, अर्थात शरीर का पूर्ण आध्यात्मीकरण हो जायेगा।

गीता में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि स्थित प्रज्ञ की अवस्था को प्राप्त हो जाने पर मनुष्य शुभ और अशुभ की परवाह नहीं करता। वह न तो किसी से प्रेम करता है और न ही किसी से द्वेष ही करता है। वह न तो किसी का प्रशंसक होता है और न किसी का निन्दक ही। गीता के अध्याय दो में कहा गया हैं कि ''जो पुरुष सर्वत्र स्नेह रहित हुआ शुभ या अशुभ वस्तु को प्राप्त होकर न प्रसन्न होता है और न द्वेष करता है, उसकी बुद्धि स्थिर है।'' ऐसी ही धारणा श्री अरविन्द ने प्रज्ञान पुरुष के सम्बन्ध में व्यक्त करते हुए कहा है कि प्रज्ञान पुरुष के लिए चूँकि यह संसार आत्मा में आत्मा के लिए आत्मा की प्राप्ति है, इसलिए सभी कर्म शुभ अशुभ से परे हैं। मात्र आत्मकेन्द्रित ही हुआ करते हैं। अतिमानसिक प्रज्ञान पुरुष के सभी कर्म आत्मा से ही उद्भूत होते हैं तथा आत्मा के लिए ही संचालित होते हैं। अतः प्रज्ञान पुरुष बाह्य सुख–दुःख, शुभ–अशुभ की धारणाओं से पूर्णतया अप्रभावित हुआ करता है।

स्थितप्रज्ञ एवं अतिमानस में वैषम्य

श्री अरविन्द अतिमानसिक मानव को प्रज्ञान पुरुष की संज्ञा देते है। श्री अरविन्द के प्रज्ञान पुरुष का विवरण अधूरा ही रह जाऐगा, यदि अतिमानस की तुलना गीता के स्थितप्रज्ञ से न की जाए। तो प्रथम दृष्ट्या दोनों भाव प्रायः एक जैसे ही दिखाई देते हैं। स्थितप्रज्ञ का विवरण प्रायः उन्हीं रूपों में किया जाता है, जिन रूपों में श्री अरविन्द ने प्रज्ञानपुरुष को समझने की चेष्टा की है। सामान्यतः स्थितप्रज्ञ से उस आत्मा का बोध होता है, जो शरीर में रहते हुए शरीर एवं दुःख के बन्धन से मुक्त हो। वह एक प्रकार से दो संसारों का निवासी बन जाता है। अब भी वह शरीरधारी है, अतः जगत् का वासी है, किन्तु वह मुक्त हो जाता है। वह परमात्मा के क्षेत्र का निवासी बन चुका है। ऊपर

दिया हुआ प्रश्न इसलिए उठता है कि प्रज्ञानपुरुष पर भी यह विवरण अध्यारोपित हो सकता है। यह भी पूर्ण आध्यात्मिकता के स्तर को पा चुका है किन्तु अभी भी वह भौतिक, जैविक, मानसिक जगत् में ही है।

श्री अरविन्द के विचारों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ये दोनों विचार पूर्णतया एक नहीं हैं। एक प्रकार से श्री अरविन्द के प्रज्ञानपुरुष की अवधारणा स्थितप्रज्ञ की अवधारणा से बहुत अधिक समृद्ध अवधारणा है। ऐसा कहने का आधार तो यही है कि स्थितप्रज्ञ के समान पुरुष का कार्य समाप्त नहीं हुआ है, अभी उसे उच्चतर प्रकाश को, अपनी अतिमानसिक चेतना के आधार पर, विकास प्रक्रिया में अवतरित कराने के लिए योगदान देना है। स्थितप्रज्ञ तो शरीर में तभी तक स्थित है, जब तक कर्म के प्रभाव में उसका शरीर चल रहा है। जब कर्म का प्रभाव समाप्त हो जाता है, तो बन्धन का प्रभाव भी समाप्त हो जाता है, और तब आत्मा पूर्णतया मुक्त (विदेहमुक्त) हो जाता है। अब वह पूर्ण मोक्ष पा लेता है तथा जन्म, पुनर्जन्म के चक्कर से अन्तिम रूप से मुक्त हो जाता है, किन्तु प्रज्ञानपुरुष अतिमानसिक रूपान्तरण के पश्चात् इस प्रकार सर्वथा अलग नहीं हो जाता। इस प्रकार अतिमानस सृष्टि का आधार है, अतः प्रज्ञान पुरुष भी अतिमानस की सर्जनात्मक शक्ति का अंग बन जाता है। अब वह अन्य के प्रज्ञान पुरुष बनने में तथा ब्रह्मण्ड में दिव्य जीवन के अवतरण में अपना योगदान देता है।

यहाँ श्री अरविन्द के अतिमानसिक मानव और गीता के स्थितप्रज्ञ में क्या भेद दृष्टिगोचर होता है, उसका दार्शनिक विवेचन इस प्रकार है–

(1) स्थितप्रज्ञ का अनुभव पूर्ववत् तथा प्रज्ञानपुरुष का अनुभव पूर्णतया नवीन होता है–

सर्व–प्रथम हमें यह याद रखना चाहिए कि प्रज्ञान पुरुष स्थितप्रज्ञ के समान प्रारब्ध कर्म के कारण संसार में निर्विकार होकर पड़ा नहीं रहता। प्रज्ञान पुरुष के शरीर, मन, इन्द्रियाँ आदि शारीरिक जैविक या मानसिक नियमों से नियन्त्रित न होकर आध्यात्मिक नियमों से संचालित होते हैं। इसलिए स्थितप्रज्ञ की भाँति मन, शरीर आदि के प्रभावों से मुक्त होना, प्रज्ञान पुरुष के लिए कोई बड़ी बात नहीं है। वस्तुतः स्थितप्रज्ञ की यह अभावात्मक उपलब्धि, अर्थात् शरीर, इन्द्रियाँ तथा मन अपने–अपने काम करेंगें, पर स्थितप्रज्ञ उनसे अप्रभावित रहेगा,

प्रज्ञान पुरुष के लिए महत्त्वहीन है। प्रज्ञान पुरुष का शरीर, इन्द्रियाँ अथवा मन पूर्ण आध्यात्मिक नियन्त्रण से भावात्मक पक्ष में, नई दिशाओं में, नवीन विकास की ओर संचालित होता है। ऐसा कोई संभावना स्थितप्रज्ञ के लिए नहीं की जाती है। स्थितप्रज्ञ का शरीर पहले की ही तरह भौतिक नियमों से ही कार्य करता है, केवल उसमें यह ज्ञान हो जाता है कि यह सब कुछ ब्रह्म में ही हो रहा है। यहाँ पर आचार्य शंकर ''गीता भाष्य'' में कहते हैं कि जिस प्रकार चक्षु के दोष से जब कोई व्यक्ति एक चन्द्रमा के स्थान पर दो चन्द्रमा देखता है और इसका ज्ञान हो जाने पर भी, कि चन्द्रमा एक ही है वह अपनी दृष्टि को बदल नहीं सकता। ठीक उसी प्रकार स्थितप्रज्ञ ब्रह्म ज्ञान के बावजूद भी इस नाम रूप संसार को पहले जैसा ही अनुभव करता है, केवल इसके मिथ्यात्त्व का ज्ञान उसमें हो जाता है, इसके ठीक विपरीत प्रज्ञान पुरुष के सभी अनुभव एक नवीन प्रकार के होते हैं। विभेदता पूर्ण संसार एकीभूत चैतन्य से ओत–प्रोत है। श्री अरविन्द का विचार है कि विभेदों में अभेद विराजमान है, इसका उसे वास्तविक ज्ञान होता है। स्थितप्रज्ञ की भाँति ब्रह्मज्ञान से विभेदों में अभेद का अनुमान मात्र वह नहीं करता, वह सचमुच में देखता है कि एक ही सच्चिदानन्द का नानात्त्व व्यंजक रूप यह जगत है। इस प्रकार स्थितप्रज्ञ पुरुष की अपेक्षा श्री अरविन्द के अतिमानसिक मानव या प्रज्ञान पुरुष में नवीन ज्ञान का बोध रहता है।

(2) स्थितप्रज्ञ एक मुक्ति पर आधारित है और प्रधानपुरुष सर्वमुक्ति पर–

गीता का स्थितप्रज्ञ सिद्धान्त एक मुक्ति के सिद्धान्त पर आधारित है जबकि श्री अरविन्द सर्वमुक्ति का सिद्धान्त प्रतिपादित करते हैं। जीवित अवस्था में ब्रह्मानन्द प्राप्त साधक को तो जीवन मुक्त कहते हैं। अहंकार, मन की आसक्ति, स्पृहा और कामना से रहित होकर अचल, भाव से परमात्मा के स्वरूप में स्थित हो जाता है, वह भी ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार निर्विकार और निश्चल भाव से परमात्मा के स्वरूप में नित्य निमग्न रहना ही उस स्थित को प्राप्त होना है, गीता की यह व्याख्या केवल साधना के द्वारा एक मुक्ति को ही प्रमाणित करती है, जबकि श्री अरविन्द की प्रज्ञान चेतना की धारणा पूर्ण रूपेण सर्वमुक्ति के सिद्धान्त पर ही आधरित है क्योंकि श्री अरविन्द सैद्धान्तिक रूप से यह स्वीकार करते हैं कि व्यक्तिगत साधना के द्वारा कोई भी प्रज्ञान पुरुष नहीं बन सकता है। अपने विकासवादी सिद्धान्त में श्री अरविन्द

यह मानते हैं कि विकास की प्रक्रिया में उन्नयन, प्रसरण और एकीकरण का क्रम चलता रहता है, और यह तब तक गतिशील रहता है, जब तक कि सबका विकास न हो जाय। इसके साथ ही साथ श्री अरविन्द विकास के क्रम में त्रयात्मक परिवर्तन को भी स्वीकार करते हैं। त्रयात्मक परिवर्तन में चैत्यिक परिवर्तन, आध्यात्मिक परिवर्तन एवं अतिमानसिक परिवर्तन के जिस क्रम को श्री अरविन्द ने स्वीकार किया है, उसमें उन्होंने यह प्रमाणित किया है कि अतिमानस के शुद्ध ज्ञान को प्राप्त कर लेने पर विकास का क्रम चलता रहता है, जब तक कि सबका विकास न हो जाय।

यह सिद्धान्त स्पष्ट रूप से सर्वमुक्ति को प्रमाणित करता है, क्योंकि श्री अरविन्द का विकास से तात्पर्य मुक्ति ही है। यहाँ श्री अरविन्द की धारणा स्थितप्रज्ञ की धारणा से पूर्णतया भिन्न है, क्योंकि श्री अरविन्द यह भी स्वीकार करते है कि 'सर्वमुक्ति के बिना वैयक्तिक मुक्ति अपूर्ण रह जाती है।' वैयक्तिक मुक्ति चाहे कितनी महान क्यों न हो फिर भी वह अहं भावना और व्यक्तिगत शुभ पर ही आश्रित है। इसलिए हमें उसके परे जाना है। 'अहं' के पूर्ण परिहार के लिए हमें व्यक्तिगत मुक्ति की वासना से परे उठना आवश्यक है।

(3) स्थितप्रज्ञ की अवस्था विदेहमुक्ति की पूर्वावस्था है, जबकि प्रज्ञान पुरुष का आगे विकास होता है :–

गीता 'शांकर भाष्य' के अनुसार स्थित प्रज्ञ की अवस्था विदेह मुक्ति की पूर्वावस्था है। प्रारम्भिक कर्मो के क्षय के लिए स्थितप्रज्ञ देह धारण किये रहता है। देहावसान के बाद वह ब्रह्मलीन होकर सारूप्य मुक्ति को प्राप्त करता है। अतः गीता की दृष्टि से स्थितप्रज्ञ की अवस्था मनुष्य के चरमोत्कर्ष एवं परिपूर्णता की स्थिति है। इसके आगे विकास की कोई संभावना नहीं रहती है, परन्तु श्री अरविन्द स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि अतिमानसिक स्तर को प्राप्त करने के बाद भी विकास की प्रक्रिया समाप्त नहीं हो जायेगी, ''प्रज्ञानपुरुषों की जाति तारतम्य से और भी बढ़ती रहेगी, मानो किसी उज्ज्वल सोपान के कदमों पर चढ़ती रहेगी।'' श्री अरविन्द की यह स्पष्ट घोषणा है कि जब तक अतिमानस का अवतरण नहीं होगा, तब तक विकास की प्रक्रिया निश्चेतना से अतिचेतन, अज्ञान से ज्ञान की ओर चलती रहेगी, परन्तु जब अतिमानस के शुद्ध ज्ञान को हम प्राप्त कर लेंगे, तब विकास आत्म चरितार्थ ज्ञान में फिर भी चलता रहेगा। इससे स्पष्ट होता है कि प्रज्ञान पुरुष स्थितप्रज्ञ की भाँति यात्रा के अन्तिम छोर

तक पहुँचने वाला कोई पथिक नहीं है, जिसके लिए परम् निष्क्रियता, जीवनहीन शान्ति और स्पन्दनहीन विश्राम ही एकमात्र आकर्षण हो। वह तो आत्मचरितार्थ ज्ञान को लिए हुए ब्रह्मानन्द का रसास्वादन तथा उपयोग अनेक प्रकार से करता रहता है। वह अपने में तथा प्रत्येक में उसी आनन्द का अनुभव करता है।

(4) प्रज्ञान पुरुष की चेतना दूसरों में संक्रमित होती है लेकिन स्थित प्रज्ञ की नहीं :–

प्रज्ञान पुरुष और स्थितप्रज्ञ में चौथा भेद यह है कि जब अतिमानस का अवतरण होता है और आरम्भ में अल्पसंख्यक प्रधानपुरुषों का अविर्भाव संसार में होता है, तब उनकी दिव्य चेतना दूसरों में स्वतः संचरित हो जाती है, ऐसा स्थितप्रज्ञ प्राप्त पुरुष में नहीं होता। श्री अरविन्द कहते हैं कि अन्य मनुष्यों में उनकी आध्यात्मिकता का विस्फोट जैसा होता है और इस तरह प्रज्ञान पुरुष अपने अनुरूप आत्माओं को उत्पन्न करते हैं, परन्तु जहाँ तक स्थितप्रज्ञ का प्रश्न है, ऐसा उल्लेख कहीं नहीं मिलता। इसमें संदेह नहीं कि भारतीय आध्यात्म शास्त्र में साधुओं की संगति की महिमा का उल्लेख सर्वत्र मिलता है।

(5) प्रज्ञान पुरुष की इच्छा, संकल्प व क्रिया सबके साथ संगतिपूर्ण लेकिन स्थित प्रज्ञ की नहीं :–

इस प्रसंग में हम यह भी कह सकते हैं कि जहाँ प्रधान पुरुष की इच्छा संकल्प तथा क्रिया समग्र जीवों के साथ संगतिपूर्ण होती है, वहाँ स्थितप्रज्ञ के सम्बन्ध में यह बात नहीं कहीं जा सकती। वस्तुतः सामुदायिक जीवन के साथ इच्छा, संकल्प या क्रिया के माध्यम से संगति का प्रश्न स्थितप्रज्ञ के लिए उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि आचार्य शंकर 'गीताभाष्य' में कहते हैं कि 'संसार में रहता हुआ भी संसार के बाहर रहता है।'' स्थित प्रज्ञ की अवस्था पूर्ण निष्कर्मण्यता की अवस्था है। जहाँ तक प्रज्ञान पुरुष का सम्बन्ध है, यद्यपि सांसारिक दृष्टि से उसकी कोई इच्छा या आवश्यकता नहीं रहती, फिर भी आत्मचरितार्थ होकर जीवन के हर क्षेत्र में आत्मा के लिए आत्मा में आत्मा का अन्वेषण करना उसका संकल्प बन जायेगा और यही उसका कार्य रह जायेगा। इसके विपरीत स्थितप्रज्ञ मन की समस्त कामनाओं का त्याग कर देता है, फिर

अन्य किसी के साथ संगति पूर्ण होने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता, क्योंकि कामना का नाम ही स्पृहा है और न मिलने की प्रकट कामना का नाम इच्छा है, जब बुद्धि के साथ–साथ मन परमात्मा में स्थिर हो जाता है तो वासना स्पृहा, इच्छा और तृष्णा का सर्वथा अभाव हो जाता है। इस अवस्था में स्थित प्रज्ञ का निर्विकार होना ही आवश्यक है। अन्य किसी के साथ संगति पूर्ण होना नहीं, चूँकि श्री अरविन्द का दृष्टिकोण सर्वमुक्ति पर आधारित है, इसलिए प्रज्ञान पुरुष की समस्त क्रियाओं का सब के साथ संगति पूर्ण होना आवश्यक है। स्थितप्रज्ञ के लिए अन्य किसी के प्रति संगति पूर्ण होना इसलिए आवश्यक नहीं, क्योंकि स्थितप्रज्ञ का सिद्धान्त सर्वमुक्ति नहीं एक मुक्ति पर आधारित है।

(6) स्थितप्रज्ञ और प्रज्ञान पुरुष में अगला भेद है कि प्रज्ञान पुरुष की वैयक्तिकता स्थितप्रज्ञ के समान अस्थाई नहीं

स्थितप्रज्ञ कर्म, शरीर के कारण केवल तब तक जीवित रहता है, जब तक उसे विदेह मुक्ति न मिल जावे। विदेह मुक्ति के पश्चात् उसकी वैयक्तिकता का पूर्ण नाश हो जाता है और वह ब्रह्म में एकाकार हो जाता है, जबकि प्रज्ञान पुरुष की वैयक्तिकता स्थितप्रज्ञ की भांति अस्थाई नहीं है। वह अतिचेतन दशा में स्थाई रूप से इस शरीर में अमरत्त्व को प्राप्त कर जीवित रहता है।

(7) स्थितप्रज्ञ आध्यात्मिक प्रगति का अन्त है परन्तु प्रज्ञान पुरुष नहीं

स्थितप्रज्ञ अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त कर निष्काम जीवन यापन करता है। उसे प्राप्तव्य की प्राप्ति हो गयी, अब उसे कुछ करना शेष नहीं। प्रज्ञान पुरुष विकास का अंत नहीं। प्रज्ञान पुरुष की उत्पति या निर्माण अतिमानस स्तर पर होता है। यह सभी मानसिक दुर्बलताओं का अंत है परन्तु विकास की गति आगे भी है। वह अपनी मानसिक वासनाओं पर विजय प्राप्त कर अपनी इन्द्रियों तथा मनको विकास की नयी दिशा में लगाता है। अतः इसमें निष्कामना अवश्य है, परन्तु स्थितप्रज्ञ के समान निष्क्रियता नहीं।

श्री अरविन्द के अनुसार अतिमानसिक मनुष्यों का समाज ऐसे गिने चुने व्यक्तियों का समाज नहीं होगा, जिन्होंने केवल ज्ञान को प्राप्त कर लिया है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रज्ञान पुरुषों के समाज को हम गलती से जीवनमुक्त ब्रह्मज्ञानी के समाज के रूप में न समझे। श्री अरविन्द के दर्शन में अतिमानसिक विकास की मुख्य विशेषता यह है कि जब कोई एक व्यक्ति लक्ष्य

तक पहुँच जाता है, तो इसका अर्थ यह होता है कि वह अकेला नहीं पहुँच सकता। श्री अरविन्द अपनी पुस्तक दिव्य जीवन में कहते हैं, ''मुक्तात्मा अपने एकीभूत प्रत्यक्ष को समस्तर तथा ऊर्ध्वाधर दोंनों दिशाओं से प्रसारित करता है। विश्वगत बहु के साथ जब तक उसका एकत्त्व नहीं हो जाता, विश्वातीत एक के साथ भी उसका एकत्त्व तब तक अपूर्ण रहता है।''

'स्थित प्रज्ञ' एवं 'अतिमानसिक' का तुलनात्मक विश्लेषण

श्री अरविन्द एवं गीता दोंनों ही दार्शनिक दृष्टि से चेतना की पराकाष्ठा को स्वीकार किया है। गीता में उस पराकाष्ठा को स्थित प्रज्ञ की संज्ञा दी तथा श्री अरविन्द ने इसे अतिमानसिक मानस या प्रज्ञान पुरूष की संज्ञा दी।

तुलनात्मक विवेचन

(1) 'प्रज्ञ' चेतना के पूर्ण अवस्थित होने की अवस्था है। इस स्थिति में चेतना पूर्ण तथा आत्म केन्द्रित हो जाती है, जबकि प्रज्ञान पुरूष में निश्चेतना अतिचेतना में रूपान्तरित हो जाती है तथा इस अति चेतना से युक्त मानव को ही प्रज्ञान पुरूष की संज्ञा दी जाती है। यहाँ यह विचारणीय विषय बनता है कि प्रज्ञा का अपने मौलिक स्वरूप में अवस्थित होना अतिचेतन है या नहीं। दार्शनिक दृष्टि से चेतना की मौलिक अवस्था वस्तुतः अतिचेतना ही है। अतिमानस की विवेचना में श्री अरविन्द भी आरोहण तथा अवरोहण दोंनों ही प्रकार के विकासों को स्वीकार करते हैं। अपने स्वरूप में अवस्थित होने के लिए चेतना स्वतः आरोहण के द्वारा अतिचेतना में परिवर्तित हो जाती है। इस प्रकार यदि प्रज्ञान पुरूष निश्चेतना का अतिचेतना में रूपान्तरण है तो स्थित प्रज्ञ भी सम्पूर्ण कामनाओं के त्याग के द्वारा अपने प्राकृत स्वरूप में अवस्थित होने के कारण अतिचेतना ही है।

(2) गीता में इस तथ्य को प्रभावित किया गया है कि राग और द्वेष से मुक्त पुरुष का ही बुद्धि स्थिर है अर्थात् जिसका राग, भय और क्रोध नष्ट हो गया हो वही स्थिर बद्धि कहा जाता है। ऐसा पुरूष अवश्यमेव वस्तुतः ब्रहाज्ञानी ही हो सकता है क्योंकि चेतना का निर्विकार स्वरूप ब्रह्मज्ञानी का ही स्वरूप है। वेदान्त दर्शन के अनुसार ''ब्रह्माविद् ब्रह्मैव भवति'' अर्थात् ब्रह्म को जानने वाला स्वयं ब्रह्म हो जता है। ऐसी ही धारणा श्री अरविन्द प्रज्ञानपुरूष के सम्बन्ध में व्यक्त करते हैं क्योंकि प्रज्ञान पुरूष देह, प्राण एवं मन का पूर्ण

चैत्यीकरण है। यह पूर्ण चैत्यीकरण भी ब्रह्मज्ञान की ही अवस्था है। इस प्रकार यह प्रज्ञान पुरूष तथा स्थित प्रज्ञ दोंनों के लिए सभी उद्देश्य एवं उस आत्मा की ओर निर्देशित होंगें। उनके लिए यह संसार आत्मा में आत्मा के लिए आत्मा की प्राप्ति है। सभी उद्देश्य या कर्म आत्मा से ही उद्भूत होते हैं तथा आत्मा के लिए संचालित होते हैं। यहाँ दोंनों ही विचारकों ने एक सार्वभौम चेतना को ही प्रभावित किया, किन्तु यह सार्वभौतिकता श्री अरविन्द के दर्शन में अधिक स्पष्ट है, क्योंकि श्री अरविन्द सर्वमुक्ति के सिद्धान्त को ही प्रतिपादित करते हैं जबकि स्थितप्रज्ञ का सिद्धान्तएक मुक्ति पर आधारित है।

(3) गीता में यह स्वीकार किया है कि बुद्धि के नाश होने से पुरूष अपनी स्थिति से गिर जाता है ''क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृति विभ्रमः। स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाषात्प्रणश्यति'' अर्थात क्रोध से अत्यन्त मूढभाव उत्पन्न हो जाता है, मूढभाव से स्मृति में भ्रम हो जाता है, स्मृति में भ्रम हो जाने से बुद्धि अर्थात् ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है, और बुद्धि का नाश हो जाने से वह व्यक्ति अपनी स्थिति से गिर जाता है। यहाँ इसका भाव यह है कि ममता, आसक्ति और कामना का सर्वथा त्याग करके मन और इन्द्रियों को संयमित कर बुद्धि को परमात्मा के स्वरूप में स्थित करना आवश्यक है। यहाँ साधक के लिए मन और इन्द्रियों को वश में करना जहाँ आवश्यक माना गया है। वहीं मत्पर के द्वारा परमात्मा में पूर्ण समर्पण की भावना को भी स्वीकार किया गया है। समर्पण की यह अनुभूति ही चित्शक्ति का परम् प्रकाश है। ऐसी ही धारणा श्री अरविन्द ने अतिमानस मानव का शरीर, प्राण, मन अति चेतना से ओत–प्रोत होता है। प्रज्ञान पुरूष की यह अवस्था श्री रामकृष्ण परमहंस के विज्ञानी की अवस्था है। विज्ञानी ज्ञान और अज्ञान के परे होता है। अतिमानसिक स्तर पर मानव सत्य स्वरूप बन जाता है।

(4) गीता में स्थितप्रज्ञ के लक्षण को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि स्थितप्रज्ञ की अवस्था को प्राप्त कर लेने पर वह सुख और दुःख के प्रभाव से मुक्त रहता है। प्रज्ञानपुरूष जब अपनी अवस्था को प्राप्त हो जाता है, तब सांसारिक सुख दुःख का प्रभाव उस पर नहीं पड़ता है क्योंकि वह भौतिक, जैविक और मानसिक नियमों से संचालित न होकर अतिमानसिक अथवा आध्यात्मिक नियमों से संचालित होता है। अतः उसके ऊपर सांसारिक सुख–दुःख का प्रभाव कदापि नहीं पड़ सकता।

(5) अतिमानसिक ज्ञान से युक्त प्रज्ञान पुरुष स्थितप्रज्ञ के समान प्रारब्ध कर्म के कारण संसार में निर्विकार होकर पड़ा नहीं रहता। प्रज्ञानपुरुष के शरीर, मन, इन्द्रियों आदि शारीरिक, जैविक या मानसिक नियमों से नियन्त्रित न होकर आध्यात्मिक नियमों से संचालित होते हैं। इसलिए स्थितप्रज्ञ की तरह शरीर, मन आदि कि प्रभावों से मुक्त होना प्रज्ञानपुरुष के लिए कोई बड़ी बात नहीं है। वस्तुतः स्थितप्रज्ञ की यह अभावात्मक उपलब्धि, अर्थात् शरीर इन्द्रियों अथवा मन अपने अपने काम करेंगें, पर स्थितप्रज्ञ उनसे अप्रभावित ही रहेगा। यह प्रज्ञानपुरुष के लिए महत्त्वहीन है।

(6) श्री अरविन्द प्रज्ञानपुरुषों के आचरण और व्यकितत्त्व की चर्चा करते हुए कहते हैं कि प्रज्ञानपुरुष व्यक्तिपूर्ण होंगे। परन्तु इनका व्यक्तिगत सीमा का अतिक्रमण कर व्यापक होगा। व्यक्तित्त्व तो अन्य लोगों के व्यक्तित्त्व के समान ही होगा, परन्तु उनकी भावनाएँ होंगी। वे अहंकार रहित व्यक्ति होंगे तथा उनके आचरण में 'मै' और 'मेरा' का भाव नहीं होगा। व्यक्ति का अहंकार ही व्यक्ति को व्यक्तिगत बना देता है। अहंकार पर विजय प्राप्त करने वाले व्यक्ति का आचरण सर्वहित या लोकहित में होगा। इसीलिए श्री अरविन्द कहते हैं कि प्रज्ञानपुरुष के कार्य सर्वहित में होगें जबकि गीता में स्थितप्रज्ञ का आचरण अपने लिए होता है।

(7) यहाँ एक आवश्यक प्रश्न उत्पन्न होता है कि जब प्रज्ञान पुरुष व्यक्तित्त्वपूर्ण होंगे तो शरीर के प्रति उनका दृष्टिकोण क्या होगा? श्री अरविन्द के अनुसार प्रज्ञान पुरुष शरीर के दास नहीं वरन् शरीर के स्वामी होंगे। शरीर उनके नियंत्रण में होगा। वे शरीर के नियंत्रण से मुक्त होगें। उन्हें शरीर अन्य कष्ट या अभाव का अनुभव नहीं होगा, इसका कारण यह है कि उनका शरीर इतना व्यापक होगा कि उनमें व्यक्तिगत कष्ट या अभाव का कोई महत्त्व ही नहीं होगा। ऐसे प्रज्ञान पुरुष असाधारण मानव या अतिमानव की श्रेणी में आते हैं जो अपने सुख से सुखी और दुख से दुखी नहीं होते। सुख–दुख की व्यक्तिगत अनुभूति तो मानस स्तर पर है। अतिमानस तो आत्मोत्सर्ग की चेतना है इसका संचालन आध्यात्मिक नियमों के अनुकूल, सर्वात्मा के लिए होगा।

इस विवरण से स्पष्ट होता है कि प्रज्ञानपुरुष आध्यात्मिक अतिमानव है जो देह सहित भी है देह रहित भी है, धरती पर जीवन यापन करते हैं। ऐसे देह सहित देवों को 'मनुष्य देव' कहा जा सकता है। श्री अरविन्द स्पष्ट रूप

से कहते हैं कि इनका शरीर ही मनुष्य का होता है, परन्तु इनका ज्ञान देवता के समान है। ऐसे ही धरती की विभूतियों को भारतीय दर्शन में जीवन मुक्त, स्थितप्रज्ञ आदि कहा गया है, क्योंकि ये जीवन के रहते ही मुक्ति का आनन्द प्राप्त करते हैं। प्रश्न यह है कि जीवनमुक्त, स्थितप्रज्ञ और प्रज्ञानपुरुष समान हैं या असमान? श्री अरविन्द की दृष्टि में ये समान अवश्य प्रतीत होते हैं, परन्तु असमान भी हैं। उपरोक्त विवेचन द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि स्थितप्रज्ञ को तो प्रज्ञानपुरुष कहा जा सकता है, परन्तु प्रज्ञानपुरुष स्थितप्रज्ञ के अवस्थान के साथ और भी कुछ है, इससे प्रमाणित हो जाता है, इनमें तथ्यात्मक ऐक्य के साथ ही क्रियात्मक और गुणात्मक विभेद भी दृष्टिगोचर होते हैं।

सन्दर्भ

1. *बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, पृ० 246*
2. *वही, पृ० 246*
3. *वही, पृ० 240*
4. *वही, पृ० 246*
5. *वही, पृ० 240*
6. *श्री अरविन्द दी लाइफ डिवाइन, अरविन्द प्रकाशन, पृ० 838*
7. *प्रो० बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, पृ० 245*
8. *अनिलवरण राय, दि अरविन्द एण्ड न्यूजएज, पृ० 33*
9. *श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 50*
10. *श्री अरविन्द दर्शन, दि लाइफ डिवाइन, पृ० 735*
11. *श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 58*
12. *हृदयनारायण मिश्र, भारतीय दर्शन की समस्यायें, पृ० 212*
13. *श्री अरविन्द, दी लाइफ डिवाइन, पृ० 864*
14. *डॉ० भट्टाचार्य, श्री अरविन्द दर्शन, पृ० 192*
15. *वही, पृ० 92*
16. *वही, पृ० 82*
17. *श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 56*
18. *श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 70 (शाकरभाष्य)*
19. *बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, पृ० 260*

20. गीता तत्त्व विवेचनी टीका अध्याय से पृ० 119
21. डॉ० भट्टाचार्य, श्री अरविन्द दर्शन, पृ० 129
22. श्री अरविन्द, दि सिन्थेसिस ऑफ योग, पृ० 273
23. डॉ० भट्टाचार्य, श्री अरविन्द दर्शन, पृ० 226
24. श्री अरविन्द, दि लाइफ डिवाइन, पृ० 1162
25. श्री अरविन्द, दि ह्यूमन साइकिल, पृ० 333
26. डॉ० भट्टाचार्य, श्री अरविन्द दर्शन, पृ० 136
27. गीता, तत्त्व विवेचनी टीका, जयदयाल गोयन्दका, पृ० 1

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 65-70

जाति और राजनीति के बीच अन्तर्सम्बन्ध

*डॉ० सुरेन्द्र नारायण**

सारांश

भारत में राजनीतिक आधुनिकीकरण के प्रारम्भ होने के पश्चात् यह धारणा विकसित हुई कि आधुनिक राजनीतिक संस्थाये और लोकतांत्रिक मूल्यों को अपनाने के फलस्वरूप परम्परागत संस्था जाति कमजोर हो जायेगी। परन्तु स्वतंत्र भारत में राजनीतिक रूप से जाति का प्रभाव निरन्तर बढ़ता गया। वयस्क मताधिकार ने इस महत्त्व को और बढ़ाया जाति के खान–पान प्रतिबंध और अन्तर्विवाही स्वरूप में भले ही पहले की अपेक्षा शिथिलता आई है परन्तु शिक्षा व संचार के प्रभाव से जाति कमजोर होने के स्थान पर और अधिक संगठित हुई है। परिणामस्वरूप राजनीतिक दलों में जाति पहचान को प्रमुख रूप से ध्यान में रखा जा रहा है। जातिगत जनगणना स्वतंत्रता के पूर्व हुई थी परन्तु राजनीतिक दलों को आज भी महत्त्वपूर्ण लगती है। ग्राम प्रधाान के चुनाव से लोकसभा चुनाव तक प्रत्येक दल जातिगत समीकरण की प्रभाविता को स्वीकार कर रहा है तथा उससे तालमेल बैठा रहा है।

उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य जाति व राजनीतिक के विभिन्न पक्षों का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर समकालीन स्थिति को स्पष्ट करना है।

भूमिका

जाति प्रथा किसी न किसी रूप में संसार के हर कोने में पायी जाती है, पर एक गंभीर सामाजिक कुरीति के रूप में यह हिंदू समाज की ही विशेषता है। वैसे इस्लाम और ईसाई समाज भी इसके प्रभाव से अछूते नहीं रह सके हैं। यह एक अति प्राचीन व्यवस्था रही है। इसका अभिप्राय पेशे के आधार पर समाज को कई वर्गों में बाँट देना है। सामान्यतः यह माना जाता है कि जाति प्रथा की उत्पत्ति वैदिक काल में हुई। ब्राह्मण धार्मिक और वैदिक कार्यों का संपादन करते थे। क्षत्रियों का कार्य देश की रक्षा करना और शासन प्रबंध करना था। वैश्य कृषि और वाणिज्य संभालते थे तथा शूद्रों को अन्य तीन वर्णों की चाकरी करनी पड़ती थी । शुरू–शुरू में जाति प्रथा के बंधन कठोर न थे और वह जन्म पर नहीं, अपितु कर्म पर आधारित थे। बाद में जाति प्रथा में कठोरता आती गयी वह पूरी तरह जन्म पर आधारित हो गयी तथा एक जाति से दूसरी जाति में अंतःक्रिया असंभव हो गयी। अपने मौलिक रूप में जाति

* *सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, बुन्देखण्ड महाविद्यालय, झाँसी*

प्रथा उपयोगी थी। चूँकि वह श्रम विभाजन के सिद्धांत पर आधारित थी. अतः उसने आर्थिक क्षेत्र मे निपुणता के तत्त्व का समावेश किया। एक जाति का पेशा उसी जाति में होता था, बेटा बाप से अपना पुश्तैनी पेशा सीखता था और प्रायः उसी को अपनी आजीविका के साधन के रूप में अपना लेता था। इस प्रथा ने एक जाति और बिरादरी के लोगों में भाई–चारे की भावना को बढ़ाया। एक जाति के लोग एक–दूसरे से भलीभाँति परिचित होते थे तथा एक–दूसरे के सुख–दुख में काम आते थे।

रजनी कोठारी ने अपनी पुस्तक 'कास्ट इन इण्डियन पॉलिटिक्स' (Caste in Indian Politics) में भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका का विस्तृत विश्लेषण किया है। उनका मत है कि अक्सर यह प्रश्न पूछा जाता है कि क्या भारत में जाति प्रथा खत्म हो रही है? इस प्रश्न के पीछे उनका मंतब्य यह है कि कि मानो जाति और राजनीति परस्पर विरोधी है। ज्यादा सही सवाल यह होगा कि जाति प्रथा पर राजनीति का क्या प्रभाव पड़ रहा है? क्या जाति सामाज में राजनीतिक रूप ले रही है? जो लोग राजनीति में जातिवाद की शिकायत करते हैं वो न तो राजनीति के स्वरूप की समझ पाये है और न जाति के स्वरूप को। भारत की जनता जातियों के आधार पर संगठित है। ऐसे में चाहते हुए भी राजनीति को जाति संस्था का उपयोग करना ही पड़ेगा। राजनीति में जातिवाद का अर्थ जाति का राजनीतिकरण है। रजनी कोठारी के शब्दों में जाति को अपने दायरे में खींचकर राजनीति उसे अपने काम में लेने का प्रयत्न करती है। दूसरी ओर राजनीति द्वारा जाति या बिरादरी को देश की राजनीतिक व्यवस्था में भाग लेने का मौका मिलता है। राजनीतिक नेता सत्ता प्राप्त करने के लिए जातीय संगठनों का उपयोग करते है और जातियों के रूप में उनको बना–बनाया संगठन मिल जाता है, जिससे राजनीतिक संगठन में आसानी होती है। जाति व्यवस्था और राजनीति में अंतःक्रिया को तीन रूपों में देखा जा सकता है –

(i) जाति व्यवस्था का लौकिक रूप – जाति व्यवस्था की कुछ बातों पर सबका ध्यान गया है जैसे जाति के अंदर विवाह, छुआछुत और रीति–रिवाजों के द्वारा जाति को पृथक् इकाई के रूप में कायम रखने का प्रयत्न। लेकिन इस बात की ओर बहुत ही कम लोगों का ध्यान गया है कि जातियों में अपनी प्रतिद्वन्दिता गुटबंदी रहती है। प्रत्येक जाति प्रतिष्ठा और सत्ता की प्राप्ति के लिए संघर्षरत रहती है। जाति व्यवस्था के इस लौकिक पक्ष के दो रूप थे। एक शासकीय रूप जाति की और गाँव की पंचायत और दूसरा रूप राजनीतिक था। जाति की आंतरिक गुटबंदी और अन्य जातियों से गठजोड़ और

प्रतिद्वन्दिता। पहले इन जातियों का संबंध या गाँव की पंचायत और राजा या जमीदार से रहता था। अब जातीय पंचायत के स्थान पर विधान सभाएँ और संसद है तथा राजा के स्थान पर राष्ट्रीय सरकार है।

(ii) जाति व्यवस्था का एकीकरण का रूप – जाति का दूसरा रूप एकीकरण का है अर्थात् व्यक्ति को समाज से बांधने का है। जाति प्रथा जन्म के साथ प्रत्येक व्यक्ति का समाज में स्थान नियत कर देती है। जाति के आधार पर ही उस व्यक्ति का व्यवसाय और आर्थिक भूमिका निश्चित हो जाती है। चाहे जितना भी बड़ा व्यक्ति क्यों न हो उसको अपनी जाति से लगाव पैदा हो जाता है। जाति के प्रति उसकी निष्ठा बढ़ने लगती है। यही निष्ठा आगे चलकर बड़ी निष्ठाओं अर्थात लोकतंत्र और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति भी विकसित हो जाती है। इस प्रकार जातियाँ जोड़ने वाली कड़ियाँ वन जाती हैं। लोकतंत्र के अंदर विभिन्न समूहों में शक्ति के लिए प्रतिद्वन्द्विता होती है और विभिन्न जातियों में आपस मे मिल–जुलकर गठजोड़ बनाने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है ताकि वे सत्ता का लाभ प्राप्त कर सके।

(iii) जातिव्यवस्था का चैतन्य रूप – जाति प्रथा का तीसरा रूप चेतना बोध है। कुछ जातियाँ अपने को उच्च समझती है और इस कारण समाज में उनकी विशेष प्रतिष्ठा होती है। इस कारण कुछ निन्न समझी जाने वाली जातियाँ भी अपने को उनके साथ जोड़ने की चेष्टा करती हैं। क्षत्रिय वर्ग के साथ जो प्रतिष्ठा जुड़ी हुई है उसके कारण देश के विभिन्न भागों में अनेक जातियों ने इस वर्ण का दावा किया है। राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थिति में परिवर्तन परिणामस्वरूप जाति विशेष की स्थिति भी बदलती है।

अमरीकी लेखक रूडाल्फ एण्ड रूडाल्फ का मत है कि जाति व्यवस्था ने जातियों के राजनीतिकरण मे सहयोग देकर परम्परावादी व्यवस्था को आधुनिकता में ढालने का कार्य किया है । वे लिखते हैं, 'अपने परिवर्तित रूप में जाति व्यवस्था ने भारत में कृषक समाज में प्रतिनिधिक लोकतन्त्र की सफलता तथा भारतियों की आपसी दूरी कम करके, उन्हें अधिक समान बनाकर समानता के विकाम मे सहायता दी है।''

जाति के राजनीतिकरण की प्रक्रिया

शक्ति और प्रभाव की प्रतिस्पर्धा – ऊँची जातियों तक सीमित रहा भारत का पुराना समाज जब नयी व्यवस्था के सम्पर्क में आने लगा तो सबसे पहले शक्ति और प्रभाव की स्पर्द्धा समाज की प्रतिष्ठित और जमी हुई जातियों तक सीमित रही।

जाति के अंदर की प्रतिस्पर्द्धा गुटबंदी – इस चरण में भिन्न जातियों की प्रतिस्पर्धा के साथ–साथ जाति के अन्दर भी प्रतिस्पर्द्धी गुट बन जाते है। प्रतिद्वंद्वी नेताओं के पीछे गुट बन जाते है।

जाति के बंधन ढीले पड़ना और राजनीति को व्यापक आधार मिलना – तीसरे चरण में एक और राजनीतिक मूल्य की प्रधानता हुई और जाति–पाँति से लगाव कम हुआ, वही दूसरी ओर शिक्षा, नये शिल्प और शहरीकरण के कारण, समाज में परिवर्तन आया। भौतिक उन्नति की नयी धारणाओं का जोर बढ़ा।

भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका

निर्णय प्रकिया में जाति की प्रभावक भूमिका – भारत मे जातियाँ संगठित होकर राजनीतिक और प्रशासनिक निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं। उदाहरणार्थ, संविधान में अनुसूचित जातियों और जन–जातियों के लिए आरक्षण के प्रावधान रखे गये हैं जिनके कारण ये जातियाँ सगठित होकर सरकार पर दबाव डालती हैं कि इन सुविधाओं को और अधिक वर्षों के लिए बढ़ा दिया जाय। अन्य जातियाँ चाहती हैं कि आरक्षण समाप्त किया जाये अथवा इसका आधार आर्थिक स्थिति हो अथवा उन्हें आरक्षित सूची में शामिल किया जाये ताकि वे इसके लाभ से बंचित न रह जायें।

राजनीतिक दलों में जातिगत आधार पर निर्णय – भारत में सभी राजनीतिक दल अपने प्रत्याशियो का चयन करते समय जातिगत आधार पर निर्णय लेते हैं। प्रत्येक दल किसी भी चुनाव क्षेत्र मे प्रत्याशी मनोनीत करते समय जातिगत गणित का अवश्य विश्लेषण करते हैं। 1962 में गुजरात के चुनाव में स्वतन्त्र पार्टी की सफलता का राज उसका क्षत्रिय जाति के समर्थन मे छिपा हुआ था। हरिजन–मुमलमान–ब्राह्मण शक्तिपुंज बनाकर ही 1971 का आम चुनाव कांग्रेस ने जीता था। 1977 मे जनता पार्टी की विजय का कारण उसे मुसलमानों और हरिजनों के साथ उच्च जातियों का प्राप्त समर्थन था। जनवरी 1980 के सप्तम लोकसभा चुनावों में कांग्रेस (इन्दिरा) की विजय का कारण है कि श्रीमती गांधी हरिजनों, ब्राह्मणों और मुसलमानों का जातीय समर्थन जुटाने में सफल हो गयी।' नवम्बर 1989 के लोकसभा चुनावों ने उत्तर प्रदेश बिहार में जनता दल की अपूर्व विजय का एक कारण जाट–राजपूत समर्थन है। उत्तर प्रदेश में बहुजन समाज पार्टी का उदय और आधार कतिपय पिछडी जातियों के समर्थन पर निर्भर है। सभी राजनीतिक दलों में जातीय आधार पर अनेक गुट पाये जाते हैं, जिनमें प्रतिस्पर्धा की भावना विद्यमान रहती है।

जातिगत आधार पर मतदान व्यवहार – भारत में चुनाव अभियान मे जातिवाद को साधन के रूप में अपनाया जाता है और प्रत्याशी जिस निर्वाचन क्षेत्र में चुनाव लड़ रहा है उस निर्वाचन क्षेत्र में जातिवाद की भावना को प्रायः उकसाया जाता है ताकि सम्बन्धित प्रत्याशी की जाति के मतदाताओं का पूर्ण समर्थन प्राप्त किया जा सके। जनवरी 1980 के चुनावों में उत्तर प्रदेश और कुछ बिहार के हिस्सों में लोकदल की सफलता पिछड़ी जातियों की राजनीतिक महत्त्वकांक्षाओं का प्रतीक है। उत्तर प्रदेश के चुनावों में चरण सिंह की सफलता सदैव ही जाट जाति के मतों की एकजुटता पर निर्भर रही है। केरल के चुनावों में साम्यवादी और मार्क्सवादी दलों ने भी वोट जुटाने के लिये सदैव जाति का सहारा लिया है। वर्तमान में उत्तर प्रदेश और बिहार के चुनाव में भी जातिगत समीकरणों का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है।

मन्त्रिमण्डलों के निर्माण में जातिगत प्रतिनिधित्त्व – राजनीतिक जीवन में जातियता का सिद्धान्त इतना गहरा गया है कि राज्यों के मन्त्रिमण्डल में प्रत्येक प्रमुख जाति का मन्त्री होना चाहिए। यह सिद्धान्त प्रान्तों की राजधानियों से ग्राम पंचायतों तक स्वीकृत हो गया कि प्रत्येक स्तर पर प्रधान जाति को प्रतिनिधित्त्व मिलना ही चाहिए। यहाँ तक कि केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में भी हरिजनों, जनजातियों, सिक्खों, मुसलमानों, ब्राह्मणों, जाटों, राजपूतों और कायस्थों को किसी न किसी रूप में स्थान अवश्य दिया जाता है ।

अनेक जातीय संगठन और समुदाय जैसे तमिलनाडु में नाडार जाति संघ, गुजरात में क्षत्रिय महासभा, विहार में कायस्थ सभा आदि राजनीतिक मामलों में रुचि लेने लगते हैं और अपने–अपने संगठित बल के आधार पर राजनीतिक सादेवाजी भी करते हैं। यद्यपि देश की सभी प्रमुख जातियों को इस प्रकार पूर्णतया संगठित नहीं किया जा सका है। मगर जो जातियाँ इम प्रकार संगठित नहीं हो सकी, वे राजनीतिक सौदेबाजी में सफल नहीं रहीं और उनके सदस्यों को अपनी आवाज उठाने के लिए उपद्रव और तोड़–फोड़ का सहारा लेना पडा।

जाति एवं प्रशासन – लोकसभा और विधान सभा के लिए जातिगत आरक्षण की व्यवस्था प्रचलित है केन्द्र एवं राज्यों की सरकारी नौकरियों एवं लिए जातिगत आरक्षण का प्रावधान है। मेडिकल एवं इन्जीनिरिंग में विद्यार्थी की भर्ती हेतु आरक्षण के प्रावधान मौजूद हैं।

प्रत्याशी चुनने की निर्णय प्रक्रिया हो, मतदान व्यवहार हो, मंत्रीमण्डल का निर्णय हो, प्रत्येक जगह वर्तमान में जातिगत दबाव कार्य कर रहे है।

राजनीतिक चेतना ने जातीय चेतना को मजबूत किया है। गठबंधन, महागठबंधन की राजनीति भी जातीय समीकरणों को बनाने की ही राजनीति है। छोटे–छोटे जातिगत दलों के साथ समझौता कर चुनाव लड़े जा रहे हैं और अपने इन्हीं मजबूत समीकरणों के आधार पर विभिन्न दल जीत भी हासिल कर रहे हैं।

संदर्भ

1. *डॉ० सिंह योगेन्द्र – भारतीय परम्पराओं का आधुनिकीकरण, जवाहर पब्लिकेशन नई दिल्ली 2007*
2. *श्रीनिवास एम०एन० – सोशल चेन्ज इन मॉर्डन इण्डिया, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2007*
3. *जौहरी, जे०सी० – रेफ्लेक्शन्स ऑन इण्डियन पॉलिटिक्स, एस० चन्द,*
4. *कश्यप, सुभाष – दल–बदल और राज्यों की राजनीति, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ*
5. *दस्तूर, ए०जे० – दि पैटर्न ऑफ महाराष्ट्र पॉलिटिक्स, इकबाल नारायण (सं०), स्टेट पॉलिटिक्स इन इण्डिया, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1967,*
6. *नारंग, ए०एस० – भारतीय शासन एवं राजनीति, गीतांजलि पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2005,*
7. *रूडोल्फ, लायड – आई० एण्ड एस० हाबर रूडोल्फः दि मॉडर्निटी ऑफ ट्रेडीशन, ओरियंट लांगमैन, 1969*
8. *कोठारी, रजनी – कास्ट इन इण्डियन पालिटिक्स, ओरियट लांगमैन, दिल्ली, 1970*
9. *सईद, एस०एम० – भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, भारत बुक सेन्टर, लखनऊ*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 71-77

उत्तर प्रदेश के मध्यकालीन भक्ति आंदोलन में निर्गुण संत आपा साहब का योगदान

*डॉ. मीना मिश्रा**

मध्यकालीन निर्गुण सन्त परम्परा में उत्तर प्रदेश के अनेक संत तथा उनसे प्रादुर्भूत पंथों का विवरण मिलता है। इन पंथों में कबीर पंथ अधिक प्रसिद्ध है तथा कबीर पंथ की चर्चा भी सर्वाधिक होती है। कबीर पंथ के अतिरिक्त मलूक पंथ, बावरी पंथ, शिव नारायणी पंथ तथा रैदासी पंथ की चर्चा होती है। निर्गुण संतमत की इसी परम्परा में ही अग्रिम कड़ी के रूप में सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में आपा पंथ का उदय हुआ । इस पंथ के प्रवर्तक आपा साहब थे। आपा साहब निर्गुण भक्ति परम्परा के एक महत्त्वपूर्ण वाहक होने पर भी विद्वानों तथा अनुसंधानकर्ताओं के लिए प्रायः अल्प ज्ञात रहे हैं। आपा साहब का साधना स्थल लखीमपुर खीरी जिले के मड़वाघाम में है। यह स्थान दुर्गम यातायात तथा वनाच्छादित होने के कारण शताब्दियों तक शोधकर्ताओं तथा विद्वानों की दृष्टि से ओझल रहा है। आपा साहब पर सर्वाधिक सूक्ष्मता से शोध डा० उदय प्रताप सिंह द्वारा हुआ, जिनकी दो पुस्तकों आपा साहब तथा उनकी कृतियाँ तथा निर्गुण भक्ति व आपा पंथ में आपा साहब की जीवन वृत्त के साथ उनकी पथ परम्परा व कृतियों का भी विस्तृत वर्णन है।

आपा साहब द्वारा स्थापित इस पंथ का उद्भव जिस समय हुआ वह मध्यकालीन संतों का समय था आपा साहब के समय तक निर्गुण भक्तिमार्गी पंथ एक लम्बी यात्रा तय कर चुका था। समाज में उस वक्त धार्मिक विषमता, अत्याचार, बाह्याडम्बर, पाखण्ड तथा धर्मगत संकीर्णता का प्रभुत्त्व था। मध्यकाल में भारत में इस्लाम के प्रवेश [1] के पश्चात उनकी धार्मिक असहिष्णुता ने यहाँ की हिन्दू जनता को संत्रस्त कर रखा था। आपा पंथ के प्रादुर्भाव के समय देश में मुगलों का शासन था तथा क्रमश: जहाँगीर व शाहजहाँ शासक थे। यद्यपि ये शासक सल्तनत काल

* *सहायक आचार्य, सिटी लॉ कॉलेज, लखनऊ*

के शासकों की भाँति एकदम असहिष्णु नहीं थे, फिर भी इनमें अपने पूर्वजों विशेषकर अकबर जैसी सहिष्णुता नहीं थी। राजनीतिक उथल–पुथल तथा परिस्थितियों का प्रभाव समाज पर पड़ना स्वाभाविक है, अत: तत्कालीन समाज भी अनेक बुराइयों से भरा था। ऐसे विपरीत वातावरण में आपा साहब ने स्व– दृढ निश्चय, अटल विश्वास तथा निडर व्यक्तित्त्व का परिचय देते हुए आंपा पंथ का विस्तार किया।

आपा साहब की समन्वयवादी भावना, ईश्वर के प्रति प्रेम–भक्ति तथा बाह्याडम्बरों पर तीव्र व्यंग्य को तत्कालीन जनता विशेष कर समाज के उपेक्षित वर्ग ने सहर्ष स्वागत कर, स्वीकार किया। आपा साहब तथा उनके पंथ पर डॉ० उदय प्रताप सिंह ने लिखा है कि ''उन्होंने सर्वत्र अपनी भक्ति साधना, अपने ईश्वर तथा अपने कार्य को श्रेष्ठ बतलाया है। कबीर आदि संतों से कुछ अंशों में प्रभावित होते हुए भी उनकी अपनी मौलिकता अलग ही है।"[2]

इस पंथ का संत–मत में बहुत महत्त्व है तथा अपनी विशेषताओं के कारण आपा पंथ का स्वतन्त्र अस्तित्त्व है। यद्यपि आपा साहब के जीवन वृत्त के विषय में मतभेद है फिर भी प्राप्त जानकारी के अनुसार उनके तीन नामों का उल्लेख मिलता है मुनिदास, मुनुआ तथा आपा साहब। मुनिदास संभवतः इनके माता–पिता द्वारा प्रदत्त नाम है तथा इनकी रचनाओं में इस नाम की छाप भी दीख पड़ती है।[3] किन्तु इनकी रचनाओं में आपा नाम ही सर्वाधिक उल्लेखित हुआ है। इस नाम के पीछे आपा पंथ के संतों का कथन है कि आपा इनकी राशि का नाम था। यदि देखा जाय तो आमा शब्द का अर्थ आत्म–बोध के रूप में जान पड़ता है। यदि अन्य संतों की कथनी को देखें तो उन्होंने भी आपा का अर्थ आत्म अर्थ के बोधक के रूप में लिया है।[4] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने आपा शब्द को आत्म से परिभाषित किया है अर्थात् अपने आत्मा की पहचान ही सर्वभाँति सुखकारी हैं। उनके अनुसार यदि साधक आत्माराम बन जाय, तो सभी विघ्न नष्ट हो जाते हैं। दैहिक, दैविक, भौतिक तीनों प्रकार के संतापों की समाप्ति हो जाती है।[5]

निर्गुण सन्तों ने साधना के क्रम में भी साधक को आत्म ज्ञान की बात बार–बार कहा है। आत्म पहचान से मनुष्य सांसारिक प्रपंचों से मुक्त होता है। मनुष्य 'स्व' से 'पर' की भावना तक जाता है। आपा साहब ने भी. आपा को राम के समान माना है तथा वे राम की भाँति ही इसे सर्वव्यापक मानते हैं।[6] यहाँ आपा को उन्होंने आत्मा तथा परमात्मा के एकाकार होने का बोध माना है।

आपा साहब के जन्म के विषय में कहीं भी स्पष्ट विवरण प्राप्त नहीं होता है। उनके जीवन–वृत्त अथवा जन्म–काल के विषय में जानने के लिए यदि उनके समकालीन संतों का उल्लेख करें तो सम्भवतः आपा साहब के विषय में भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए आपा साहब की कृति भक्ति बाछावली में प्राप्त जगजीवन साहब के विषय में चर्चा को प्रकाश में लाया जा सकता है।[7]

जगजीवन साहब का जन्म कुक साहब के अनुसार सं० 1739 तथा डॉ० बड़थ्वाल के अनुसार सं० 1727 है। दोनों के समय में 12 वर्ष का अन्तर है।[8] मृत्यु काल में भी दोनों विद्वानों में मतभेद है। कुक साहब जगजीवन साहब की मृत्युतिथि 1818 में मानते हैं तथा डा० बड़थ्वाल उससे 12 वर्ष पूर्व ही 1806 में।[9] यहाँ एक तथ्य प्रासंगिक है कि आपा साहब की कृतियों सुरसती' तथा जलमतत्त' का समाप्ति काल क्रमशः 1760[10] तथा 1767[11] है इस आधार पर स्पष्ट है उक्त समय आपा साहब विद्यमान थे। इस प्रकार आपा साहब को जगजीवन साहब का समकालिक नहीं, अपितु पूर्व समकालिक माना जाएगा, तो प्रश्न उठता है कि आपा साहब ने जगजीवन साहब का नामोल्लेख कैसे किया हो, क्योंकि यह तभी सम्भव हैं जब उनकी आयु दीर्घकालिक हो। इसके प्रमाण में स्वयं उनके द्वारा उल्लेख होता है ''एक सौ साठ भई जेहिकी भौंरी हम ही से बैलाया हो" तो आपा साहब की आयु 160 वर्ष लम्बी मानी जाएगी। अब यदि उनका जन्म संवत् 1717 के पूर्व का मानते हैं तो उक्त पद्यांश के आधार पर जन्म सं० 1670 वि० तदनुसार सन् 1617 ई० ठहराता है। क्योंकि एक सौ साठ भई जेहिकी भारी का तात्पर्य 160 वर्ष से लगाया जाता है। आलोच्य पंथ की मान्यता भी है कि आपा का निधन सं० 1830 वि० में हुआ था।[12] इस आधार पर उनकी जन्मतिथि सं0 1670 वि०

ही ठहरती है और जगजीवन साहब का स्थिति काल सं0 1739–1818 वि० मिलता है। इसलिए जगजीवन साहब का उनके द्वारा उल्लेखित होना असंगत नहीं। इस प्रकार आपा पंथ के महात्माओं की यह धारणा सत्य प्रतीत होती है कि आपा साहब का आविर्भाव सं० 1617 वि० की कार्तिक पूर्णिमा दिन गुरुवार की अर्द्धरात्रि को हुआ था ।[13]

आपा साहब की रचनाओं तथा बहि: साक्ष्यों से प्राप्त प्रमाण के आधार पर आपा साहब की जाति सुनार[14] तथा माता–पिता का नाम क्रमशः अनन्दी[15] तथा नन्दलाल[16] ज्ञात होता है। आपा साहब की वंश–परम्परा वर्तमान तक विद्यमान होने के कारण उनके जीवन से सम्बन्धित पर्याप्त साक्ष्य सुरक्षित रह गए हैं। उसी परम्परा के उन्नायक (अब स्व०) बाबा बृजबिहारी दास ने आपा साहब के माता पिता का परिचय देते हुए कहा है– "आदि गुरु आपा साहब का अवतरण कार्तिक पूर्णिमा गुरुवार 1670 वि० को सीतापुर जनपद के बिसवां तहसील के परबतपुर ग्राम में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री नन्द लाल तथा माता का नाम श्रीमती अनन्दी था, जिनका स्वर्गवास आपा की पाँच वर्ष की आयु में ही हो गया। मातृपितृहीन बालक आपा का बचपन अत्यन्त कष्ट में बीता।

आध्यात्मिक साधना में गुरु का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है तथा सभी संतों ने इसे स्वीकार किया है तथा गुरु को भगवान से भी ऊँचा स्थान प्रदान है। आपा साहब भी इससे विरोध नहीं करते किन्तु उनकी रचनाओं[17] से प्रतीत होता है कि उनका गुरु सांसारिक नहीं वरन् परमगुरू ईश्वर है। आपा साहब के गुरू परमात्मा है। उनका गुरु तीनों लोकों से न्यारा है। उनकी अवस्थिति तो चौथे लोक में है। आपा साहब ने 'गुरू' के लिए बारम्बार 'सतगुरु'[18] शब्द का प्रयोग किया है, जिसके द्वारा उनका ईश्वर को ही सम्बोधित करना प्रतीत होता है। आपा साहब का सारा जीवन साधनामय था। अपने साधना स्थल मड़वाधाम में उन्होंने कठोर तप किया। आपा साहब द्वारा कुछ समय के लिए पट्टी (सीतापुर) में भी तपस्या करने का प्रमाण मिलता है, किन्तु कुछ कारणवश ये पुनः मड़वाधाम आ गए, जिसकी चर्चा भी उन्होंने जलमतत्त नामक ग्रन्थ में भी किया है। यही स्थान आपा साहब की

तपस्थली बन गई थी।[19] आपा साहब ने दीर्घायु प्राप्त किया था तथा उनका महापरिनिर्वाण क्वारमास के शुक्ल पक्ष की विजया दशमी के दिन सोमवार को स० 1830 चि० को हुआ था।[20]

आपा साहब के साहित्य में उनके शिष्य–प्रशिष्यों का नाम अथवा उनके विषय में कोई उल्लेख स्पष्ट रूप से प्राप्त नहीं होता है फिर भी आपा साहब के छः प्रमुख शिष्यों की चर्चा मिलती है। इनमें से चार का प्रसंग लक्षिमन दास कृत आपामन महाकाव्य में उपलब्ध है। भक्ति–संदेश में इन शिष्यों का उल्लेख इस प्रकार होता है :–

1. जुगलदास 2. दयालुदास 3. गएबीदास 4. उद्धवदास 5. भोलादास 6. अलीदास ।

आपा साहब का आश्रम वर्तमान में लखीमपुर खीरी से पिपरिया बाइपास, बहराइच रोड पर लगभग 2 कि०मी० पर लुधौनी से दक्षिण ऐरा स्टेट खीरी, मड़वाघाम, आपापुरी में है। यहाँ जाने के लिए लखीमपुर खीरी बस स्टैण्ड से साधन प्राप्त होता है। मड़वाधाम शारदा नदी के किनारे स्थित है। शारदा नदी के प्रवाह में यह स्थान बह भी चुका है। अवशेष के नाम पर नवनिर्मित मन्दिर प्राप्त होता है। वर्तमान में आपा साहब के वंशज यहाँ निवास करते हैं। आपा साहब के वंशजों द्वारा उनके विषय में अनेक कथाएँ प्राप्त होती है। आपा साहब ने अनेक कृतियों की रचना की जिनमें ये प्रमुख है :–

1. राजनीति, 2. जलमतत्त 3. बोधपमथ, 4. केवलगीता, 5, जोगसन्दी, 6 जोगनासिका, 7. विवेक रतन 8. प्रेम गुंजरी 9 सुरसती

आपा साहब की वंशावली वर्तमान तक चली आ रही है जो इस प्रकार है –

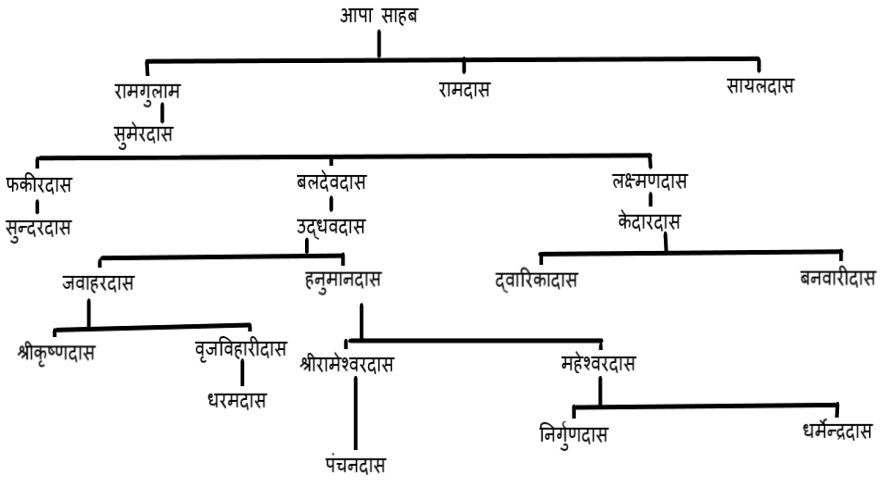

आपा साहब ने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज की विसंगतियों के विवरण के साथ सामाजिक चेतना का संदेश भी दिया है।

आपा पंथ के वंशजों ने भी उनसे सम्बंन्धित अनेक ग्रन्थों की रचना की हैं जिसमें लक्ष्मण दास कृत आपायन महाकाव्य, अर्ण पत्रिका तथा अन्य फुटकर ग्रन्थ हैं तथा केदार दास कृत आपायन अष्टक, हंसप्रमोद, रंगविहंगम, स्वरकल्पविवेक तथा अनेक फुटकर कृतियाँ हैं। आपा पंथ के वर्तमान महन्त महामहिम श्री रामेश्वर दास जी हैं। आपा पंथ वर्तमान में देश के विभिन्न भागों में भी संचालित हैं।

सन्दर्भ

1. *शर्मा, एन.आर. भारत में मुस्लिम शासन, पृ० 24*
2. *सिंह, उदय प्रताप, निर्गुण भक्ति और आपा पंथ, तथागत प्रकाशन सारनाथ वाराणसी 18*
3. *गिरीति, अल्दा बलरामपुर गोण्डा अन्तिम पृष्ठ*
4. *आपण जानि उलटि ले आप तो नहीं व्यापे तीन्यू ताप – द्विवेदी, हजारी प्रसाद, कबीर, पृ० 60*
5. *वही*
6. *सुरसती, अल्ट्रा पैकेज, बलरामपुर गोण्डा, दौं० सं० ५८६*
7. *भक्ति बाछावली, अल्ट्रा पैकेज, बलरामपुर, गोण्डा।*

8. चतुर्वेदी, परशुराम, उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृ० 610
9. वही, पृ० 612
10. सुरसती दो० सं० 1
11. जलमतत्त, अल्ट्रा पैकेज, बलरामपुर गोण्डा, पृ० 571–74
12. भक्ति संदेश (पत्रिका) प्रथम अंक फरवरी 1975, पृ० 4
13. वहीं, अंक फरवरी मार्च 1977, साखी, पृ० 14
14. वहीं, अंक 1977, पृ० 7–8
15. लक्षिमन दास, कृत आपायन, महाकाव्य, पंचम भाग
16. वही, पंचम भाग।
17. फुटकल पद, आपापथी आश्रम मड़वाधाम में प्राप्त
18. जोगसन्दी, अल्ट्रापैकेज बलरामपुर, गोण्डा, पृ० 186
19. आपा पंथ के वंशज तथा वर्तमान महन्त श्री निर्गुण दास जी से वार्तालाप के आधार पर
20. वही

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 78-85

मुल्ला दाउद कृत चांदायन

बैसवाड़ी–अवधी बोली–संस्कृति का अमर प्रेम ग्रन्थ

*डॉ० आजेन्द्र प्रताप सिंह**

प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा के कवि मुल्ला दाउद का जन्म स्थान बल्ख है जो उस समय ईरान का तथा आजकल अफगानिस्तान की सीमा में आता है। मुल्ला दाउद के जन्म के समय भारतवर्ष में गयासुद्दीन बलवन (664 हिजरी से 686 हिजरी तक) का शासन था। मुल्ला दाउद का भारतवर्ष में आगमन सम्भवतः 693 हिजरी में सुल्तान जलालुद्दीन मोहम्मद शाह खिलजी के शासनकाल में हुआ। मुल्ला दाउद के पिता मलिक मुबारक आत्मज मलिक बयान मालिकुल उमरा अर्थात चीफ जस्टिस के पद पर आसीन थे, जिनका मूल नाम शैख शुऐब पुत्र शैख मोहम्मद अहमद अथवा सुल्तान अहमद है। आपका निवास स्थान दलमऊ (डलमऊ) था। यह सुल्तान इल्तुतमिश (607 हिजरी से 633 हिजरी=1217 ई. से 1236 ई. तक) के समय में भारत का प्रमुख भूखण्ड था। सुल्तान कमालउद्दीन फीरोजशाह तुगलक के शासनकाल (752 हिजरी=1351 ई. से 790 हिजरी=1388 ई. तक) में जिनको दलमऊ (डलमऊ) में विभिन्न कारणों से विशेष प्रेम व लगाव था। उन दिनों दलमऊ (डलमऊ) को सम्पूर्ण भारतवर्ष में केन्द्रीय व प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था। मौलाना दाउद दलमई को भाषा विज्ञान में विशिष्ट स्थान प्राप्त था।

प्रसिद्ध इतिहासकार अब्दुल कादिर बदायूंनी ने मुन्तखब–उत– तवारीख में मुल्ला दाउद कृत चंदायन का वर्णन किया है।

मुल्ला दाउद कृत चंदायन 1936 तक अज्ञात थी। इस मसनवी को सर्वप्रथम डॉ. विश्वनाथ प्रसाद ने 1962 में दो प्रकाशन द्वारा प्रस्तुत किया जिसमें प्रथम 'लौर ने कहा' , लौर कथा अथवा लौर कहा नाम से तथा द्वितीय 'चंदायन' नाम से प्रकाशित हुआ। तत्पश्चात 1963 में देवनागरी लिपि में प्रवर्तित करके सम्पादित कर प्रकाशित किया था। हिंदी उर्दू साहित्य के प्राचीन इतिहासकार व फ्रांसीसी साहित्यकार गार्सा दतासी, अंग्रेजी विद्वान ग्रियर्सन व हिन्दी साहित्य के महान इतिहासकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि तीनों प्रारम्भिक हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों के इतिहास में मुल्ला दाउद कृत चंदायन का कोई वर्णन नहीं है। सन् 1936 ई में हिन्दी साहित्य के इतिहास

* *असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग फीरोज गांधी कालेज रायबरेली (उ.प्र.)*

से सम्बन्धित प्रथम शोध प्रबन्ध डॉ. पीताम्बर दत्त का ''THE NIRGUDHWAD SCHOOL OF HINDI POETRY'' नाम से प्रकाशित हुआ जिसमें प्रथम बार मुल्ला दाउदका जिक्र किया गया। सन 1938 में डॉ. रामकुमार वर्मा ने अपने शोध–प्रबन्ध 'हिन्दी साहित्य का रचनात्मक इतिहास में अमीर खुसरो व मुल्ला दाउद को समकालीन माना है तथा मुल्ला दाउद की रचना का नाम चन्दायन अथवा चन्द्रावत स्वीकारा। वर्ष 1940 ई. में ब्रजरतन दास ने भी मुल्ला दाउद के सम्बन्ध में कुछ कहने का प्रयास किया। सन् 1944–45 में श्याम सुन्दर दास ने हिन्दी साहित्य की अपनी कृति में मुल्ला दाउद व उनके चंदायन के विषय में संक्षेप में कुछ बाते की।

मुल्ला दाउद ने स्वयं रचना स्थल दलमऊ (डलमऊ) की भौगोलिक स्थिति को स्पष्ट करते हुए उल्लिखित किया है कि ऊपर कोट तले बहै गंगा अर्थात गंगा डलमऊ में दुर्ग के नीचे से बहती है।

अतएव स्पष्ट है कि चन्दायन का रचनास्थल रचनाकार का निवास स्थान दलमऊ (डलमऊ) के अतिरिक्त और कही नहीं हो सकता। मुल्ला दाउद की रचना चंदायन के परिप्रेक्ष्य में जो भी प्रामणिकता प्राप्त हुई उसका अधिकांश भाग डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्त व डॉ. माता प्रसाद गुप्त द्वारा संपादित पुस्तकों से ही सम्भव हो सका।

मुल्ला दाउद की अमर कृति चंदायन में वर्णित ऐतिहासिक तथ्य, पुरातात्विक प्रमाण, प्राकृतिक सम्पदा, सामाजिक सांस्कृतिक धरो हरे, अर्थनीति, राजनीति, कलात्मक अभिरूचियों आदि के अध्ययन–अनुशीलन स्पष्ट करते है कि यह रचना– मूलतः बैसवाड़ी अवधी बोली संस्कृति का अमरकोश है। चंदायन को विद्वानों ने भले ही अपनी–अपनी भाषा लोक संस्कृति की ओर खींचने का यत्न किया हो जैसे कि डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्त ने इसे भोजपुरी भाषा–संस्कृति की रचना मानने पर बल दिया। डॉ. रावत ने इसे राजस्थानी कृति सिद्ध करने का यत्न किया वही डॉ. माता प्रसाद गुप्त इसे अवध प्रान्त की निधि मानते हैं परन्तु मुल्ला दाउद मूलतः दलमऊ (डलमऊ) के निवासी थे यही की स्थानीय विशिष्टताओं एवं भाषा–बोली का विधिवत उन्होने रूपांकन चंदायन में किया है जिसके अन्तः साक्ष्य रचना में स्वयं प्राप्त होते है। अवध गजेटियर तथा रायबरेली गजेटियर में मुल्ला दाउद के दलमऊ (डलमऊ) निवासी होने के प्रचुर प्रमाण प्राप्त होते हैं। बैसवारे के अमर रचनाकार अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' के एक लेख 'रायबरेली के आस–पास के प्रमुख स्थल (स्वतंत्र भारत 21 नवम्बर 1977) में भी चांदायन प्रणेता मुल्ला दाउद के दलमऊ (डलमऊ) निवासी होने का

उल्लेख है। डॉ. सूरज प्रसाद शुक्ल ने अपने शोधग्रन्थ 'बैसवार के प्रमुख हिन्दी कवि' में भी मुल्ला दाउद के डलमऊ निवासी होने का वर्णन किया है।

सच है कि साहित्यकार की रचना में उसका निजी व्यक्तित्व समाहित होता है यही सत्य मुल्ला दाउद की कृति चंदायन पर भी लागू होता है। चंदायन में प्राप्त होने वाले अन्तःसाक्ष्य स्वतः इसके प्रमाण हैं–

''बरस सातै (त) सै होये इक्यासी/तिहि याह कवि सरसे (स) उभासी।/साहि पेरोज ढीली सुल्तानू।/जौना साहि इ जीरू (उजीरू) वषानू।/दलमौ (डलमऊ) नयरू बसै नवरंगा।/उपरि कोटू तलै बहै गंगा।/ धरमी लोगु बसहिं भगवंता।/ गुनगाहका नागर जसवंता ।/ मलिक बयां पुतु उ (यू?) ध रन धीरू।/मलिक ममारषु तहा का (तहां का) मीरू।/दाउद येह कवि जइ गाइ (ई) मन महि लेहु बिचारि।/जुरत बोलु चित राषुहू टूटत लेहु स (सं) वारि।''[1]

मुल्ला दाउद ने अपने गुरू का नाम जैनुद्दीन बताया है– ''सेष जैनदी हौ (हौं) पथि लावा। धरम पंथु जिह (हि) पापु गवावा।/पाप दीन्ह में गांग बहाइ (ई)।/धरम नाव हौं लीन्ह चुराइ (चड़ाई)।/उघर (रे) नैन हिये उजियारे।/ पायो लिष (षि) नौ अक्ष (क्ख) र करें।/ पुनि मै (मै) अषि (ष्षि) र की सुधि पाइ (ई)।/ तुरकी लिपि– हिंदु की (गी) गाइ (ई) ये जै पइए जा इस सेष पसारा।/ पाप गये तसीकर (तसिकर) मारा।/ व्यहु का धरू निरमरा जिह चितु रहा लुभाइ।/ सेष जैनदी सेवता पाप निरंतरू जाइ।

उपरोक्त छन्द से स्पष्ट होता है कि तुरकी लिपि लिपि हिंद की (गी) गाई अर्थात जिस हिंदवी में कवि ने अपनी अमर कृति चांदायन का गान किया है व तात्कालिक बैसवाड़ी अवधी बोली– भाषा ही थी।

हिंदी भाषा–साहित्य के इतिहास वेत्ता स्पष्ट रूप से घोषित करते है कि हिन्दू–मुस्लिम संस्कृति के मिलन बिन्दु पर हिन्दी के सूफी कवियों में प्रथम माने जाते है उनकी रचना चंदायन के अध्ययन–मनन से स्पष्ट हो जाता है कि मुल्ला दाउद में किसी भी प्रकार की संकीर्ण साम्प्रदायिक भावना न थी वे बेहद उदारमना व्यक्तित्व के धनी थे। इसीलिए उन्हें जीवन के प्रति आस्थावान प्रेम मूलक कवि घोषित किया गया।

मुल्ला दाउद के चंदायन का आधार लोक प्रचलित गाथा– लौरिकी या चनैनी ही है। क्षेत्रीय भाषाओं में लौरिक और चंदा के प्रेम पर आधारित लोक गाथाएं आज भी गायी जाती है। बैसवाड़ा अंचल में आज भी अहीरो के लिए

कहा जाता है '' अहिरा कितनौ होय सयाना।/लौरिक छाड़ि न गावै आना।'' बैसवाड़े की प्रसिद्ध अहीरों की लोकमान्य ''इसौलिया का मुल्ला दाउद कृत चांदायन से अद्‌भुत साम्य परिलक्षित होता है।

जब हम यह कहते है कि चांदायन मूलतः बैसवाडी अवधी लोक संस्कृति की रचना है तो यह कथन निर्मूल नहीं है, क्योंकि इनके प्रमाण सम्पूर्ण चांदायन में विद्यमान है। लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं अपितु नगरों व गाँवों में फैली हुई वह समूची जनता है जिसके व्यावहारिक ज्ञान का आधार यह पोथियां नहीं बल्कि उनका समूचा परिवेश उनकी भाषा–बोली सभ्यता–संस्कृति सब कुछ है। राष्ट्रीयता , अन्तर्राष्ट्रीयता के इस दौर में भी कुछ अंचल विशेष की , क्षेत्रीयता की अपनी लोक–संस्कृति है उसका अपना–आनन्द, अपनी–अनुभूति है यही तथ्य मुल्ला दाउद कृत चांदायन पर भी लागू होता है चांदायन बैसवाड़ा क्षेत्र में अवस्थित डलमऊ नगर से सम्बन्धित है। अवध प्रान्त का बैसवाड़ा जनपद वर्तमान में उत्तर प्रदेश का दक्षिणी–पश्चिमी विशेषतः रायबरेली–उन्नाव जनपद का भूभाग है। बैस राजपूतों की कर्म भूमि बैसवाड़ा है। लोक प्रचलित तथ्यानुसार महाराज त्रिलोकचन्द्र बैस के समय यहाँ बाइस वारा (परगने) थे जिसके आधार पर ही इसका नाम बैसवाड़ा पड़ा (बाइस+वारा (वाड़ा)।

डॉ. देवीशंकर द्विवेदी जी बैसवारे में 14 मोहाल (डौडियोखेरा , भगवंत नगर, बिहार, घाटमपुर, मगरायर, पाटन, पनहन पुरवा मौरांवा सरेनी, खिरौ डलमऊ, रायबरेली व बछरावां) बताते है निश्चित रूप से रायबरेली व उन्नाव जनपद के मध्य स्थित इस भू भाग को बैसवाड़ा के नाम से जाना जाता है जिसकी अपनी हनक ठसक व हेकड़ी है। यहाँ का जनमानस अपनी भाषा–बोली व संस्कृति पर गर्व करता है यहाँ का वास्वतिक इतिहास यहाँ के प्रसिद्ध शूरवीर अभयचन्द निर्भयचन्द की शौर्य गाथाओं से ही आरम्भ होता है। यहाँ की संघर्षशील जाति भारशिव को परास्त कर अपना प्रभुत्व व आधिपत्य स्थापित किया। बैस क्षत्रियों से पूर्व इस परिक्षेत्र में भर जाति का आधिपत्य था। यह भर ही भारशिव है इस संघर्षशील भर जाति के अंतिम राजा बैसवारे के डलमऊ नगर के राजा डालदेव थे जो चार भाई थे इन्हीं के पतन के बाद बैसवारे में भर जाति को अस्तित्व समाप्त हो गया। तत्पश्चात बैस राजपूतों का आधिपत्य यहाँ कायम हुआ जिसमें अभयचन्द निर्भयचन्द्र की वीरता पराक्रम की कथा से लेकर 1857 प्रथम स्वतंन्त्रता संग्राम में उसी वंश के अमर नायक राना बेनी माधव बक्श सिंह और अमर शहीद राव रामबक्श सिंह के शौर्य–पराक्रम में देखा जा सकता है। चांदायन छन्द संख्या में बैसवारे की ऐतिहासिकता डलमऊ

नगर की प्राचीनता के दर्शन किये जा सकते है। ऐतिहासिक स्थल डलमऊ सांस्कृतिक नगरी के रूप में जाना जाता है। चांदायन में वर्णित नगर व स्थल नौरंगाबाद, गौरा (गोबर नगर) देवश, राजपुर आदि डलमऊ तहसील में ही स्थित है। इसी अंचल में अभीरों की प्रसिद्ध लोक गाथांए प्राप्त होती है। इसी अंचल को यहीं के निवासी मुल्ला दाउद ने अपनी रचना चांदायन में वर्णित किया है इसमें रंच मात्र भी कोई शक नहीं, संदेह नहीं।

मुल्ला दाउद कृत चांदायन की घटना का केन्द्र बिन्दु गोबर नगर (गौरा) है। गोबर नगर की स्थापत्य कला व प्राकृतिक सुषमा के चित्रण में कवि का आंचलिक बोध, उसकी बैसवाड़ी अवधी रंग–रेखाएँ उभर का सम्मुख आयी है– दृष्टव्य है– ''तारा पोखर कुंड खनाए।/मढ़ देवर चहुं पासि उठाए।/ खूनां तपसी अहहि तहां।/अउ भगवंतु रहइ तिन्ह महां। मसवासी शिव मंडपु छाई।/ पुरूज नांड तेहि ठौर न जाई।''[2]

चांदायन छन्द संख्या–21 देखें–

''सरवरू एकु सुभर भरि रहा। झरनां सहांस एक अउ वहा।
अति अवगाहु न पाइय आहा। पानी चोख सराइउ काहा।
बाव कपूर पियत खिनआवइ । देखत मोती चूर सुहावई।
कुंवरि लाख दोइ पानी जांही। तीरि बइठि ते लेहि भरांही।
ठांड–ठाड बइसे रखवारा। खोरि नहाइ न कोउव पारा।
छाप (?) होइ तरून्ह कइ केहु न पाइय बाट।
चाप रूप सरबर कै रावत (ट) बांधे घाट।।[3]

इसी प्रकार छन्द संख्या– 22 में–''पैरहि हंस माछ फहराही/चकवा–चकवी केरि कराही।/धौला ढेंक बइठाछिरियाए।/ बगुला–बगुली सिहरी खाए।/ पीलू सोन तहाँ रहे छाई। अरू जल कुकुरी चुहचुहाईं।/ पसरी पुरइनि तूलमतूला।/ हरियर पान ते रातुर फूला।''

छन्द संख्या–23 में जाइ देखि गोबर कहखाई।/पुरूष पचास कहरे गहिराई। ––––– छन्द संख्या–24 में दुर्ग का वर्णन दृष्टव्य है–

''तेहु चाहि जो कोटू उचावा। कारू सेतु गढ़ि पाथरू लावा।
पुरस (पुरुष) तीस यक आहि उंचाई। हाथ बीस केरी चकराई।
कौसी सेह सब ईंगुर लागा। ऊपर चांटी चरे (चड़ी) न जाई।
सगर देवस चहुं दिसि फिरि आइय। सूरू आंथवइ आर न पाइय,

बीस पवरि बीसइ जरि लोहे सोनेहूं रसे किवार।
देवसहि रहहि पवंरिया राति भंवहि कोटवार।'

अर्थात गोबर नगर (गौरा) में पर कोटा जो ऊपर उठा था उसमें श्वेत पत्थर कारूओं (पत्थर कटों) ने गढ़ गढ़ कर लगाये थे उसकी ऊंचाई तीस पुरसे ($30 \times 3\frac{1}{2} = 105$ हाथ) के लगभग थी और उसकी चौड़ाई बीस हाथ की थी। सभी को सीसो (कपिशीषों बुर्जो) पर ईगुर लगा हुआ था और उनके ऊपर देखिए तो पाग (पगड़ी) गिर पड़ती थी। उसकी चिकनाई तेल की धार जैसी थी जिसकी वजह से उस पर चीटी भी चढ़ नहीं सकती थी। सारे दिन उसके चारों ओर घूम आइये सूर्यास्त हो जायेगा। फिर भी उसका अन्त नहीं पायेगे क्योकि वह इतना अधिक लम्बा है उसमें बीस पौरियाँ थी, बीसों लौह मण्डित थी और सोने से मढ़े हुए उसके कपाट (किवाड़) थे। उसकी सुरक्षा में दिन में पौरिये रहते थे और रात में कोटपाल चक्कर लगाते थे।

चांदायन में वर्णित गोबरनगर (गौरा) की सामाजिक संरचना छन्द संख्या 25 में दृष्टव्य है।

'बैसवाड़ी लोक अंचल में विविध वर्ण एवं विविध जातियों के लोग आज भी बसते हैं उनमें आपस में किसी प्रकार का वैमनस्य नहीं है देखे–

''बांभन खतरी बैस गोबारा। खांडखा (2) अऊ अग्गरवारा।
बसहिं तिवारी आ पंचवाना। धाकर जोशी अउ जजमाना।
बसहिं खधाई अउ बनिजारा। जाति सरावग अउर प(पं)वारा।
सोनी बसहिं सुनार बिनानी। रावत लोग बसाये आनी।
ठाकुर बहुत बसहिं चौहानां। परजा पौनि गिनती को जानां।
बहुत चाप (पि) दर मरि उठ 'खोरिन्ह हींडि न जाइ।
बीस बार बस 'गोबरा' मानुष चलत भुलाइ।

अर्थात गोबर नगर में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, ग्वाल, खण्डेलवाल, और अग्रवाल बसते थे। तिवारी, पंचवान, धाकड़ और जोशी बसते थे जो यज्ञकार्य करने वाले (यजमान) थे। खंधाई (गंन्थी), बनजारे श्रावक और पंवार निवास करते थे। सोनी अर्थात् सोने का पानी चढ़ाने वाले तथा विज्ञानी सुनार बसते थे और रावत जो वहाँ लाकर बसाये गये थे। बहुतेरे चौहान ठाकुर वहाँ निवास करते थे । प्रजा– पवनियों की गिनती कौन जानता ? वहाँ भी भरी गलियों में चंप (दब) कर बहुतेरे दलित मृदित हो उठते थे और उनमें चला–फिरा नहीं

जाता था यदि बीस दिनों तक भी गोबर (गोरा) में कोई निवास करता तो भी वह मनुष्य चलते हुए (मार्ग) भूल जाता।

इसी प्रकार छन्द संख्या– 26 में (राइकुरी कइ बहस अधाई। हम फुनि ठाढ़ भए तहां जाई) – कहाँ गया है कि गौरा (गोबरनगर) में राजकुल के लोगों की अथाई (गोष्ठी) बैठती थी। विद्वान तथा पढ़े हुए पण्डित वहाँ थे। रूप विलास के लिए दैव निर्मित थे वे पान चबाते थे जो उनके होठों पर लगा रहता था। वे खडग का हाथ दुश्मनों के सिरों पर रख देते थे। बैरियों के ऊपर खडग चलाने का वे बीड़ा लिया करते थे। ऐसे छत्तीस कुलो के राजपुत्र शासनादेश से प्राप्त ग्रामों का भोग करते थे[4] का चित्रण है जिसमें चांदायन के छन्दसंख्या – 27 में गोबरनगर की हातू के पुष्पों, धूप चंदन, कपूर, कस्तूरी, पान–सुपाड़ी जापफल, लंबग छुहारी दौना मरवा कुंद निवारी, गंथे घंट, खांड चिरौजी, दाख (मुनक्का) हीरा, सोना कपड़ा आदि जिसको जितना चाहिए था उतना उपलब्ध था।[5]

चांदायन छन्द संख्या–31 में राजा महर की चौरासी रानियों और एक एक रानी के नीचे (साथ) इक्यासी चेरियों (दासियों) का वर्णन है।

''राइ महर रानी चउरासी। इक–इक के तर चेरि इकासी।
बेगर बेगी होइ जेवनारा। बेगर मंदिर सेज संवारा।
पाट महादे फूला रानी। सबइ अचेति वह अहीं सयानी।
अगर चंदन फूल अडपानू। कूंक मेद न बेरसहि आनूं।
रचे हिंडोला झूलइ नारी। गावहि अपर सब जोबन बाटी।
अरथ दरब घोर अड हरिन्त (हस्ती) गिनत न आवइ काउ।
अन धन पाट पटोर भल। कउतुक भूला राउ।।''[6]

राजा महर की रानियों के ज्यौनार अलग अलग होते थे और अलग–अलग मंदिरों (भवनों) में उनकी शैयाएँ संवारी जाती थी। पट्ट महारानी फूला रानी थी। और सब महारानियों अचेत (मुग्धा) थी। एकमात्र वहीं सयानी (प्रौढ़ा) थी। अगुरू चंदन पुष्प सज्जित तांबूल, कुंकुम और मेद का भोग वहीं करती थी। अन्य रानियाँ नहीं करती थी। हिंडोले रचे हुए थे, जिन पर नारियाँ झूलती थी अन्य सब यौवनवती बालिकांए गीत गाती थी। महर के अर्थ दृव्य घोड़ो और हाथियों को कदापि नहीं गिना जा सकता था। राजा महर, अन्न, धन, पाट, (रेशम) अच्छे और पट्टकूल (रेशमी वस्त्र) के कौतुक में भूला रहता था। चांदायन की नायिका चांदा का जन्म हुआ जिसका वर्णन मुल्ला दाउद ने

'चांदा जन्म एवं विवाह खण्ड' में किया है। देखे चांदायन छन्द संख्या–32 ''सहदेव मंदिर चांद अवतारी। धरती लिया तो धरती और स्वर्ग (आकाश) में उजाली (चाँदनी) हो गयी। जन्म के पाँचवे दिन भी गोबर (गौरा) की छत्तीसों जातियाँ आमत्रित हुईं।[7]

प्रेमाख्नायक काव्य परम्परा की प्रथम रचना चंदायन मानी जाती है। यह बैसवाड़ा– अवध परिक्षेत्र की अमर प्रेम कथा– (लोरिक चांदा) पर आधारित है। इसके पात्र व घटनाचक्र सब इसी भौगोलिक परिक्षेत्र के है। दलमौ नगरू बसै नवरंगा अर्थात् ग्रंथ प्रणेता व कथा नगर डलमऊ यहीं से सम्बन्धित है। डलमऊ दुर्ग के समीप किंचित पूर्व की ओर नवरंगाबाद नामक स्थल था जो कभी नवाब का बाग कहलाता था। श्मशान घाट के निकट मकनपुर नामक स्थान नवंरगाबाद के निकट है'' परन्तु वर्तमान में इसका कोई चिन्ह प्राप्त नहीं होता, डलमऊ (बैसवारे) की जनश्रुतियाँ ही इसका प्रमाण है। चांदायन में वर्णित ''दलमौ नगर बसै नवरंगा। उपरि कोटु तलै बहै गंगा।'' की वहीं आज पुष्टि करते है। निश्चित रूप से मुल्ला दाउद कृत चांदायन बैसवाड़ी–अवधी बोली संस्कृति का अमर प्रेम ग्रंथ है।

संदर्भ

1. *चांदायन– मुल्ला दाउद, छंद सं.–17, सं. माता प्रसाद गुप्त*
2. *चांदायन– मुल्ला दाउद, छंद सं.–20, सं. माता प्रसाद गुप्त*
3. *चांदायन– मुल्ला दाउद, छंद सं.–21, सं. माता प्रसाद गुप्त*
4. *चांदायन– मुल्ला दाउद, छंद सं.–26, सं. माता प्रसाद गुप्त*
5. *चांदायन– मुल्ला दाउद, छंद सं.–27, सं. माता प्रसाद गुप्त*
6. *चांदायन– मुल्ला दाउद, छंद सं.–31, सं. माता प्रसाद गुप्त*
7. *चांदायन– मुल्ला दाउद, छंद सं.–32, सं. माता प्रसाद गुप्त*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 86-90

वेश्यावृत्ति का ऐतिहासिक एवं समसामयिक परिप्रेक्ष्य : समाजशास्त्रीय अनुशीलन

डॉ. श्याम नारायण वर्मा *

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः।।

भारतीय जनमानस में मातृस्वरूपा आद्याशक्ति को सम्मान देने की, परिपाटी वैश्विक स्तर पर अनुपम है। प्राचीन भारत में स्त्री का सतीत्व भी परम पुनीत कार्य की श्रेणी में गिना गया है, उसके चरणों की धूल से समस्त पापों का सर्वनाश होता है।

पृथिव्यां यानि तीर्थानि सती पादेषु तान्यपि।
तेजस्य सर्वदेवानां पुनीनांच सतीषु च।।
सतीनां पादरजसा सद्यः पूता वसुन्धरा।
पतिव्रतः नमस्कृत्य मुच्यते पातकान्नरः।।

उपरोक्त पंक्तियों में जहाँ एक ओर नारी सम्मान और आदर,दूसरी ओर उसी के लिए यदि वह किसी कारण पतन के पथ पर अग्रसर हो जाती है, तो उसे अस्पृश्या सर्वजातिषु[1] से भी अविहित किया जाता रहा है।

किस प्रत्यक्ष व परोक्ष स्वार्थ की पूर्ति के लिए सतीत्व का व्यवसाय अत्यन्त निम्नकोटि का व्यवसाय माना गया है। ऐसा व्यवहार करने वाली स्त्री को पुंश्चली, वेश्या, गणिका, अभिसारिका, भोग्या, कुलटा, भुजिव्या जैसी तमाम अपमानजनक पदवियों से नवाजा जाता है। इस नामकरण में पुरुष समाज की महती भूमिका रही है। वह इस नामकरण का रचयिता तो बना, पर वह भूल गया कि एक स्त्री को कुलटा, भोग्या बनाता है अगर तो दोनों नर–नारी बराबर दोषी हैं तो केवल नारी को अपमानजनक शब्दों से नवाजा जाना कहीं न कहीं पुरुष वादी ओछी सोच का ही परिचायक है।

बाइबिल में उल्लिखित एक कहानी जिसमें एक पतिता स्त्री को लोग मारने के लिए हाथों में पत्थर लिये घेरे हुए थे और उसकी जान को समाप्त करने पर तुले हुए थे, तभी उस भीड़ से ईसा ने कहा कि आप ये बताइए ''जितने लोग यहाँ उपस्थित हो, आप में से कोई ऐसा है, जो जीवन में कोई पाप न किया हो, और हाँ पत्थर वही चलाये जो कोई पाप कभी न किया हो।

* *सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, महामाया राजकीय महाविद्यालय, श्रावस्ती*

यह सुनकर सभी चुप हो गये और धीरे–धीरे वहां से जाने लगे पत्थर हाथ से छूट गया। सभी के जाने के बाद ईसा ने उस स्त्री से कहा कि ''बहन अब ऐसा पाप न करना''। वास्तव में वेश्यावृत्ति का इतिहास वहीं से प्रारम्भ होता है जहाँ से पुरुष ने नारी को वासनापूर्ति का साधन मानकर उसके सतीत्व के साथ खेलना प्रारम्भ किया.....? आधुनिक मनोविज्ञानी हेवलाक एलिस व फ्रायद जैसे लोग यहाँ तक कहने लगे कि कामवासना की अग्नि कभी बुझती नहीं, बुझ सकती नहीं।ऐसे विद्वानों ने ही उपरोक्त प्रकार की धारणा को प्रबलता प्रदान की कि वेश्यावृत्ति मानव समाज की जरूरत है। पादरी एक्वीनास कहते हैं कि "महल में गंदी नाली की जो स्थिति है, वही स्थिति किसी नगर में वेश्या की होती है। नाली को बंद कर दीजिए और आप महसूस करेंगे कि सारा महल बदबू और गन्दगी से भर गया है।'' एक्वीनास के स्वर में स्वर मिलाते हुए अगस्ताइन कहते हैं कि– जल्लाद जिस प्रकार मन को अप्रिय होते हुए भी समाज का आवश्यक अंग है, उसी प्रकार वेश्यायें भी हैं। अतः समाज से वेश्याओं को लिकाल दीजिए, तो आप पायेंगे कि सारा संसार विषयवासना से संपूरित हो गया है। आदि काल से लेकर वर्तमान काल तक के इतिहास में झाँका जाये, तो विवरणों में वेश्याओं को स्थान दिया गया है। अर्थात हर काल में वेश्यावृत्ति किसी न किसी रूप में विद्यमान रही है। यूनान, मिस्र, रोम इत्यादि की प्राचीन सभ्यताओं में वेश्याओं की कहानियों से हजारों पन्ने श्याह हुए हैं। आदि कालीन धर्मों में लिंग तथा योनि की पूजा, देवियों की पूजा और उनके साथ उच्छृंखलता की प्रवृत्तियाँ यत्र–तत्र, सर्वत्र विद्यमान रहीं हैं।[2]

पुरातत्त्वविज्ञानी कैस्पर ब्रानिस्ला मैलिनोवस्की ने अपने अनुसंधानिक खोज के आधार पर लिखा है कि पूर्वी गायना (अफ्रीका) के तट पर रहने वाली ट्रोवियान्ड नामक जनजाति के बच्चे 4–5 वर्ष की आयु से ही घर के बाहर प्रेमलीला करते हुए देखे जा सकते हैं, क्योंकि इस जनजाति में यौन स्वच्छंदता गौरव की बात समझी जाती है। प्रेम क्रीड़ा देखकर ट्रोबियान्ड माता पिता सन्तोष की साँस लेकर कहते हैं कि "चलो आज हमारे बच्चे ने अमुक बच्ची के साथ झाड़ी में 'कायता' किया"। 6–8 वर्ष तक की लड़की और 10–12 वर्ष तक के लड़के यौन–सुख लेना आरंभ कर देते हैं।[3] इस समाज में कुछ क्षेत्रों व वर्गों में खुलेआम संभोग की प्रथा विद्यमान रही है। गिबन नामक विद्वान ने डिक्लाइन एंड फॉल ऑफ रोमन एम्पायर, हंसलिच ने 'सेक्शुअल लाइफ इन एनशियंट ग्रीस' ओटो फिसर की 'सेक्शुअल लाइफ इन एनशियेंट रोम' फ्लेक्सनर की प्रास्टीट्यूशन इन यूरोप सेंगर की 'दि हिस्ट्री ऑफ प्रास्टीट्यूशन फार्सटर्न ने सेक्शुअल लाइफ इन इंग्लैण्ड इत्यादि पुस्तकों में वेश्यावृत्ति,

वेश्यालय, यौन अपराध, यौन दंड जैसी तमाम घटनाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है।

भारत में अप्सराओं और हूरों के काल्पनिक वर्णनों से लेकर वेद पुराणों तक, महाभारत से भागवत तक, भरत मुनि के नाट्यशास्त्र से वात्स्यायन के कामसूत्र तक, तंत्र से ज्योंतिष तक स्थान–स्थान पर वेश्याओं और गणिकाओं,रूपा जीवा और भोग्या स्त्रियों के वर्णन प्राप्त होते हैं। राम की पालकी शोभायात्रा में रूपा जीवा चलती थी।[4] गुप्त साधन तंत्र, ताराभक्ति सुधावर्णव, पुरश्चरण चन्द्रिका इत्यादि में वेश्याओं के बारे में लेखा जोखा प्राप्त होता है।

वात्स्यायन कामसूत्र में मानतें हैं कि वह व्यक्ति जीतेन्द्रिय है जो धर्म अर्थ काम का प्रर्याप्त ज्ञान रखते हुए भी लोकलाज की इज्जत करता है। यथा–

रक्षन्धर्मार्थ कामानां स्थितिं स्वां लोक वर्तिनीम्।

अस्य शास्त्रस्य तत्त्वज्ञो भवत्येव जितेद्रियः।।[5]

वात्स्यायन ने तत्कालीन समय में वेश्याओं में 09 प्रकारों का उल्लेख किया है–

1. गणिका– जो नृत्यकला संगीत कला आदि में निपुण रूपसी हो।
2. रूपजीवा– काम कला में पारंगत होने के बावजूद भी यौवन का व्यापार करने वाली हो।
3. प्रकाशविनष्टा– पति के जीवित रहते या मृत्यु के पश्चात् स्वच्छंद रूप से पराये पुरुषों से सम्पर्क रखने वाली हो।
4. स्वैरिणी– वह स्त्री कहलाती है, जो अपने पति की परवाह किये विना परपुरुष से क्रीड़ारत रहे।
5. कुलटा– वह स्त्री जो अपने घर से बाहर रहकर दूसरे पुरुषों से शारीरिक संबंध में रहे।
6. कुंभदासी– घरेलू कार्यों में संलग्न रहते हुए भी वेश्याओं के आचरण से अभिहित हो।
7. परिचारिणी– दाई, नौकरानी आदि के रूप में छिपकर परपुरुष गमन करने वाली स्त्री।

8. शिल्पकारिका– कला कौशलता में निपुण होने के बाद भी वेश्यावृत्ति जैसे कृत्यों में संलग्न स्त्री।

9. नटी– नाटक इत्यादि में अपनी कला का पदर्शन करने के साथ दुराचरण करने वाली स्त्री।

मौर्यकाल में गणिकाध्यक्ष का वर्णन मिलता है, क्योंकि कौटिल्य ने इसकी समुचित व्यवस्था कर रखी थी–

गणिकाध्यक्षो गणिकात्वम् गणिकान्वयां वा।

रूप यौवन शिल्प सम्पन्नां सहस्रेण गणिकां कारयेत।।[6]

कौटिल्य द्वारा गणिकाध्यक्षों को निर्देशित किया गया था, कि वह गणिकाओं की आमदनी और खर्चे पर नियंत्रण रखे। साथ ही गणिका को वह शाहखर्च न होने दे– अर्थात अतिव्यय कर्म च वारयेत।

मुगल काल में– सुरा सुन्दरी का जो प्रचलन बढ़ा, उसमें वेश्यावृत्ति को फलने फूलने का पर्याप्त मौका मिला। विलासिता की महफिलों में लोगों की जुवान पर नाहक ही ऐसे शेर आ ही जाया करते थे।

हो आध सेर कबाब मुझको एक सेर शराब हो।

नूरे जहाँ की सल्तनत हो खूब हो कि खराब हो।।

देशी विदेशी वेश्यायें जहाँगीर के हरम में रहा गरती थी, उन्हें कई नामों से जाना जाता था। जैसे हुक्किनी, कंचनी, लोलनी इत्यादि इस समय में बादशाहों में कहावत प्रचलित थी कि अगर माल अच्छा है, तो दूकान कौन देखता है। 'जहाँगीर्स इंडिया' नामक रचना में जहाँगीर की विलासिता का उदाहरण भरा पड़ा है। वेश्यावृत्ति की खुली छूट वाला काल मुगलकाल को अगर कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगा, क्योंकि इस काल में महिला का सुन्दर होना बादशाहों की हरम में जाने की योग्यतम योग्यता थी उन्हे जाना ही था चाहे जैसे धनबल, छल, प्रलोभन आदि के माध्यम से उन्हें उनकी हबस का शिकार होना ही था।

अंग्रेजी काल में भी वेश्यावृत्ति का खुला खेल जारी था। फेरिया, विलियम्स एंड होइलर जैसी नीलाम करने वाली कंपनियाँ नीलामी के लिए जो विज्ञापन प्रकाशित किया करती थीं। उनमें व्यवस्था थी कि ताता तोला बाजार में नीलामी के लिए एक बड़ा बंगला, भारी क्षेत्रफल वाला बगीचा इन दोनों के साथ में एक 'भारतीय बीबी' साथ में हुआ करती थी। व्यभिचार पैसों को लेकर

कंपनी काल में भी कम न था। कमोवेश ऐसा कोई काल नहीं मिलता जहां पर वेश्यावृत्ति की उपस्थिति न रही हो। ऐसा लगता है कि यह हर काल में हर समय में समाज का एक अभिन्न हिस्सा रही है। जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों संलग्न थे। हालांकि भारतीय समाज में पुरुष प्रभुता ने इसके लिए स्त्री समाज को जिम्मेदार ठहराया है और अपनी उपस्थिति को नेपथ्य में रखने का प्रयास किया है।

अनादिकाल से नारी समाज को दोहरे मापदंड का शिकार होना पड़ा है। पुरुष प्रभुता ने स्त्री को दोयम दर्जे का मानव बनाकर रख दिया है। वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर की गयी स्त्री को मर्दमादी सोच वाले समाज ने उसे कितने घिनौने नामों से नवाजा है। इसका अहसास शायद समाज को न होने के कारण वह केवल स्त्री पर वेश्या, कुलटा, चरित्रहीन, मनोरंजन का साधन, जैसे बदनुमा दाग वाले नामों से नाकरण कर अपनी हबसी प्रवृत्ति, पशुवत प्रवृत्ति को छिपाने का जो षडयंत्र रचा है वह अपनी उपस्थिति को लेकर सदा जीवित है। पुरुषों द्वारा ऐसा करने के पीछे अपनी चाल,चरित्र और चेहरे को छिपाना मात्र है।अगर महिलाएँ देवदासी बनी तो किसने बनाया? मंदिरों में सेवा देते–देते अगर वे गर्भवती बनी तो किसने बनाया? लालबत्ती इलाकों में अपने सतीत्व को नीलाम करने के लिए उन्हें किसने प्रेरित किया? या मजबूर किया, अस्पृष्या किसने कहा, किसी भी महिला विरोधी पदनाम में जब पुरुष शामिल है तो वेश्यावृत्ति जैसे मसले में आखिर स्त्री अकेले दोषी कैसे हो सकती है? एक स्त्री जब पर पुरुष से सम्बन्ध बनाये तो वह कुलटा हो गयी और प्रतिदिन अपना स्वाद बदलने की नीयति के लिए एक पुरुष पर स्त्रीगमन करता है, तो उसे आखिर किन गन्दे शब्दों से आज तक समाज ने पुकारा यह हम सभी के सामने यक्ष प्रश्न है।

सन्दर्भ

1. *ब्रह्मवैवर्त पुराण, पृ० 490*
2. *एच.कटनर : द शार्ट हिस्ट्री ऑफ सेक्स वर्शिप, 1940, पृ० 20*
3. *Bronislaw Malinowski, The Sexual Life of savages in North-Western Milanesia, Routledge and Kegan Pvt. Ltd., Center Law EC-4, 1952*
4. *वाल्मिकी रामायण, अयोध्या कांड–36/03*
5. *वात्स्यायन, कामसूत्र–6/2/56*
6. *कौटिलीय का अर्थशास्त्र, 2/27/44*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 91-95

प्रभावी विधायक कैसे बने

*डॉ० बृजेश स्वरूप सोनकर**

विभिन्न की विधान सभाओं के लिए चुने गए विधायकों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि लगभग आधे विधायक पहली बार चुनकर आए हुए होते हैं। पहली बार चुने गए विधायक विधानसभा की कार्य प्रणाली को भली भांति नही समझते है, इसलिए विधानसभा के भीतर चाहकर भी वे प्रभावी भूमिका नहीं अदा कर पाते। अपने निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं के प्रति अपने दायित्व के बारे में भी उन्हें सम्यक जानकारी नहीं रहती, इसलिए मतदाताओं के मध्य वे अपनी चुनावी लोकप्रियता को कायम नहीं रख पाते। जब तक विधान सभा के भीतर बाहर तथा अपनी पार्टी के दायित्वों को अच्छी तरह निभाने में वे सक्षम होते हैं, तब तक उनका कार्यकाल समाप्त होने के नजदीक पहुंच जाता है। इसलिए यह जरूरी है कि विधायक विशेषकर पहली बार चुने गए विधायक उन बिन्दुओं को समझे, जो उन्हें प्रभावी विधायक बनने में मदद करे।

निर्वाचन क्षेत्र का पोषण

एक विधायक की गतिविधियों का मुख्य केन्द्र उसका निर्वाचन क्षेत्र होता है, अतः सबसे पहले उसे निर्वाचन क्षेत्र की चिंता करनी चाहिए। विधायक के रूप में उसकी सफलता या असफलता की मुख्य कसौटी यह है कि उसके निर्वाचन क्षेत्र में लोगों का उसके प्रति क्या दृष्टिकोण है और जनता को अपनी ओर आकर्षित करने में कितना सफल हो पाता है। उसे अपने निर्वाचन क्षेत्र की समस्याओं से पूर्ण रूप से परिचित होना चाहिए। लोगों की आशाओं आकाक्षाओं के प्रति सजग रहना चाहिए और किन उपायों से तथा किस प्रकार से उसको पूरा किया जा सकता है, इसका ज्ञान होना चाहिए। विधायक को एक व्यवहारिक व्यक्ति होना चाहिए और उसमें समस्याओं का समाधान करने की क्षमता होनी चाहिए।

जनप्रतिनिधियों से क्षेत्रीय जनता को बड़ी आशा रहती है। सासद या विधायक को जनता हर मर्ज की दवा समझती है। उससे क्षेत्र की हर समस्याओं, चाहे वह सड़क पुलिया, पुल स्कूल, अस्पताल का निर्माण हो अथवा ग्रामीण रोजगार बढ़ाने हेतु कार्यक्रम हो, के समाधान की आशा की जाती है। मनरेगा में जाबकार्ड, बीपीएल कार्ड, स्मार्ट कार्ड, मिडडे मील, सार्वजनिक वितरण

* *असिस्टेन्ट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, कर्मक्षेत्र महाविद्यालय, इटावा (उ०प्र०)*

प्रणाली के माध्यम से मिलने वाले गेहूं, चावल, चीनी, मिट्टी का तेल आदि में सही ढंग से काम करने की जनता द्वारा निरंतर मांग की जाती है। यह सही है कि ये सब मांगे उचित है परंतु एक विधायक जनता की सारी समस्याओं का समाधान नहीं करा सकता है, परन्तु उसे लोगों को विश्वास दिलाना होगा कि वह प्रशासन से उनकी न्यायपूर्ण शिकायतों को हल कराने में सक्षम है। इसके लिए उसे भ्रष्ट अधिकारियों तथा कर्मचारियों से दूरी बनाकर जनता का साथ देना होगा। बहुत सी समस्याओं का समाधान विधायक नहीं करा सकता है पर अच्छे व्यवहार से जनता का मन जीत सकता है। जनता यह भी देखती है कि विधायक ने उसकी तथा उसके क्षेत्र की समस्याओं के प्रति कितनी संवेदनशीलता दिखाई है।

विधायक को सार्वजनिक सभाओं, समाजिक समारोहों, मेलों तथा इसी प्रकार के अन्य माध्यमों से लोगों के साथ अपने सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और उनके साथ स्थानीय समस्याओं के बारे में चर्चा करनी चाहिए। लोगों को राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थतियों के बारे में जानकारी प्रदान करनी चाहिए। उसे समाचार पत्रो, रेडियो, इलेक्ट्रानिक मीडिया आदि के माध्यम से लोगों की शिकायतों को अभिव्यक्ति प्रदान करना चाहिए। विधायक को नियमित रूप से विकास खंडों में महीने में एक बार बैठकर जनता की समस्याओं को सुनना चाहिए। निर्वाचन क्षेत्र के केन्द्रीय स्थान में एक कार्यालय खोलकर सहायक के माध्यम से प्रतिदिन जनता की समस्याओं से संबंधित प्रार्थना पत्र को एकत्रित कर उसका समाधान निकालना चाहिए। विधायक निधि का प्रयोग सावधानी से तथा आम जनता के हित को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए तथा पारदर्शिता लाने के लिए इस योजना के तहत किए गए कार्यों से जनता को अवगत कराना चाहिए।

विधान मंडल के भीतर कार्य

विधान मंडल वह मंच है जहां विधायक अपने निर्वाचन क्षेत्र और राज्य के हित के लिए अपनी प्रतिभा, कुशलता और योग्यताओं की पूरी अभिव्यक्ति कर सकता है। अपनी वक्तृता के अतिरिक्ति विधानसभा की विभिन्न समितियों की सहायता के माध्यम से वह अन्य राजनीतिक दलों के सदस्यों से अपने विचारों का आदान प्रदान कर सकता है, जिससे कि वह उन्हें अपने निर्वाचन क्षेत्र, राज्य और देश की समस्याओं के बारे में अपने विचारों से अवगत करा सकता है। वह अपने निर्वाचन क्षेत्र की गंभीर समस्याओं के बारे में सदन को बताकर सरकार पर दबाव बना सकता है कि वह उसका तत्काल समाधान

करे। विधानमंडल में ही उसे अपने निर्वाचन क्षेत्र के लोगों के हित के लिए कार्य करने के अवसर प्राप्त होते हैं, उसे प्रश्न पूछने, पूरक प्रश्न पूछने के अधिकार का भी उपयोग करना चाहिए।

विधायकों को सदन उत्कृष्ट वाद विवाद करना चाहिए, तथ्यों एवं आकड़ों के आधार पर सरकार की कमजोरियों को सामने लाना चाहिए, जिससे उसकी कार्यप्रणाली में सुधार हो। उसे पुस्तकालय सुविधाओं का लाभ उठाना चाहिए। हर मामले का गहन अध्ययन करना चाहिए। प्रखर सांसद फीरोजगांधी ने कहा था– ''मेरे लिए वाद विवाद लोकतंत्र की शक्ति है। हम लोगों को फांसी पर नहीं चढाते, हम उनका सर कलम नहीं करते पर उन्हें पर्याप्त कठिनाई में डाल सकते हैं, मुझे देखना है कि क्या में सार्वजनिक वाद विवाद के दबाव से वह पा सकता हूँ, जो कि शांति पूर्ण वार्ताओं से नहीं पा सका।''[1]

एक तरफ सुविधाओं एवं सूचनाओं की प्राप्ति और दूसरी तरफ व्यक्तिगत इच्छा शक्ति और संख्याशक्ति विधायकों या सांसदों को प्रभावकारी बनने के लिए आवश्यक है बिहार पूर्व मुख्यमंत्री कर्पूरी ठाकुर ने कहा था–

''यदि जनतंत्र को सफल बनाना है तो वह इस बात पर निर्भर करता है कि जो लोग संसद अथवा विधानमंडल में चुनकर आते है, वे अपना दायित्व किस प्रकार निभाते है। हम जो सासद या विधायक चुनकर आते है, हमारे ऊपर बड़ा भारी दायित्व है कि हमें संसद या विधानमंडलो मे जो मौका मिलता है. उसका कैसे फायदा उठाना चाहते हैं, कैसे मौके का इस्तेमाल करना चाहते है।''[2]

व्यवस्थापिका के सदस्यों को कुछ विशेषाधिकार दिए गए है, पर यह उन्हें अपने कर्तव्य की पूर्ति के लिए दिए गए हैं, दुरूपयोग करने के लिए नहीं। सदन में भाग लेने के लिए आने जाने एवं सदन में कर्तव्यपालन में किसी तरह का व्यवधान उत्पन्न न हो, इसलिए उन्हें विशेषाधिकार दिए जाते है। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि हर कही विशेषाधिकारों की दुहाई देकर वे अपनी स्थिति का दुरूपयोग करें।

सांसद या विधायक अतिमानव नहीं हैं, जिसके साथ सामान्य नागरिको से भिन्न व्यवहार किया जाना चाहिए। वे जनसाधारण की तरह राष्ट्रीय कानूनों के आधीन है। उनका उल्लंघन किए जाने पर उनके साथ वही व्यवहार किया जाना चाहिए, जो अन्य नागरिकों के साथ होता है। कभी–कभी वे अपने पद व विशेषाधिकार के नाम पर जोश मे अस्पतालों, विद्यालयों, सरकारी कार्यालयों व अन्यत्र ऐसा व्यवहार कर बैठते हैं, जो उनके पद की गरिमा अनुकुल नहीं

होता, इससे बचना चाहिए। जनप्रतिनिधि को यह याद रखना चाहिए कि वह विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग नही है। वे जनता के सेवक है, स्वमी नहीं।

आचरण एवं व्यवहार

विधायकों को दलालों एवं बिचौलियों से सतर्क रहना चाहिए, जो उनकी आड़ में चंदा वसूली कर या नौकरी का लालच देकर रकम ले लेते हैं। सांसद या विधायक कुछ ऐसे चाटुकारों से घिर जाते है, जिन्हें लोग उनका खास आदमी समझने लगते है। विधायक को पता ही नहीं लगता कि उसके नाम पर बिचौलियों या दलाल किस प्रकार का धन्धा चला रहे है। उसे अपने जन सम्पर्क अधिकारी या निजी सचिव बहुत सोच समझकर रखना चाहिए। ऐसे पदों पर उन लोगों को रखें जिनकी ईमानदारी व सत्यनिष्ठा पर संदेह न हो। उसे अपने परिजनों, पुत्र, पुत्रियों व रिश्तेदारों से भी सावधान रहना चाहिए जो कि उसके पद का दुरूपयोग करते है।

विधायकों का आचरण गरिमापूर्ण होना चाहिए। उन्हें अपनी कथनी व करनी का अन्तर मिटाकर अपना आचरण ठीक रखना चाहिए। उन्हें यह याद रखना चाहिए कि वे शीशे के महल में खड़े है जहाँ पर जनता समाचार पत्र, इलेक्ट्रानिक मीडिया की निगाहे उन पर लगी है। उनका एक भी गलत कदम उनकी प्रदेश में ही नहीं देश भर में बदनामी करा सकता है। अगर वे अपने आचरण को ठीक नहीं रखेंगे, नैतिकता के तकाजों को भूल जायेंगे, नैतिक मूल्यों की अवहेलना करेंगे तो मात्र अपने भाषण से वे अपने को प्रभावशाली सिद्ध नहीं कर सकते है। भाषण से अधिक प्रभाव चरित्र व आचरण का पड़ता है।[3]

दल के भीतर कार्य

अधिकांश विधायक किसी न किसी दल के टिकट पर जीत कर आते हैं। निर्दलीय उम्मीदवार बहुत कम संख्या से चुनाव जीत पाते है। दलगत सम्बन्धों से कुछ विशिष्ट लाभ होते है परंतु इसकी कुछ हानिया भी होती है। यह सही है कि राजनीतिक दल के सदस्य होने के नाते विधायक को निर्वाचन में वित्तीय सहायता व सरकारी संरक्षण में कुछ निश्चित लाभ होते हैं। पर इसके साथ ही वह दलीय अनुशासन से बंध जाता है और कभी–कभी निर्वाचक केंद्रित अपने अभिवचनों की पूर्ति के लिए स्वतंत्र मार्ग अपनाने का उसका रास्ता बंद हो जाता है और इस दृष्टि से वह अपने को स्वतंत्र नहीं अनुभव करता है। जब कोई विधायक अपने निर्वाचन क्षेत्र की अपेक्षाओं और दलगत नीतियों में सामंजस्य नहीं स्थापित कर पाता तो उसकी स्थिति विषम हो जाती है। जब तक उसके विचारों का उसके दल में समादर किया जाता है तब तक

तो ठीक है. परंतु विपरीत स्थिति मे उसे कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए विधायक को अपने राजनीतिक दल व निर्वाचन क्षेत्र की जनता के हितों में सामंजस्य बनाए रखना चाहिए।

इस प्रकार नए विधायक के समक्ष विविध प्रकार की समस्याएं आती है। उसके अपने निर्वाचन क्षेत्र में दल तथा विधानमंडल में उसे अपने निर्वाचन क्षेत्र के लोगों को खुश करना पड़ता है और कई बार उनकी अनुचित मांगों और प्रस्तावों को स्वीकार करना पड़ता है, जिन्हें वह स्वयं पसंद नहीं करता है। उसे अपने दल तथा निर्वाचन क्षेत्र के परस्पर विरोधी हितों में समाधान स्थापित करना होता है। विधायक के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती यह होती है कि उसे अपने निर्वाचन क्षेत्र के हितों तथा अपने राज्य और देश के हितों में सामंजस्य स्थापित करना होता है। यह सुविदित है कि इधर के वर्षों में क्षेत्रीय समस्याएं उभरी हैं और कभी–कभी क्षेत्रीय हितों, प्रांतीय हितो तथा राष्ट्रीय हितों में द्वन्द पैदा हुआ है। कभी–कभी किसी क्षेत्र में सशक्त हिंसक आन्दोलन उठ खड़े होते है इसका अर्थ यह है कि विधायक ने उस क्षेत्र की समस्याओं पर ठीक से ध्यान नहीं दिया और क्षेत्र उपेक्षित बना रहा। इससे यह भी सिद्ध होता है कि लोगों को क्षेत्रवाद के खतरों से अवगत नहीं कराया गया। विधायक की सच्ची अग्नि परीक्षा ऐसे ही क्षणों में होती है क्योंकि उसे क्षेत्रीय भावनाओं के साथ राष्ट्रीय भावनाओं तथा देश की एकता व अखंडता को भी ध्यान में रखना पड़ता है।

एक विधायक को जनता व देश के कल्याणकारी कार्य ईमानदारी से करना चाहिए। उसके सामने यही लक्ष्य रहना चाहिए कि जनहित में कार्य होते रहे, प्रदेश व देश का समुचित विकास होता रहे, राष्ट्र की अखंडता व एकता बनी रहे और उसके क्रियाकलापों से देश की आन–बान–शान बनी रहे। अपनी बहुमुखी भूमिका का निर्वाह कर सांसद या विधायक संसदीय शासन प्रणाली में जनता की आस्था मजबूत कर देश की महती सेवा कर सकते हैं।

संदर्भ

1. *फीरोज गांधी प्रेरक व्यक्तित्व संपादक डॉ0 राम बहादुर वर्मा, पृष्ठ 13, प्रकाशक–फीरोज गांधी कालेज, रायबरेली (2003)*
2. *संसदीय पत्रिका, खंड–30, अंक–4, दिसम्बर 84, पृष्ठ 224, प्रकाशक–लोकसभा सचिवालय, नई दिल्ली (1986)*
3. *संसदीय पत्रिका, खंड–30, अंक–4, दिसम्बर 84, पृष्ठ 223, प्रकाशक–लोकसभा सचिवालय, नई दिल्ली (1986)*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 96-99

संस्कृत अलङ्कार शास्त्र के आचार्य ''भट्टदेव शङ्कर पुरोहित''

*डॉ० नीलम पाण्डेय**

संस्कृत साहित्य के विरचन एवं चिंतन क्षेत्र में आदिकाल से एक अभिमान्य धारणा ने परम्परा का स्वरूप प्राप्त कर लिया है कि ''कीर्तिर्यस्य स जीवति'' अर्थात् जिसकी कीर्ति होती है, वह कीर्ति रूपी काया से सदैव जीवित रहता है। यही परम्परा एक प्रबल कारण बनकर संस्कृत रचनाकारों एवं चिंतकों को अपनी कृति में स्वयं के जीवन वृत्त विषयक तथ्यों को प्रस्तुत करने से वंचित करती रही, जिसकी परिणामी हानि ने उन कवियों एवं चिंतकों के इतिवृत्त परक ज्ञान की आज तक बाधा बनी रही है। इसीलिये उनके वंश, जाति, जन्म, स्थान, माता–पिता आदि का परिज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता रहा है। एतदर्थ अन्तः साक्ष्यों एवं वाह्य साक्ष्यों को आधार बनाकर ही हम उनके जीवन परिचय का समाकलन करते रहे हैं।

ज्ञातव्य है कि संस्कृत अलङ्कार शास्त्रियों की सुदीर्घ सरणि में श्रेष्ठ गमनकर्त्ता भट्टदेवशंकर पुरोहित भी उक्त परम्परा के पोषक एवं प्रवर्धक आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इन्होंने भी अपने वंश, जाति, कुल, काल आदि विषयक तथ्यों का विशेष रूप से स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है। एक मात्र अन्तः वाह्य साक्ष्यों के समीक्षणों से ही इनके विषय में ज्ञान प्राप्त होता है।

प्रस्तुत शोध लेख अलंकार शास्त्र के आचार्य भट्टदेव शंकर जिनकी उपाधि 'पुरोहित' थी, के सम्यक् संज्ञान हेतु एक परिचयात्मक विवेचन करना है। जो अभी तक अल्प विदित रहा है, एतदर्थ उनके जन्म काल तथा उनकी अलंकार शास्त्रीय रचना का सामान्य विवरण प्रस्तुत करना अभीष्ट है।

ज्ञातव्य है कि आचार्य भट्टदेव शंकर ने 'अलंकार मंजूषा' नामक अपनी अलंकार शास्त्रीय रचना को विरचित कर यत्र–तत्र अपने सम्बन्ध में किंचिद–किंचिद संकेत किया है, किन्तु वह पूर्ण संज्ञान प्रदान नहीं करते हैं। अन्तः एवं वाह्य साक्ष्यों के सम्यक् परशीलन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने अपने पूर्ण आचार्यों में जयदेव, अप्पय दीक्षित एवं पण्डित राज जगन्ननाथ का सादर नामोल्लेख किया है।[1] जो उनके पूर्ववर्ती अलंकार शास्त्र के मूर्धन्य आचार्य रहे हैं। ध्यातव्य है कि आचार्य जयदेव का समय 1250 ई०

* *असिस्टेंट प्रोफेसर, कामता सिंह गर्ल्स पी०जी० कॉलेज, झूँसी, प्रयागराज*

के पूर्व तथा अप्पय दीक्षित का समय 14वीं शताब्दी के पश्चात् निश्चित हुआ है। इसके अतिरिक्त पण्डित राज जगन्ननाथ 17वीं शताब्दी के मध्य (मुगल काल) के समय के सिद्ध हैं। अतः भट्टदेव का काल तदन्तर निश्चितव्य है, ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर अलंकार मंजूषा के उदाहरणों में माधव राव प्रथम के उल्लेख से सिद्ध होता है कि भट्टदेव शंकर उनके पुरोहित थे।[2] इसी अनुक्रम में यह भी उल्लेखनीय है कि अलंकार मंजूषा के अन्तर्गत बालकृष्ण शास्त्री एवं न्यायाधीश रामशास्त्री इन दोनों आचार्यों के नामों का उल्लेख हुआ है।[3] जिनका काल 17वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध सिद्ध होता है। उक्त साक्ष्यों के आधार पर सुविदित है कि आचार्य भट्टदेव पुरोहित का समय 1725 ई० से लेकर 18वीं शताब्दी पर्यन्त माना जा सकता है। इनके पिता का नाम नहानभायी तथा माता का नाम ताराम्बा तथा गुरू का नाम बालकृष्णानन्द सरस्वती था।[4]

वस्तुतः मातृ भक्त भट्टदेव शंकर बहुदेवतावाद के प्रबल समर्थक थे। भारतीय संस्कृति की परम्परा के निर्वहन में भगवान श्री गणेश तथा श्री रामचन्द्र की स्तुति विहित है। जो उनकी आस्था का द्योतन करता है। अपनी माता की स्तुति में अग्रलिखित श्लोक अवलोकनीय है।

चन्द्रविभूषित भालं गौरीबालं गणेश मणिभालम्।

विघ्न विघातायातं स्मरामि बलदेवरिपुणाम्।।[5]

अलंकार शास्त्रीय परम्परा को गतिमय तथा बलान्वित करने में आलोच्य आचार्य ने अपने पूर्वाचार्यों की अवधारणाओं का समादर किया है। अपने ग्रन्थ विरचन में समावेश किया है। इस प्रकार इन्होंने दण्डी, जयदेव तथा अप्पय दीक्षित और पण्डित राज जगन्ननाथ जैसे आचार्यों के मतों का आदरपूर्वक उल्लेख किया है जिसमें खण्डन वृत्ति नहीं अपितु मण्डन वृत्ति का अनुसरण किया है। जो उनकी गुणग्राह्यता का द्योतक है। उक्त आचार्यों में भी सर्वाधिक अनुहरण तथा अनुकरण अप्पय दीक्षित का किया गया है। संग्रह वृत्ति के कारण उन्होंने आचार्य रूय्यक, श्री हर्ष तथा अप्पय दीक्षित के ग्रन्थों से उद्धरण संग्रहीत किये हैं।

अवधेय है कि अलंकार मंजूषा नामक आकरग्रन्थ की रचना के अतिरिक्त 'विश्व सार युद्ध वर्णन' नामक एक और अन्य शास्त्रीय ग्रन्थ की रचना भी इन्होंने किया है। जिसमें विश्वास राव का यशो वर्णन है, किन्तु खेदस्पद तथ्य है कि यह ग्रन्थ सम्प्रति स्वतंत्र रूप में अनुपलब्ध है। इसके अतिरिक्त 'अमरूक शतक' नामक शतक की संस्कृत व्याख्या का लेखन भी किया है। इन तीनों कृतियों में अलंकार मंजूषा कवि भट्टदेव शंकर पुरोहित को अलंकार की पंक्ति

में आदर पूर्वक स्थान प्राप्त हैं। अलंकार मंजूषा के अद्योपान्त विश्लेषणों के आधार पर स्पष्ट होता है कि इस ग्रन्थ का विस्ताण कुल 132 कारिकाओं में किया गया है। जिसमें सूत्र, वृत्ति तथा उदाहरण उपन्यस्त हैं कुल 106 अलंकारों का निरूपण करते हुये अन्य 9 अलंकारों को सूत्रात्मक शैली में उपनिबद्ध किया है। कुल श्लोकों की संख्या 388 है तथा अलंकार मंजूषा के छन्दो विधान अग्रक्रम में दृष्टव्य हैं– 1. अनुष्टुप, 2. उपजाति, 3. शार्दूलविक्रिडित, 4. शिखरिणी, 5. स्वागता, 6. द्रुत विलम्बित, 7. इन्द्रवज्रा, 8. इन्द्रवंशा, 9. रथोद्धता, 10. स्रग्धरा, 11. पृथ्वी, 12. मालिनी, 13. वसंत तिलका, 14. पंच चामर, 15. शालिनी, 16. पुष्पिताग्रा, 17. प्रमिताक्षरा, 18. वंशस्थ, 19. आर्या, 20. गीति

इसी अनुक्रम में यह भी उल्लेख्य है कि भट्टदेव शंकर पुरोहित कृत अलंकार मंजूषा पर अप्पय दीक्षित का सर्वाधिक प्रभाव है। जिसे अग्रवर्णनों के विन्यास में देखा जा सकता है।

अलंकार मंजूषा	कुवलयानन्द
अनन्वय कारिका 3	अनन्वय कारिका 10
रूपक कारिका 10	रूपक कारिका 17
स्मृति, भ्रान्ति सन्देह कारिका 13	स्मृति, भ्रान्ति सन्देह कारिका 24
उत्प्रेक्षा कारिका 20, 21	उत्प्रेक्षा कारिका 32
अतिशयोक्ति कारिका 22	अतिशयोक्ति कारिका 36
दृष्टान्त कारिका 32, 34	दृष्टान्त कारिका कुवलयानन्द के पूर्वाद्ध से
व्यतिरेक कारिका 37	व्यतिरेक कारिका 57
सहोक्ति कारिका 38	सहोक्ति कारिका 58
विनोक्ति कारिका 39	विनोक्ति कारिका 59
श्लेष कारिका 42	श्लेष कारिका 64
प्रस्तुतांकुर कारिका 44	प्रस्तुतांकुर कारिका 67
पर्यायोक्ति कारिका 45	पर्यायोक्ति कारिका 68
व्याजस्तुति कारिका 47	व्याजस्तुति कारिका 70
आक्षेप कारिका 44	आक्षेप कारिका 73

असम्भव कारिका 58	असम्भव कारिका 84
असंगति कारिका 59	असंगति कारिका 85
विषम कारिका 61	विषम कारिका 88

पूर्वतन विवेचनों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अलंकार शास्त्रीय परम्परा के संवर्धन में आचार्य भट्टदेव शंकर पुरोहित कृत 'अलंकार मंजूषा' का महनीय योगदान रहा है। आचार्य पुरोहित ने अपनी स्वोपज्ञता से किन्तु पूर्वाचार्यों की अवधारणाओं के आदर में इस आकर ग्रन्थ विरचन के माध्यम से एक नूतन आयाम और दिशा की स्थापना प्रदान करने में सफलता प्राप्त किया है, जो स्तुत्य प्रयास के रूप में सदैव आचार्य भट्टदेव शंकर पुरोहित को पठनीय, स्मरणीय और मननीय बनाता है।

संदर्भ

1. *अलंकार मंजूषा– एल०एल० थापेकर, आर्या संस्कृत प्रेस 178/17, सदाशिव तिलक रोड, पूना–2*
2. *तदेव, श्लोक–8, तस्य शुद्धता वंश करीरा सूदया, पर विभेद समर्थाः। राघवो रघुपते समतेजाः वाजिराज तनयः किल साक्षात्*
3. *तदेव, श्लोक संख्या 24, वृथामिमानो अक्षिपदो महामुने वृथैव दर्पः कणमुडमहाशितः श्री रामशास्त्री भवतीह तादृशो न कि भुवि श्री नृपमाधवा चितः।। तथा द्रष्टव्य है– काव्यशास्त्र का इतिहास, लौकिक संस्कृत साहित्य का इतिहास–आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, पृ० 363–400*
4. *तदेव, स्वामी श्री बालकृष्णनन्द सरस्वती, प्रासादो विजयतेराम श्लोक सं० 2*
5. *तदेव चन्द्र विभूषित भालं गौरी बालं गणेश मणिभालम्।*

   विघ्न विघातायातं स्मरामि बलदेवरिपुणाम्।।

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 100-109

1857 ई. के स्वतंत्रता आन्दोलन में जौनपुर की भूमिका

*डॉ. रेफाक अहमद**
*आलोक कुमार***

सारांश

भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में जौनपुर का योगदान महत्वपूर्ण रहा है, क्योकिं जौनपुर पूर्वी उत्तर प्रदेश के सबसे जागरूक जनपदों की श्रेणी में रहा है। इसके कारण जौनपुर राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष में बढ़ चढ़ कर भूमिका निभाई है। किंतु जब भी भारत में स्वतंत्रता संघर्ष की बात की जाती है तो जौनपुर का जिक्र या तो नहीं किया गया या अपेक्षाकृत बहुत ही कम महत्व दिया गया है, यानि तुलनात्मक रूप से जौनपुर के योगदान का मूल्यांकन सही ढंग से नहीं किया गया है। इसी तरह जब हम 1857 ई. में हुए स्वतंत्रता आंदोलन जिसे "प्रथम स्वतंत्रता संग्राम" की संज्ञा दी जाती है, की बात करते है तो उसमें जौनपुर का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण था। किन्तु 1857 ई. के स्वतंत्रता संघर्ष में बढ़ चढ़ कर भूमिका निभाने के बावजूद जौनपुर को अन्य स्थानों की अपेक्षा बहुत कम महत्व दिया गया है।

मुख्य शब्द : *1857, जौनपुर, स्वतंत्रता संघर्ष, आन्दोलनकारी, अंग्रेज*

वर्तमान में क्षेत्रीय इतिहासलेखन[1] के बढ़ते महत्त्व को देखते हुये इस शोध पत्र में जौनपुर जनपद को लिया गया है। 1990 के दशक के बाद एरिक स्टोक्स, ताप्ती रॉय, रुद्रांग्शु मुखर्जी और बद्रीनारायन के क्षेत्र–विशेष अध्ययनों के साथ, इतिहासलेखन 1857 के लोकप्रिय आयामों की ओर मुड़ गया है, जिसमें विभिन्न क्षेत्रों में 'विद्रोह' की विविध प्रकृति की जांच की गई है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है की 1857 ई. के स्वतंत्रता आंदोलन में जौनपुर के लोगों के द्वारा अपनी मातृभूमि की आजादी के लिए किये गये त्याग एवं बलिदान को इतिहास के पन्नों पर यथोचित स्थान दिया जाय।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत मेरठ से हुई और आंदोलनकारी मेरठ से होते हुए दिल्ली तक जा पहुंचे, मेरठ से दिल्ली तक पहुंचने में बीच के जो भी क्षेत्र आए वो भी आंदोलन की आगोश में आते गए किंतु इतिहास के पन्नों में इन क्षेत्रों का जिक्र नगण्य है। इसी

* *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, आई.एस.डी.सी., इलाहाबाद विश्वविद्यालय., प्रयागराज.*
** *शोध छात्र, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, आई.एस.डी.सी., इलाहाबाद विश्वविद्यालय. प्रयागराज.*

तरह जब हम 1857 ई. के स्वतंत्रता समर की बात करते हैं तो इसमें प्रमुख रूप से लखनऊ, कानपुर, आगरा, इलाहाबाद, बरेली, झांसी, मथुरा तथा ग्वालियर इत्यादि जिलों का नाम हमें इतिहास के पन्नों पर दिखाई देता है, किंतु स्वतंत्रता समर में अपने साहस व वीरता के बल पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले अन्य जिलों की चर्चा बहुत ही कम देखने को मिलता है, जबकि इन जिलों में भी आंदोलन का प्रसार उतना ही उग्र था जितना कि प्रमुख जिलों में, इसलिए यह बेहद ही आवश्यक हो जाता है कि प्रमुख जिलों के साथ–साथ इन जिलों को भी इतिहास के पन्नों पर महत्व दिया जाए। इसी तरह जौनपुर भी उन्हीं जिलों की श्रेणी में आता है जिसका जिक्र स्वतंत्रता समर में या तो नहीं किया गया है या तुलनात्मक रूप से बेहद कम किया गया है।

10 मई 1857 ई. को शुरू हुए भारतीय स्वतंत्रता संग्राम ने धीरे धीरे पूरे उत्तर भारत को अपनी आगोश में ले लिया, जिससे जौनपुर जनपद भी अछूता न रहा, जौनपुर में यह आन्दोलन लगभग एक वर्षों तक चला। जौनपुर में इस आन्दोलन की शुरूआत 05 जून 1857 ई. को हुआ।[2] जौनपुर में जब आन्दोलन की शुरुआत हुई तब वहा का शासन प्रबंध मैजिस्ट्रेट एच.फेन तथा ज्वाइंट मैजिस्ट्रेट मि. कूपेज के हाथ में था तथा कोष की रक्षा करने के लिए लुधियाना सिक्ख रेजिमेंट की एक टुकड़ी जौनपुर में तैनात की गयी थी और इसके अधिकारी लेफ्टिनेट मारा थे।[3] बनारस में आन्दोलन ने 04 जून तक भयानक रूप ले लिया था और बनारस के सिपाही तेजी से जौनपुर की ओर बढ़ते आ रहे थे यह समाचार सुनते ही जौनपुर में तैनात सिक्ख सैनिकों ने खुला विद्रोह कर दिया। 05 जून को विद्रोह की ज्वाला ने जौनपुर को अपनी आगोश में ले लिया। सिक्ख सैनिको ने सबसे पहले मि. मारा को गोली

मार दी और उसके बाद मि. कूपेज की हत्या कर दी, इसके बाद सैनिकों ने खजाने को लूट लिया तथा अंग्रेजों द्वारा तैनात किये गये अधिकारियों को हथियार छोड़कर भागने पर मजबूर कर दिया।[4] जौनपुर में आन्दोलन की शुरुआत होते ही जार्ज मैथ्यूज, आई. रिचर्डसन, सी. वेलेसकी और जे. कासरेट अपने को असुरक्षित समझ कर अपने विश्वास पात्र शुभदान सिंह के साथ उनके गाँव भुटैरा चले गये। जौनपुर छोड़ते समय मि. मैथ्यूज के कुछ कर्मचारियों ने उनसे अपने वेतन की मांग की और वेतन न देने पर मैथ्यूज को विद्रोहियों के हवाले कर देने की धमकी दी, किन्तु मैथ्यूज द्वारा उनकी मांग अस्वीकार कर दी गयी। फलस्वरूप सभी कर्मचारी विद्रोहियों से जा मिले।[5]

बनारस–डोभी–आजमगढ़ राजमार्ग के किनारे डोभी नामक गाँव के राजपूतों ने कभी किसी का अधिपत्य स्वीकार नहीं किया और डोभी के इन राजपूतों ने विद्रोहियों के साथ मिलकर विद्रोह का विगुल फूंक दिया। जब डोभी के राजपूतों को यह पता चला कि राय हींगन लाल जो कि एक सरकारी नौकर था, ने कुछ अंग्रेजों को अपने घर पर शरण दी है, तो उन्होंने उसके घर को घेर लिया लेकिन खतरे को महसूस करते हुए राय हींगन लाल ने इन अंग्रेजों को पसेवा के नील फैक्ट्री में भेज दिया और वह स्वंय वंहा से 09 जून को कर्मचारियों के संरक्षण में बनारस आ गया।[6] डोभी के राजपूतों ने पसेवा फैक्ट्री में छुपे हुए 09 अंग्रेजों को मार डाला और इस हत्याकांड के वजह से डोभी के राजपूत अंग्रेजों की नज़रों में खटकने लगे थे किन्तु अब तक अंग्रेजों को ऐसे ग्रामीण क्षेत्रों का दमन करने के लिए नही जाना पड़ा था।[7] मि. फेन डोभी के आन्दोलनकारियों का दमन करने का विचार बनाया किन्तु जब डोभी के राजपूतों की वीरता और साहस की बात उसने सुनी तो यह विचार त्याग दिया। आन्दोलनकारी अब धीरे–धीरे चारो तरफ कब्ज़ा करते जा रहे थे, अंग्रेज अधिकारियों के बीच उनका खौंफ इस हद तक हो चुका था की मि. सांडर्स तथा कुछ अन्य अंग्रेजों ने जौनपुर के किले में औरतों की पोशाक पहन कर अपनी जान बचायी।[8] और इस स्वतंत्रता संग्राम की ज्वाला यहाँ तक आ पहुंची की नगर और जिले में ब्रिटिश शासन समाप्त हो गया और सम्पूर्ण जिला स्वतंत्र हो गया तथा एक विधवा के नेतृत्व में कुछ महिलाओं और बच्चों ने मिलकर सरकारी खजाना लूट लिया।[9]

आंदोलनकारियों में स्वाधीनता की भावना इतनी अधिक मजबूत थी कि उन्होंने यह नहीं सोचा कि वे आधुनिक शस्त्रों से लैस तथा सैनिक शिक्षा में निपुण सैन्य दल का मुकाबला कैसे करेंगे? किंतु अंग्रेजों से अपनी स्वाधीनता की भावना ने उन्हें साहसी बना दिया था, संपूर्ण भारत में यह पहली मिसाल है कि देशभक्त ग्रामीणों ने एक शिक्षित और संगठित सेना का मुकाबला किया।[10] और उन्होंने अपनी तलवारों, भालों और कुछ कारगर बंदूकों से ही अंग्रेजों का कड़ा प्रतिरोध किया।[11] 05 जून 1857 ई. को ही एक अंग्रेज अधिकारी सार्जेंट डिगवुड हौज नामक गांव में सड़क पर बनारस की ओर से जौनपुर आ रहे आंदोलनकारियों की गोली का शिकार हुए, अंग्रेजों द्वारा इस हत्याकांड के सिलसिले में कुछ लोगों को गिरफ्तार किया गया तथा 06 महीने बाद इन लोगों पर मुकदमा चलाया गया और अंततः 15 लोगों को फांसी की सजा दे दी गई तथा अन्य 08 लोगों को 1860 ई. में काला पानी की सजा हुई।[12] इसी तरह 06 जून को आदमपुर गांव में जंकी सिंह के नेतृत्व में सैकड़ों लोगों ने

अंग्रेज अधिकारियों को घेर लिया तो शुभदान सिंह के परिवार के सदस्यों ने इनका मुकाबला किया। मुठभेड़ में 07 लोग मारे गए। शुभदान सिंह तथा उनके मित्र सूरजमन मिश्र ने अंग्रेजों से गांव छोड़ने को कहा किंतु अंग्रेजों द्वारा उन्हें बसारतपुर छोड़ने का आग्रह किया गया जिस पर शुभदान सिंह, अंगनू सिंह तथा दलजीत सिंह अंग्रेजों को बसारतपुर छोड़ने के लिए राजी हुए किंतु रास्ते में पड़ने वाली एक नदी से अंग्रेज अधिकारियों को बिना कोई सूचना दिए वे लोग लौट आए।[13]

डोभी के राजपूतों ने 26 जून को संचार व्यवस्था के सभी साधन नष्ट कर अंग्रेजों का खुला विरोध किया इन विद्रोहियों का दमन करने के लिए प्रशासन के एक अधिकारी मि. जैकिन्सन को भेजा गया किन्तु 23 जुलाई को रज्जब अली के नेतृत्व में लगभग 400 विद्रोही सैनिकों ने जौनपुर कोतवाली में आक्रमण कर कोतवाली में बंद लोगों को स्वतंत्र करा लिया और सरकारी सामानों को नष्ट कर दिया। अचानक हुए इस आक्रमण से पुलिस को मौका न मिला और जब तक उनकी सहायता के लिए सैनिक पहुँचते आन्दोलनकारी भागने में सफल हो गये।[14] सितम्बर महीने में मि. लिंड, मि. जैकिन्सन, मि. कारनेगी तथा मि. एस्टेल ने जौनपुर में शांति स्थापित करने के लिए पुलिस विभाग को पुनर्गठित किया। 18 सितम्बर को जौनपुर–आजमगढ़ सीमा पर आन्दोलनकारियों के इकट्ठा होने की सूचना जब कर्नल राटन को मिली तो उसने कैप्टन ब्वायालू के नेतृत्व में 1200 गोरखाओं की एक सैनिक दल उनके दमन हेतु भेजी।[15] 27 सितम्बर को मुबारकपुर में राजा इदारत जहां का कर्नल राटन के नेतृत्व वाली सैन्य दल से मुकाबला हुआ। गोरखा सैनिकों ने तुरंत मुख्य द्वार पर तोपें दागना शुरू किया और थोड़े से संघर्ष के बाद राजा इदारत जहां और दूसरे विद्रोही फ़साहत जहाँ पकड़ लिए गये।[16] राबर्ट टेलर ने इदारत जहां तथा फ़साहत जहाँ को सैनिक न्यायलय द्वारा मृत्यु दंड दिए जाने का उल्लेख किया है।[17] तथा इदारत जहां की संपत्ति को भी जब्त कर लिया गया था।[18] 28 सितम्बर को आदमपुर में अंग्रेजों की सैन्य दल की एक टुकड़ी से अमरसिंह की विद्रोही सेना से मुकाबला हुआ। 02 अक्टूबर को विद्रोही नेता मलिक बक्स की अंग्रेजी सैनिक टुकड़ी से संघर्ष हुआ तथा 05 अक्टूबर को विद्रोहियों के दमन के लिए गयी सैन्य दल का मुख्य भाग वापस जौनपुर आ गया।[19]

इसी तरह 14 अक्टूबर 1857 ई. को भैरो प्रसाद तथा ईश्वरी प्रसाद को जिला न्यायलय ने सरकार के खिलाफ आन्दोलनकारियों से संपर्क करने तथा निजी डाक के द्वारा समाचार भेजने का दोषी पाया तथा गिरफ़्तारी के

समय इन लोगों के पास कपड़े का एक झोला, एक चाकू, बन्दूक की सात गोलियां और कुछ आपत्तिजनक पत्र पाए गये। इसी के आधार पर 16 अक्टूबर को भैरो प्रसाद, भवानी, बुद्धू, नोहारी तथा मेंहदी को सरकार के विरुद्ध षड़यंत्र करने के अपराध में मृत्युदंड दे दिया गया।[20] अक्टूबर में ही खुदवा गाँव के पास आन्दोलनकारियों एवं अंग्रेजों के बीच संघर्ष हुआ। विद्रोही इससे भी बड़ी संघर्ष की योजना चांदा नामक स्थान के लिए बना रहे थे। पृथ्वीपाल सिंह, फागुन सिंह, एवं श्रीपाल सिंह द्वारा लिखे गए पत्र से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने अदलामऊ तथा बेलखुर के जमींदारों से आन्दोलनकारी नेताओं ने सहायता मांगी थी तथा उन्होंने अंग्रेज अधिकारी और उनके शुभचिंतकों की हत्या करने की योजना बनायीं थी और आन्दोलनकारियों को सैन्य बल के साथ चांदा में इकट्ठा होने का सन्देश दिया था।[21]

चांदा में अंग्रेजों से मुकाबला करने के लिए आन्दोलनकारियों की तैयारी की सूचना मिलते ही अंग्रेजों ने गोरखा सैन्य दल के साथ आन्दोलनकारियों को रोकने के लिए चांदा की तरफ चल दिए किन्तु बीच में उन्होंने रुक कर आन्दोलनकारियों की स्थिति का जायजा लेने के लिए गुप्तचरों को भेजा, और जब अंग्रेजों को यह पता चला कि आन्दोलनकारियों की स्थिति मजबूत है तो उन्होंने उन पर दो तरफ से हमला करने की योजना बनायी 30 अक्टूबर को आन्दोलनकारियों तथा अंग्रेजों के बीच संघर्ष हुआ इस संघर्ष में अंग्रेजी सेना को अधिक हानि हुआ तथा अंग्रेज अधिकारी कर्नल मदनमान सिंह मारे गये और लेफ्टिनेंट गंभीर सिंह बुरी तरह घायल हो गये। अंततः अंग्रेजों की हार हुयी और आन्दोलनकारियों ने अंग्रेजों से उनकी एक छोटी बन्दूक भी छीन लिया।[22] इसी तरह 30 अक्टूबर को ही कोईरीपुर गाँव के पास आन्दोलनकारी नाजिम मेंहदी हसन तथा गोरखा सैन्य दल के बीच संघर्ष हुआ।[23]

07 दिसंबर 1857 ई. को जौनपुर–इलाहाबद के सीमा पर 15 हजार आन्दोलनकारियों की सूचना मिलने पर जौनपुर के जिला मजिस्ट्रेट ने इलाहबाद के जिला मजिस्ट्रेट को इन आन्दोलनकारियों के इकट्ठा होने के खतरे से अवगत कराया तथा जौनपुर जिला मजिस्ट्रेट ने एक गोरखा सैन्य टुकड़ी उस तरफ भेजा। 18 दिसंबर को कोईरीपुर गाँव में लगभग नौ सौ आन्दोलनकारियों की भीड़ ने एक अंग्रेज नील उत्पादक के नील कारखाने में आग लगा दी और 18 दिसंबर को ही आन्दोलनकारियों के इसी दल ने बदलापुर थाने पर भी हमला किया था।[24] खुटहन तहसील के तिघरा मुख्यालय पर राजा इदारत जहां के प्रतिनिधि मकदूम बख्श ने 24 दिसंबर 1857 ई. को आक्रमण कर

तिघरा पर कब्ज़ा कर लिया तथा तहसील को नष्ट कर दिया, पंडित किशन नारायण जो कि पहले से ही विद्रोहियों से तहसील की रक्षा कर रहा था ने मकदूम बख्श का वीरता से प्रतिरोध किया किन्तु आवश्यक साधनों की कमी तथा आन्दोलनकारियों की संख्या ज्यादा होने के कारण मकदूम बख्श की सेना के आक्रमण का सामना नही कर सका और पं. किशन नारायण को तिघरा छोड़कर भागना पड़ा,[25] जिला प्रशासन जब तक सैनिक सहायता भेजता तब तक आन्दोलनकारी जा चुके थे।[26]

जौनपुर की मडियांहू तहसील के नेवढ़ियां के विद्रोही ठा. संग्राम सिंह 1857 ई. के विद्रोहियों में प्रमुख थे 1857 ई. में जौनपुर पर कब्ज़ा करने के बाद वे अपने दल के साथ लखनऊ तथा दिल्ली तक गए लेकिन इसी बीच अंग्रेजों ने पुनः इन क्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया। संग्राम सिंह को पकड़ने की अंग्रेजों ने बहुत कोशिश की लेकिन वे असफल रहे। उन्होंने अंग्रेजों से छापामार युद्ध किया और जब वे अंग्रेजों का प्रतिरोध कर रहे थे तो उसी बीच उनकी बेटी का विवाह था और उन्हें उसमे शामिल होना था, अंग्रेजों को लगा की ये उनको गिरफ्तार करने का बढ़िया अवसर होगा और उन्होंने उनके गाँव पर घेरा डाल दिया किंतु उनके गाँव के लोगों ने उनकी सहायता करने के लिए आस–पास के कई गाँव में मंडप सजा दिया और अंततः संग्राम सिंह अपनी बेटी का कन्यादान कर अंग्रेजों को चकमा देकर निकल गये।[27] आगे चलकर संग्राम सिंह ने 11 जुलाई को मडियांहू तहसील के एक अंग्रेजों के समर्थक की संपत्ति लूट ली चूँकि आन्दोलनकारियों की संख्या अधिक होने के कारण मडियांहू के थानेदार ने भी कोई कार्यवाही नही की।[28]

इसी तरह जौनपुर के जमींदार झूरी सिंह ने 300 आन्दोलनकारियों के नेतृत्व में जौनपुर, बनारस, मिर्जापुर तथा इलाहबाद के विभिन्न अंग्रेजी ठिकानो पर हमले किये। परिणाम स्वरुप अंग्रेजों ने इनके गाँव को जला दिया इसके प्रतिरोध में झूरी सिंह ने अंग्रेजी नील के गोदाम पर आक्रमण करके ज्वाइंट मजिस्ट्रेट मि. मूरे तथा दो अन्य अंग्रेज अधिकारीयों की हत्या कर दी।[29] झूरी सिंह आन्दोलनकारियों के साथ 05 मई को बादशाहपुर से इलाहाबाद में प्रवेश किया और इलाहाबाद जिला प्रशासन ने प्रतिरोध करने के लिये कर्नल बरक्ले को भेजा। इसके बाद झूरी सिंह ने जौनपुर में पुनः प्रवेश करके आंदोलनकारियों के साथ मछलीशहर बाजार को लूट लिया। इसके बाद अंग्रेज प्रशासन ने एक सैनिक दल झूरी सिंह को पकड़ने के लिए भेजा लेकिन वे उन्हें पकड़ न सके।[30]

यद्यपि 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत तो मेरठ से हुई थी किन्तु शीघ्र ही जौनपुर भी इसकी आगोश में आ गया जौनपुर के जिला प्रशासन को इस बात की जरा सी भी आशंका न थी कि जौनपुर में भी आन्दोलन इतना वीभत्स रूप ले लेगा किन्तु जितनी तेजी से आन्दोलन ने जौनपुर को अपनी आगोश में लिया उसने अंग्रेजों को सोचने का मौका तक न दिया और अचानक आन्दोलन शुरू हो जाने से अंग्रेज अधिकारीयों को शहर छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा और आन्दोलनकारियों ने पूरे शहर पर अपना कब्ज़ा जमा लिया। शुरुआत में आन्दोलनकारियों ने हिंसक तरीका अपनाया इसलिए अंग्रेजों ने भी आन्दोलन को कुचलने के लिए बहुत ही कठोरता से दमनात्मक कार्यवाही की।

मोहबतपुर गाँव में आन्दोलनकारियों के एक दल के होने की सूचना जब अंग्रेजों को मिली तो मि. वेनेविल्स के नेतृत्व में वहा पर सैनिक टुकड़ी भेजी गयी हालाँकि कुछ आन्दोलनकारी भागने में सफल रहे लेकिन कुछ लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया।[31] इसी तरह कोतवाली पर आक्रमण करने वाले लोगों पर भी अंग्रेजों ने दमनात्मक कार्यवाही की किंतु वे उनके हाथ नही आये लेकिन आस–पास के गांवों के लोगों को, जिन पर हमला करने की आशंका थी को पकड़कर गिरफ्तार कर लिया गया।[32] अंग्रेजी सरकार ने आन्दोलनकारियों की संपत्ति जब्त करनी शुरू की तथा उन्हें बंदी बनाकर मुकदमा चलाया गया और आन्दोलन में अंग्रेजी सरकार की सहायता करने वाले लोगों को पुरस्कृत करने की संस्तुति की गयी।[33] बदलापुर के थानेदार ने राजाबाजार के राजा महेश नारायण सिंह की सहायता से आन्दोलनकारियों को बदलापुर छोड़ने के लिए विवश कर दिया तथा खुदाबख्श के नेतृत्व में आन्दोलनकारियों और अंग्रेजी सेना के बीच हुए संघर्ष में एक आन्दोलनकारी को गिरफ्तार कर लिया गया।[34]

लम्बी लड़ाई के बाद जब अंग्रेज आन्दोलनकारियों से सीधे लड़ाई में सफल न हो सके तो उन्होंने छल का सहारा लिया इसी प्रकार का एक वाकया सेनापुर गाँव में घटित हुआ, अंग्रेज अधिकारीयों ने विश्वासघात करके डोभी के 22 देशभक्त आन्दोलनकारियों को आम के पेड़ पर लटका कर फांसी दे दी[35] क्योंकि डोभी के राजपूतों ने अंग्रेजों को शहर छोड़ने के लिए विवश कर दिया था इसलिये अंग्रेजों का डोभी के राजपूतों के प्रति प्रतिशोध की ज्वाला जल रही थी।[36] इस प्रकार 22 देशभक्त शहीद हो गये अंग्रेजों को जब इतने से भी संतुष्टी नहीं हुई तो उन्होंने पेड़ पर लटकते शवों को गोलियों से छलनी कर

दिया।[37] कोईरीपुर के आन्दोलनकारियों तथा गोरखा सैन्य दल के मध्य हुये संघर्ष में गोरखा सैनिकों ने सुनियोजित ढंग से आक्रमण एवं गोलीबारी की जिसमे आन्दोलनकारी बुरी तरह पराजित हुये और इस संघर्ष में 12 आन्दोलनकारी मारे गये तथा 59 घायल हुये।[38]

इसी तरह 1857 ई. के आन्दोलनकारियों में बांके चमार की बहादुरी की भी जानकारी हमें स्रोतों द्वारा प्राप्त होती है जो दलित इतिहासलेखन, मार्जिनल इतिहासलेखन और सबाल्टर्न इतिहासलेखन के विकासक्रम को आगे बढ़ाता है। बांके चमार मछलीशहर के कुंअरपुर गाँव के रहने वाले थे। क्रांति के विफल होने के बाद अंग्रेजों ने बांके चमार और उसके 18 साथियों को बागी घोषित कर दिया और बांके चमार को गिरफ्तार करके फांसी पर लटका दिया गया। इस तरह इस बहादुर क्रन्तिकारी ने देश के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया।[39] और जौनपुर के इतिहास में अपना नाम स्वर्णिम अक्षरों में दर्ज कराया।

अंत में हम कह सकते है कि जौनपुर भी अंग्रेजी शासन के खिलाफ स्वतंत्रता संघर्ष का उतना ही साक्षी रहा जितना की अन्य सभी, 1857 ई. के स्वतंत्रता समर में भाग लेने तथा अपनी मातृभूमि की आजादी के लिए एक उत्कृष्ट इच्छा इसके कोने–कोने में दिखायी देती है तथा 1857 ई. के स्वतंत्रता संघर्ष का विश्लेषण करने पर यह पता चलता है कि जौनपुर में भी आन्दोलन का स्वरुप अत्यधिक व्यापक था और यह लगभग 01 साल तक चलता रहा और आन्दोलनकारियों को जिले के आम लोगों से लेकर जमींदारों तथा प्रभावशाली व्यक्तियों का सहयोग मिला जिसके दम पर जौनपुर में आन्दोलन का स्वरुप अन्य स्थानों की भांति अत्यधिक व्यापक दिखाई देता है। ऐसा माना जाता है कि जौनपुर में करीब 10 हजार लोगों ने अपनी स्वतंत्रता के लिये अपने प्राण न्यौछावर किये, किन्तु कालांतर में अंग्रेज गोरखा सेना की सहायता से जौनपुर में अपनी सत्ता प्राप्त करने में सफल रहे। फिर भी 1857 ई. के स्वतंत्रता संघर्ष ने पूरे जौनपुर को एक बंधन में बाँधने का काम किया। दलित, सीमांत वर्ग एवं सबाल्टर्न वर्ग ने भी स्वतंत्रता आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई इन्होंने ब्रिटिश हुकूमत की जड़ो को उखाड़ फेकने का निश्चय किया इससे यह स्पष्ट होता है कि यहाँ के लोगों ने जाति, धर्म तथा साम्प्रदायिकता को भुलाकर अपनी मातृभूमि की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति देने के लिए तत्पर थे।

सन्दर्भ

1. सैयद नजमुल रजा रिजवी, द रिबेल वर्ल्ड ऑफ़ 1857 : ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, कल्पज पब्लिकेशन, दिल्ली, 2021, पृ. 1–286.
2. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर, पब्लिश्ड बाई द गवर्नमेंट आफ उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर एंड द गवर्नमेंट प्रेस, लखनऊ, 1986, पृ. 180.
3. सय्यद इक़बाल अहमद, शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास, शिराज हिन्द प्रकाशन भवन, जौनपुर, 1968, पृ. 288.
4. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर, पूर्वोक्त, पृ. 180.
5. ट्रायल प्रोसीडिंग इन दी केस गवर्नमेंट वर्सेज दलजीत सिंह, शिवपाल सिंह एंड अदर्स, फाईल नं. 2/20, कलेक्ट्रेट म्यूटनी बस्ता, जौनपुर.
6. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर, पूर्वोक्त, पृ. 181.
7. गौरीशंकर सिंह, डोभी का इतिहास, कलकत्ता, 1982, पृ. 253.
8. वही, पृ. 253.
9. समय, सेवा प्रेस, जौनपुर, स्वतंत्रता संग्राम विशेषांक, पृ. 88.
10. कांग्रेस शताब्दी स्मारिका, जिला कांग्रेस कमेटी कार्यालय, जौनपुर, 1985, पृ. 18.
11. हूज हू आफ इंडियन मार्टायर्स, भाग 3, भारत सरकार शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय द्वारा प्रकाशित, पृ. 2.
12. विकास, सप्ताहिक पत्रिका, जौनपुर, शहीद अंक, 30 जनवरी 1957, पृ. 6.
13. ट्रायल प्रोसीडिंग इन दी केस गवर्नमेंट वर्सेज दलजीत सिंह, शिवपाल सिंह एंड अदर्स, फाईल नं. 2/2, कलेक्ट्रेट म्यूटनी बस्ता, जौनपुर.
14. फारेन डिपार्टमेंट नार्थ–वेस्ट प्राविन्सेज नरेटिव आफ दी इवेंट्स इन बनारस डिवीजन फार दी वीक एंडिंग, 1857, पृ. 14.
15. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर, पूर्वोक्त, पृ. 182.
16. रॉबर्ट टेलर, दि रिबैलियन ऑफ़ 1857 इन दि प्राविन्स ऑफ़ बनारस, 15 अक्टूबर, 1858, पैरा नं. 68, पृ. 20.
17. वही, पृ. 20.
18. जे.आर.रीड, रिपोर्ट ऑन दि डिस्ट्रिक्ट ऑफ़ आजमगढ़, कम्पाइल्ड इन कनेक्शन विद दि कम्प्लीशन ऑफ़ सिक्स्थ सेटिलमेंट, चैप्टर–1, सेक्शन 8, पैरा नं. 213, पृ. 68.
19. नरेटिव आफ दी इवेंट्स इन बनारस डिवीजन, पूर्वोक्त, पृ. 21.
20. ट्रायल प्रोसीडिंग इन दी केस गवर्नमेंट वर्सेज भैरो प्रसाद एंड ईश्वरी प्रसाद एंड अदर्स, फाईल नं. 1/15, कलेक्ट्रेट म्यूटनी बस्ता, जौनपुर.

21. एस.ए.ए.रिजवी, फ्रीडम स्ट्रगिल इन उत्तर प्रदेश, भाग 4, इन्फार्मेशन डिपार्टमेंट, उत्तर प्रदेश, लखनऊ, 1857–59, पृ. 212.
22. आगरा गवर्नमेंट गजट, 19 जनवरी 1858, पृ. 20.
23. नरेटिव आफ दी इवेंट्स इन बनारस डिवीजन, पृ. 21.
24. फरदर पेपर्स रिलेटिव टू दी म्यूटनीज इन दी ईस्टइंडीज,1857, इनक्लोजर 33, नं. 7, पृ. 76.
25. सैयद नजमुल रजा रिजवी, 1857 का विद्रोही जगत : पूरबी उत्तर प्रदेश, ओरियंट ब्लैक्स्वान प्रा. लि., हैदराबाद, भारत, 2018, पृ. 181.
26. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर, पूर्वोक्त, पृ. 183.
27. विकास, सप्ताहिक पत्रिका, जौनपुर, शहीद अंक, 30 जनवरी 1957, पृ. 7.
28. फोरेन डिपार्टमेंट नार्थ–वेस्ट प्राविंसेज नरेटिव आफ दी इवेंन्ट्स फार बनारस डिवीजन फार दी वीक एंडिंग, 14 अगस्त 1858.
29. हूज हू आफ इंडियन मार्टायर्स, भाग 3, पूर्वोक्त, पृ. 2.
30. फोरेन डिपार्टमेंट नार्थ–वेस्ट प्राविंसेज नरेटिव आफ दी इवेंन्ट्स फार इलाहबाद डिवीजन फार दी वीक एंडिंग, 16 मार्च 1858.
31. नरेटिव आफ दी इवेंट्स इन बनारस डिवीजन, पूर्वोक्त, पृ. 14.
32. वही, पृ. 14.
33. एस.ए.ए.रिजवी, फ्रीडम स्ट्रगिल इन उत्तर प्रदेश, भाग 4, पूर्वोक्त, पृ. 474.
34. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर, पूर्वोक्त, पृ. 182.
35. सैयद नजमुल रजा रिजवी, 1857 का विद्रोही जगत, पूर्वोक्त, पृ. 184.
36. चेतना पत्रिका, 1988, पृ. 49.
37. वही, पृ. 49.
38. नरेटिव आफ दी इवेंट्स इन बनारस डिवीजन, पूर्वोक्त, पृ. 21.
39. डी.सी. दिनकर, स्वतंत्रता संग्राम में अछूतों का योगदान, बोधिसत्व प्रकाशन, लखनऊ, 1990, पृ 59

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 110-118

स्वाधीनता संग्राम में महिलाओं का योगदान

*डॉ० दिवाकर त्रिपाठी**

*साधना***

वैदिक काल से ही हमारे समाज में नारियों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। हालांकि समाज में नारी को दोयम दर्जा दिया गया था फिर भी भारतीय संस्कृति की सनातन कामना "तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योर्मा अमृतगमय" की रही है। (बृहदारण्यक उपनिषद् 1.3.28)। जिसमें गिरकर उठने की जाग्रति बनी रहती है। भारत वर्ष की यही आधारभूत जिजीविषा है जिसका प्रमाण यहां की नारी शक्ति है। यहां की नारी शक्ति की प्रशंसा केवल भारतीय मनीषियों ने ही नहीं किया बल्कि विदेशियों ने भी किया है। जैसे कि जनरल ह्यूरोज ने झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के विषय में कहा है कि "यहां पर वह औरत सोई हुई है जो विद्रोहियों में एक मात्र मर्द थी।"[1] इसी प्रकार 19वीं सदी के सुधारवादियों का मानना था कि "उन्नत महिलाओं के बिना उन्नत पुरूषों और घरों की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।"[2] समाज की बहुत सी सामाजिक बुराइयों और कुरीतियों ने नारी की अस्मिता को प्रभावित करने की कोशिश की, लेकिन उन सब सामाजिक कुरीतियों और समाज द्वारा बनाए बंधनों को पीछे छोड़कर स्त्रियों ने अपनी एक अलग पहचान बनाई और अपने अस्तित्व को बरकरार रखा। इसी नारी शक्ति को रुपायित करते हुए सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के जनक स्वामी विवेकानंद ने अपने एक व्याख्यान में कहा था कि "यदि इस देश का सम्पूर्ण साहित्य नष्ट हो जाए, वेदों का अस्तित्व लुप्त हो जाए, कोई इतिहास न रहे, केवल

* *शोध निर्देशक, इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, डॉ० राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या*

** *शोधार्थी, इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, डॉ० राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या*

सीता का नाम और चरित्र हम लोगों को याद रहे तो हमारी कुछ भी क्षति नहीं हो सकती है क्योंकि उनकी महत्ता से हम फिर से सब कुछ तैयार कर सकते हैं वे ही हमारी माता हैं,हम लोग सीता की संतान हैं।" स्वामी विवेकानन्द की इस बात का समर्थन करते हुए तत्कालीन अन्य समाज सुधारकों का भी मानना था कि "जिस देश में महिलाएं उपेक्षित हैं, वह देश सभ्यता के क्षेत्र में कभी भी उल्लेखनीय प्रगति नहीं कर सकता।"[3]

19वीं शताब्दी में भारत की भूमि पर हो रहे सामाजिक सुधार आंदोलनों और आधुनिक विचारों के प्रभाव से हिन्दू समाज में नारियों के ऊपर लगाए गए सामाजिक बंधन और पुरानी रूढ़िवादी परम्पराएं कमजोर पड़ रहे थे और स्त्रियां घर की चौखट लांघकर चूल्हे चौके से बाहर निकलकर पुरुषों के कंधे से कन्धा मिलाकर अपनी एक अलग पहचान बनाने में लगी थी। स्त्रियों को इन सामाजिक बुराइयों और कुरीतियों से बाहर निकालने तथा वर्तमान स्थिति तक पहुंचाने में कई महापुरुषों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जिसमें राजाराम मोहन राय ने सती प्रथा को समाप्त किया, ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने विधवा विवाह के पक्ष में पौराणिक ग्रंथों में सबूत जुटाए।[4] इसके अलावा वी०एस० मालाबारी, महादेव गोविंद रानाडे[5] स्वामी विवेकानन्द, डी०के० कर्वे एवं विष्णुशास्त्री प्रमुख थे। इन सब के अतिरिक्त स्त्रियों के साहस को बढ़ाकर उनको उत्साहित कर नयी दिशा व लक्ष्य देकर उन्हें सीमित वर्ग से जन साधारण तक पहुंचाने का श्रेय महात्मा गांधी को जाता है।

भारत को स्वतंत्र कराने का प्रथम प्रयास 1857 ई० में स्वाधीनता संघर्ष के रूप में सामने आया, जिससे प्रायः सभी राष्ट्रवादी नेताओं ने बाद में प्रेरणा ली। इस स्वतंत्रता संग्राम में अनेक वीरांगनाओं ने अपने देश के लिए अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया। जिसमें झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का नाम अग्रणी है जिन्होंने झांसी में हुए 1857 ई० के संग्राम का नेतृत्व किया

और अंग्रेजी साम्राज्य को कड़ा मुकाबला दिया। उनकी वीरता से प्रभावित अंग्रेज जनरल ह्यूरोज जिसने झांसी की रानी लक्ष्मीबाई को पराजित किया, ने लक्ष्मीबाई के विषय में कहा है कि "यहां वह औरत सोई हुई है जो विद्रोहियों में एक मात्र मर्द थी।"[6] इसके अतिरिक्त 30 मई 1857 को अवध में विद्रोह का नेतृत्व अवध के नवाब वाजिद अली शाह की बेगम हजरत महल ने किया। (जो पहले एक नर्तकी थी) बेगम हजरत महल को महक परी के नाम से भी जाना जाता है। इस विद्रोह में कानपुर की वीरांगना अजीजन बेगम का योगदान प्रशंसनीय था, अजीजन बेगम अपने समय की प्रसिद्ध नर्तकी थी। कानपुर में विद्रोह के शुरूआत में अजीजन बेगम ने वीर, साहसी और निर्भय महिलाओं की एक टुकड़ी तैयार की तथा 1857 ई० के विद्रोह में अपना योगदान दिया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 5वें अधिवेशन 1889 ई० में (बम्बई में हुए इस अधिवेशन की अध्यक्षता एक यूरोपीय विलियम बेडरबर्न ने की थी) पहली बार कुल 10 महिलाओं ने सार्वजनिक तौर पर किसी सम्मेलन में भाग लिया था। इसके बाद बंगाल विभाजन 1905 में पहली बार बड़ी संख्या में राष्ट्रीय परिदृश्य में महिलाओं की भागीदारी सामने आई। इस विभाजन के विरोध में महिलाओं ने स्वदेशी आंदोलन में भाग लेकर सभाएं की तथा वन्दे मातरम् (बंकिम चन्द्र चटर्जी कृत आनंदमठ का गीत) के नारे लगाए।[7] इतना ही नहीं बल्कि औरतें घर से बाहर निकलीं, प्रदर्शन में हिस्सा लेने लगी और धरने पर बैठने लगी।[8] इस आन्दोलन के दौरान औरतों ने विदेशी चूड़ियां पहनना और विदेशी वस्तुओं, बर्तनों का बहिष्कार कर उनका इस्तेमाल बन्द कर दिया।[9] विभाजन के दिन 15 अक्टूबर 1905 को भाई चारे के प्रतीक के रूप में रंग बिरंगी राखियों का आदान–प्रदान हुआ और शोक के प्रतीक के रूप में चूल्हा नहीं जलाया गया।[10] इस आन्दोलन में विदेशी वस्तुओं के

बहिष्कार को सफल बनाने का श्रेय विशेष रूप से बिहार की राष्ट्रवादी महिलाओं श्रीमती विन्ध्वासिनी, श्रीमती हसन इमाम, श्रीमती सी० सी० दास, हजारीबाग से सरस्वती देवी, साधना देवी, गिरीडीह से मीरादेवी और लखीसराय से श्रीमती विद्यावती देवी को जाता है।

भारतीय क्रांति की मां (मदर ऑफ इण्डियन रिव्यूलएशन) के नाम से प्रसिद्ध मैडम भीखाजी कामा जेनेवा से देवनागरी लिपि में वंदे मातरम् नामक पत्रिका का प्रकाशन करतीं थी। अगस्त 1907 ई० में स्टुटगार्ट, जर्मनी में मैडम भीखाजी कामा ने दूसरे इंटरनेशनल सम्मेलन में स्वतंत्र भारत का झण्डा फहराया।[11] यह पहला अवसर था जब भारत का राष्ट्रीय तिरंगा लाल,हरा और पीला फहराया गया । इस तिरंगे की डिजाइन मैडम भीखाजी कामा ने स्वयं बनायी थी। इसी सम्मेलन में इन्होंने यह घोषणा की कि– "भारत एक गणराज्य होगा, हिन्दी उसकी राष्ट्र भाषा जबकि लिपि उसकी देवनागरी होगी।" आगे इन्होंने यह भी कहा कि "भारत में ब्रिटिश शासन जारी रहना मानवता के नाम पर कलंक है।" इसी प्रकार 1915 ई० में एनी बेसेंट ने अपने दो अखबारों न्यू इण्डिया और कॉमनवील के माध्यम से आन्दोलन छेड़ दिया, जनसभाएं एवं सम्मेलन किया।[12] उनका मानना था कि भारतीय जनता को भी स्वशासन का अधिकार मिले। इसके लिए इन्होंने 1916 ई० में मद्रास में आल इण्डिया होमरूल लीग की स्थापना की। साथ ही साथ सन् 1917 ई० में वीमेंस इण्डियन एसोशिएशन की स्थापना की। एनी बेसेंट को सन् 1917 ई० के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षा चुना गया।[13] एनी बेसेंट भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्षता करने वाली पहली महिला अध्यक्षा थी । ये एक आयरिश महिला थी। यह 1893 ई० में भारत आयीं[14] इसके बाद 1898 ई० में बनारस में सेन्ट्रल हिन्दू कालेज की स्थापना की जो 1916 ई० में मदन मोहन मालवीय के

प्रयास से बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सन् 1925 ई० के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन की अध्यक्षता सरोजिनी नायडू ने की थी जिनको भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रथम भारतीय महिला अध्यक्षा होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।[15]

स्वतंत्रता संघर्ष के समय गांधी जी द्वारा चलाए जा रहे राष्ट्रीय आन्दोलनों में महिलाओं ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया इसका कारण गांधी जी के सत्य, अहिंसा और सामाजिक आदर्शों में निहित था। सन् 1920 ई० में गांधी जी के असहयोग आन्दोलन जिसे मान्यता प्राप्त आन्दोलन कहा जाता है[16], के सर्वाधिक सफल कार्यक्रम विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के समय सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में महिलाओं के एक समूह ने खादी वस्त्र बनाकर एवं उसकी बिक्री कर ब्रिटिश सरकार के साथ अपना असहयोग व्यक्त किया। इसी प्रकार उर्मिला देवी की अध्यक्षता में सन् 1929 ई० में नारी सत्याग्रह समिति का गठन किया गया और मद्रास के पूर्वी गोदावरी जिले में दुबरी सुबासम नामक महिला ने देव सेविका स्त्री संघ की स्थापना कर आन्दोलन में अपना योगदान दिया। असहयोग आंदोलन के दौरान गिरफ्तार होने वाले पहले व्यक्तियों में सी०आर० दास एवं उनकी पत्नी बसन्ती देवी प्रमुख थीं, इस गिरफ्तारी का बंगाल में व्यापक विरोध किया गया।[17] जेल जाने वाले स्वयंसेवकों में अब पहली बार सी० आर० दास की पत्नी बसन्ती देवी का अनुसरण करते हुए उच्च वर्ग की महिलाएं भी शामिल थी।[18] सन् 1928 ई० में भारत आए साइमन कमीशन के विरोध में लतिका घोष ने महिला राष्ट्रीय संघ की स्थापना कर रैली का आयोजन किया। इसी तरह पंजाब के क्रान्तिकारी महिलाओं में श्रीमती दुर्गा देवी, सुशीला देवी एवं प्रेमादेवी का नाम उल्लेखनीय है।

राष्ट्रीय आन्दोलन को तीव्रता देने के लिए बंगाल में सूर्यसेन (मास्टर दा) ने रिपब्लिकन आर्मी की स्थापना की। इसके चटगांव शाखा के सदस्यों में प्रीतिलता वाडेदर तथा कल्पना दत्त (बाद में जोशी) प्रमुख थीं जिनमें प्रीतिलता वाडेदर ने चटगांव पहाड़ तली के रेलवे इंस्टीट्यूट पर छापा मारा, लेकिन इसी दौरान वे मारी गई और उधर कल्पना दत्त को गिरफ्तार कर आजीवन कारावास की सजा दी गई।[19] इसके अतिरिक्त बंगाल से इस आन्दोलन में शान्ति घोष, सुनीधि चौधरी एवं बीना दास भी शामिल थी। इनमें दिसंबर 1931 ई० में केमिल्ला की दो स्कूली छात्रा शान्ति घोष और सुनीधि चौधरी ने एक जिलाधिकारी की गोली मारकर हत्या कर दी।[20] फरवरी 1932 ई० में कलकत्ता विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में उपाधि ग्रहण करते समय बीना दास ने बंगाल के गवर्नर स्टेनली जैक्सन को गोली मार दिया। इसी चटगांव विद्रोह के समय कल्पना दत्त ने कहा कि "चटगांव विद्रोह के बाद जब सरकारी सेवाएं चटगांव पर फिर से नियन्त्रण स्थापित करने आएंगी तो क्रान्तिकारी उनसे लड़ते हुए हुए शहीद हो जाएंगे। यह युवा पीढ़ी के सामने एक आदर्श होगा जिसका वह अनुकरण करेगी।"

महात्मा गांधी के नमक सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भी महिलाओं ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया। गांधी जी ने महिलाओं को विशेष रूप से इस नमक सत्याग्रह में अग्रगामी भूमिका निभाने के लिए कहा था।[21] 1930 ई० में भारत की महिलाओं ने विशेष रूप से यह दिखा दिया कि वे शक्ति और सामर्थ्य में किसी से कम नहीं हैं।[22] इस आन्दोलन के दौरान महिलाएं 'प्रभात फेरियां ' करती थी जिसमें प्रातः काल झुण्ड बनाकर राष्ट्रीय गान गाते हुए गली–गली घूमा करती थी। इसी समय लड़कियों ने अपनी माजेरी सेना बनाने की मांग रखीं थी।[23] इसी समय आन्ध्र प्रदेश में महिलाओं के जत्थे मीलों चलकर नमक कानून को चुनौती दिये।[24] मणिपुर में इस आन्दोलन के समर्थन में नागा नेता यदुनाग के नेतृत्व में चलाए गए जियालरंग आंदोलन का नेतृत्व यदुनाग की मृत्यु के बाद उनकी बहन गैडिंल्यू ने

संभाला। बाद में इन्हें गिरफ्तार कर आजीवन कारावास की सजा दी गई। इस आन्दोलन की प्रसिद्धि के कारण ही गैडिंल्यू को नागालैंड की जोन ऑफ आर्क कहा गया। जबकि जवाहर लाल नेहरू ने इन्हें रानी की उपाधि से सम्मानित किया। सविनय अवज्ञा आन्दोलन के दौरान धरासना नमक निर्माणशाला[25] में अब्बास तैयबजी की गिरफ्तारी के बाद आन्दोलन का नेतृत्व सरोजिनी नायडू ने किया। इतना ही नहीं बल्कि सन् 1931 ई० में हुए द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में सरोजिनी नायडू ने भारतीय महिलाओं का प्रतिनिधित्व किया। इस सम्मेलन में एनी बेसेंट ने भी भाग लिया था। 8 अगस्त 1942 ई० को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन में पारित प्रसिद्ध भारत छोड़ो प्रस्ताव में अहिंसक रुप से जितना संभव हो उतने बड़े स्तर पर जन संघर्ष का आह्वान किया गया।[26] भारत छोड़ो आन्दोलन में महिलाओं ने खासतौर से छात्राओं ने भाग लिया। इसमें असम की 18 वर्षीय कबकलता बरुआ, पंजाब की राजकुमारी अमृत कौर के अलावा सुचेता कृपलानी, सरोजिनी नायडू व उनकी पुत्री पद्मजा नायडू, ऊषा मेहता, अरुणा आसफ अली एवं कमला देवी चट्टोपाध्याय तथा मीराबेन आदि प्रमुख थीं। सुचेता कृपलानी और अरूणा आसफ अली इस आन्दोलन से भूमिगत रुप से जुड़ी थीं[27], जबकि ऊषा मेहता उस छोटे से समूह की महत्वपूर्ण सदस्या थी जो रेडियो चलाता था।[28] इस आन्दोलन में गांधी जी की गिरफ्तारी के पश्चात् उनकी पत्नी कस्तूरबा गांधी ने भी सक्रिय भूमिका निभाई। इस आन्दोलन के दौरान बंगाल के तामलुक (मिदनापुर) में 17 दिसंबर 1942 ई० को जातीय सरकार या राष्ट्रीय सरकार का गठन किया गया।[29] यही की 73 वर्षीय विधवा महिला मातंगिनी हजारा ने गोली लगने के बाद भी तिरंगे झण्डे को ऊंचा रखा था।[30] भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान ही इंदिरा गांधी ने वानरी सेना का गठन किया था।

इस प्रकार सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े होने के बावजूद भी महिलाओं ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष (परोक्ष) दोनों रूपों में राष्ट्रीय आंदोलनों

में सक्रिय भूमिका निभाई उनका यह योगदान प्रशंसनीय एवं सराहनीय है। आज भी स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाली ऐसी कितनी ही अनजान महिलाएं हैं जिनका योगदान प्रशंसनीय है परन्तु वे इतिहास के पन्नों पर गुमनाम हैं। वास्तव में भारतीय इतिहास के गौरवशाली इतिहास के निर्माण कार्य में महिलाओं के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। इस बात की पुष्टि जवाहर लाल नेहरू के इस वक्तव्य से होती है जिसका उल्लेख दिसंबर 1929 ई० में लाहौर में राष्ट्रीय झंडा फहराते हुए किया था कि –" एक बार फिर से आपको याद रखना है कि अब यह झंडा फहरा दिया गया है जब तक एक भी हिन्दुस्तानी मर्द, औरत या बच्चा जिंदा है यह झुकना नहीं चाहिए ।" इसी प्रकार एक बार महात्मा गांधी जी ने कहा था कि " महिलाओं को कमजोर कहना उनका अपमान है। वह पुरुषों का महिलाओं के प्रति अन्याय है।"

संदर्भ

1. *विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली, 1990, पृ. सं. 10*
2. *वही, पृ. सं. 61*
3. *वही*
4. *वही, पृ. सं. 57*
5. *सुमित सरकार – आधुनिक भारत, नई दिल्ली,1992 पृ. सं. 89*
6. *विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली, 1990, पृ. सं. 10*
7. *सुमित सरकार – आधुनिक भारत , नई दिल्ली, 1992 पृ. सं. 101*
8. *विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली, 1990, पृ. सं. 108*
9. *वही, पृ. सं. 105*
10. *सुमित सरकार – आधुनिक भारत, नई दिल्ली, 1992 पृ. सं. 130*

11. वही, पृ. सं. 165
12. विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली, 1990, पृ. सं. 137
13. वही , पृ. सं. 145
14. सुमित सरकार – आधुनिक भारत, नई दिल्ली, 1992, पृ. सं. 169
15. विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली, 1990, पृ. सं. 258
16. सुमित सरकार – आधुनिक भारत, नई दिल्ली, 1992, पृ. सं. 224
17. विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली, 1990, पृ. सं. 168
18. सुमित सरकार – आधुनिक भारत, नई दिल्ली, 1992, पृ. सं. 239
19. विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली,1990, पृ. सं. 234
20. वही, पृ. सं. 235
21. वही, पृ. सं. 260
22. वही
23. वही, पृ. सं. 263
24. वही, पृ. सं. 259
25. वही, पृ. सं. 257
26. सुमित सरकार – आधुनिक भारत, नई दिल्ली, 1992, पृ. सं. 409
27. विपिन चन्द्र व मृदुला मुखर्जी – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, दिल्ली, 1990, पृ. सं. 444
28. वही, पृ. सं. 447
29. वही
30. सुमित सरकार – आधुनिक भारत, नई दिल्ली, 1992, पृ. सं. 421

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 119-125

मुगल कालीन कृषक वर्ग की आर्थिक दशा

*सत्य प्रकाश वर्मा**
*प्रो० (डॉ०) शाहिद परवेज***

सारांश

कृषि और कृषक मुगल अर्थव्यवस्था का आधार थे। 16वीं शताब्दी में देश की समृद्धि में कृषि उत्पादन का योगदान सर्वाधिक था। इसी ने उस काल के व्यापार–वाणिज्य को फलने फूलने का अवसर प्रदान किया। कृषि से प्राप्त भू–राजस्व से ही सशक्त प्रशासनिक तंत्र और सैनिक तंत्र की स्थापना सम्भव हो सकी। परन्तु लगान की अधिकता, प्रशासनिक अधिकारियों तथा ग्रामीण मध्यस्थ वर्ग के भ्रष्ट आचरण के कारण मुगलकाल में अन्न दाता कृषकों की दशा खराब थी। उनकी आय सीमित थी। उनका खानपान एवं पहनावा ओढ़ावा निम्नतम स्तर पर था। अकाल आदि दैवीय आपदाओं के कारण वे ऋणों के चंगुल में फँस गये थे। फिर भी पिछली शताब्दियों की तुलना में मुगल कालीन कृषकों की आर्थिक दशा ठीक थी।

मुख्य शब्द : *भू–राजस्व, जमा, हक ए शर्ब, सूबा, खुदकाश्त, पाही, मुजारियान।*

प्रोफेसर इरफान हबीब के अनुसार, ''कृषक वर्ग से तात्पर्य उस जन साधारण से है, जो खेत में अपने ही कृषि यंत्रों का प्रयोग करके तथा केवल अपने ही परिवार के सदस्यों के श्रम का उपयोग करके स्वयं ही कृषि कार्य करता है।''[1] परन्तु इस परिभाषा में भाड़े के श्रमिकों व भूमि पर नियंत्रण की मात्रा की उपेक्षा की गई है। तुर्कों के आगमन और दिल्ली सल्तनत की स्थापना के साथ उत्तर भारत में एक बार पुनः केन्द्रीकरण की प्रवृत्तियों का जन्म हुआ। अलाउद्दीन खिलजी प्रथम सुल्तान था, जिसने अपने आर्थिक कठिनाइयों का सामना करने के क्रम में भू–राजस्व व्यवस्था को सुदृढ करने पर बल दिया। उसने सल्तनत के इतिहास में पहली बार कृषि भूमि की माप करवाई तथा लगान की मात्रा को कुल उपज का आधा हिस्सा निर्धारित किया। उसने लगान वसूलने वाले मध्यस्थों, जिन्हें खूत, मुकद्दम और चौधरी कहते थे, के विशेषाधिकारों को खत्म कर दिया। भू–राजस्व के अतिरिक्त उसने चारागाहों,

* *शोध छात्र, मध्य एवं आधुनिक इतिहास, रमाबाई राजकीय महिला महाविद्यालय, अम्बेडकर (उ०प्र०)*
** *शोध निर्देशक, मध्य एवं आधुनिक इतिहास, रमाबाई राजकीय महिला महाविद्यालय, अम्बेडकर (उ०प्र०)*

पशुओं, घरों आदि पर भी कर वसूल किया। अलाउद्दीन के केन्द्रीकृत प्रशासन के अन्तर्गत इन नियमों का सख्ती से पालन किया गया। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि शहरी शासक वर्ग व सेना को तो खाद्य संकट से सुरक्षा प्राप्त हो गया, लेकिन अन्नदाता कृषकों और जमींदारों की स्थिति दयनीय हो गयी। गयासुद्दीन तुगलक के राज्यारोहण के उपरान्त अलाउद्दीन द्वारा स्थापित व्यवस्था में कुछ नरमी बरती गयी। गयासुद्दीन की मृत्यु के बाद जूना खाँ मोहम्मद बिन तुगलक ने अलाउद्दीन की नीतियों का पुनः अनुगमन किया। दोआब में भू राजस्व को बढा कर कुल उपज का आधा कर दिया गया। अकाल और सूखे की समस्या की वजह से कृषक इस लगान को देने में समर्थ थे। अधिकारियों के निर्दयता और अत्याचार के कारण कृषकों ने खेती छोड़ दिया और जंगलों में बागी बन गये। हाँलाकि बाद में मुहम्मद बिन तुगलक को अपनी गलती का अहसास हुआ, उसने कृषि विभाग की स्थापना की, कृषकों के लिए तकाबी श्रहण की व्यवस्था की तथा राजकीय कृषि फार्मों की भी स्थापना भी किया। किन्तु उसके इन कार्यों का कोई विशेष लाभ नहीं हुआ तथा उसके शासन काल में कृषकों की आर्थिक दशा दयनीय ही बनी रही। मोहम्मद बिन तुगलक के बाद फिरोज शाह तुगलक दिल्ली की गद्दी पर बैठा। फिरोज ने कृषि और अर्थ व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया। उसने कई बड़ी नहरों जैसे रजबाह और उलूगखानी नहर का निर्माण करवाया तथा लगाने की मात्रा को घटाकर कम कर दिया। उसने शरियत में वर्णित चार करों के अतिरिक्त अन्य सभी करों को समाप्त कर दिया। यद्यपि सिंचाई के लिए एक नया कर हक ए शर्ब को लगाया। फिरोज तुगलक ने राज्य द्वारा पोषित कई लोक कल्याणकारी योजनाओं को भी शुरू किया। फिरोज के इन प्रयासों से कृषि और कृषकों आर्थिक स्थितियों में पर्याप्त सुधार हुआ।[2] फिरोज शाह के मृत्यु के बाद उत्त्र भारत में विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्तियाँ एक बार पुनः बलवती हो गयीं। इसी समय तैमूर के आक्रमण ने सम्पूर्ण प्रशासनिक ढाँचे को तहस–नहस कर दिया। इसका महत्त्वपूर्ण प्रभाव यह हुआ कि ग्रामीण अंचलों में कृषक सामतों और इक्तेदारों की दया पर अश्रित हो गये।[3] सैय्यदों और लोदियों के शासन काल में इन स्थितियों में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ।

16वीं शताब्दी में भारत में एक नवीन राजवंश की स्थापना हुयी, जिसे मुगल राजवंश कहा जाता है। इस समय तक भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति बहुत दयनीय हो गयी थी।[4] बाबर और हुमायूँ के शासन काल में कृषि के

सुधार के लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं किये गये। मुगलों का पूरा ध्यान अपने सैनिक शक्ति को सुदृढ़ करके विजित प्रदेशों की सुरक्षा तथा अन्य प्रदेशों में विस्तार करना था। इस क्रम में उनके द्वारा सामंतों और जमींदारों से अधिक धन की माँग की जाती थी। इसका अंतिम भार साधारण जनता और किसानों को ही झेलना पड़ता था। लगान चुकाने में असमर्थ किसान उत्पीड़न से बचने के लिए पलायन कर जाते थे। मुगल बादशाह अकबर ने कृषि की दशा में सुधार करने का प्रयत्न किया। अकबर ने किसानों को अप्रत्याशित परिस्थितियों से सुरक्षा प्रदान करने हेतु राज्य द्वारा कृषि ऋण का प्रबंध किया। इस ऋण की आवश्यकता का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि लाहौर जैसे सूबों में लगान अदा करने हेतु कृषकों को महाजनों के पास अपनी पत्नियां और बच्चे तक गिरवी रखने पड़ते थे। अकाल आदि के समय इनकी स्थिति और भी दयनीय हो जाती थी।

विदेशी यात्रियों के यात्रा विवरण और आइन ए अकबरी मुगल काल की आर्थिक स्थिति की जानकारी हेतु महत्त्वपूर्ण स्त्रोत है। औरंगजेब कालीन स्थिति की जानकारी हेतु खुलासत उत तवारीख और नुस्खा ए दिलकुशा जैसे ग्रन्थ उपयोगी हैं। मुगल काल में शाहजहाँ के शासन काल को सामान्यतः स्वर्ण युग कहा जाता था। यद्यपि यह स्वर्ण युग सामंतों, अधिकारियों और उच्च कुलीन लोगों के लिये था। शाहजहाँ ने अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु लगान की मात्रा में वृद्धि की जिसका कृषकों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। हाँलाकि शाहजहाँ के काल में सिचाई के लिए नहरों का निर्माण कराया गया। शाहजहाँ के काल में मंहगाई मे हुयी कमी का लाभ जन साधारण और कृषकों को भी हुआ।[5] परन्तु औरंगजेब के शासन के उत्तरार्ध में स्थिति पुनः खराब होने लगी थी।

मुगल कालीन समाज वस्तुतः मध्य युगीन सामंती चरित्र वाला था। उत्पादन पर उच्च वर्ग जिसमें बादशाह, मंसबदार, जागीरदार, जमीदार तथा उच्च अधिकारियों का अधिकार था। इनकी जनसंख्या बहुत ही अल्प थी। ये बिना किसी श्रम के उत्पादन का अधिकांश हिस्सा हड़प लेते थे। दूसरी तरफ जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा था, जो उत्पादन के लिए जी तोड़ मेहनत करता था। इनमें कृषक, कृषि श्रमिक, भूमिहीन भृत्य जाति के लोग आदि थे। उत्पादन के बाद इन सभी को उनकी सेवा के बदले एक अंश मिलता था, जो

किसी भी दशा में उनकी आवश्यकता से अधिक नहीं हो सकता था।

आर्थिक दृष्टि से इतिहास कारों ने बीसवीं शताब्दी में मुगलकाल के कृषि व कृषकों को अध्ययन का केन्द्र बनाया। इस कार्य में प्रथम उल्लेखनीय नाम मोरलैण्ड का है। मोरलैण्ड के बाद के0एम0 अशरफ, डी0डी0 कोशाम्बी, आर0एस0 शर्मा, इरफान हबीब, सतीश चन्द्र आदि ने कृषि और कृषकों की स्थिति को अपने इतिहास लेखन का विषय बनाया। बी0आर0 ग्रोवर तथा सतीस चन्द्र ने कृषकों के तीन स्तर बताये है। खुदकाश्त– वे कृषक थे, जो उस भूमि के स्वामी थे जिस पर वे कृषि करते थे। ये उसी गाँव के निवासी थे जहाँ इनकी जमीनें थी। यह कृषकों का सम्पन्न वर्ग था। इनके पास प्रर्याप्त जमीनें होती थीं तथा ये भाड़े पर श्रमिकों का भी उपयोग करते थे। पाही काश्त– कृषकों का एक ऐसा वर्ग था, जो दूसरे गाँव से किसी गाँव की अतिरिक्त भूमि पर खेती करने के लिए आते थे। ये अपने साथ अपने हल–बैल भी लाते थे। कई बार इन्हें हल बैल उपलब्ध करा दिया जाता था। पाहीकाश्त उस गाँव के स्थायी निवासी नहीं होते थे। मुजारियान– बटाईदार होते थे, जो खुदकाश्त किसानों तथा जमीदारों से भूमि बटाई पर लेकर खेती करते थे। गाँव में कृषि आय पर निर्भर तथा कृषि को सेवा प्रदान करने वाला भृत्य जातियों का एक अन्य वर्ग भी था। इस वर्ग में नाई, चरवाहा, ग्वाला, पनिहारी, भंगी, कारीगर, कुम्हार, बढई, धोबी, मोची आदि सम्मिलित थे। इन्हें अपनी सेवा के बदले उपज का छोटा सा अंश प्राप्त होता था। यह वर्ग खेती में अतिरिक्त श्रम की आवश्यकता पड़ने पर श्रमिक के रूप में भी कार्य करता था।

मुगल काल में जनसामान्य के मध्य लेन देन में मुद्रा का प्रयोग बहुत कम होता था। अतः कृषकों की आय का ठीक–ठीक गणना करना बहुत मुश्किल है। सामान्यतः मुगलकाल में कुल उत्पादन का आधा अथवा एक तिहाई भाग लगान के रूप में वसूल किया जाता था।[6] लगान की मात्रा के निर्धारण में अनेक कारक थे, जैसे कृषकों की जाति, भूमि का प्रकार, स्थानीय प्रथायें जमींदार का शासन से सम्बन्ध आदि।

अकबर के अधीन मुगलों के राजस्व प्रबंधन में कुशलता आयी थी, परन्तु मुगलों के राजस्व व्यवस्था में शुरू से ही निर्धारित किये गये लगान की मात्रा (जमा) तथा वसूल किये गये लगान (हासिल) में अंतर बरकरार रहा। कृषकों के लिए भी इस व्यवस्था में काफी समस्यायें थी। भू राजस्व अधिकारियों

द्वारा मनमाने पैमाइश तथा नगद लगान चुकाने की बाध्यता एक बड़ी समस्या थी। किसान शहरी बाजार प्रणाली से जुड़ने में असमर्थ थे। वे अपना अनाज औने–पौने दामों में बेचने पर विवश थे। कई बार उन्हे लगान चुकाने के लिए भारी ब्याज पर महाजनों से ऋण लेना पड़ता था। इस प्रकार भू राजस्व व्यवस्था तत्कालीन कृषकों के ऋण ग्रस्तता का मुख्य कारण थी। इसके अतिरिक्त नकदी फसलों को बोने हेतु लगने वाले धन के लिए भी महाजनों से ऋण लेते थे। सतीश चन्द्र के अनुसार औरंगजेब के शासन के अंतिम वर्षो में एक प्रकार का जागीदारी संकट उत्पन्न हुआ। इस समय जागीरदारों की संख्या व शासक वर्ग के खर्चों में बड़ी वृद्धि हुयी। इस अनुपात में उत्पादन में वृद्धि नही हुयी। कागजों पर जागीरों की आय और उनकी संख्या तो बढ़ा दी गयी परन्तु वास्तविक रूप से बहुत सारे जागीरदार जागीर पाने से वंचित रह गये। जमा और हासिल के मध्य अंतर काफी बढ गया। इस अंतर को पाटने के लिए अधिकारियों तथा जमींदारों द्वारा कृषकों पर अतिरिक्त बोझ डाला गया। जागीरदारों ने लगान वसूली का कार्य ठेके पर दे दिया।[7] इस प्रकार इजारेदारी प्रथा का प्रचलन हुआ। इजारेदार सिर्फ लाभ की भावना से प्रेरित थे उन्हें किसानों और उनकी परिस्थितियों से कोई सहानुभूति नहीं थी। इस प्रथा से किसानों का खूब उत्पीड़न हुआ। इससे दुःखी होकर किसान जोरतलब जमींदारों के इलाको में जा कर बसने लगे। फ्रांसीसी यात्री बर्नियर ने इस प्रक्रिया का विशद् वर्णन किया है।[8] जागीरदारों की आय घटने से राज्य की सैन्य क्षमता में पर्याप्त कमी आयी। इससे लगान वसूली जैसे कार्यो के लिए उन्हें जमींदारों से बार–बार उलझना विनाशकारी सिद्ध हुआ। इरफान हबीब यह मानते हैं कि जागीरदारों और जमीरदारों के मध्य होने वाले संघर्षो में कृषकों ने प्रायः जमींदारों का ही साथ दिया क्योंकि कृषक जमींदारों के ज्यादा करीब थे। फलस्वरूप शाहजहां के शासनकाल में प्रारम्भ हुयी इजारेदारी प्रथा ने मुगल साम्राज्य के आर्थिक आधार को नष्ट कर दिया।

मुगल काल में कृषकों का जीवन स्तर बहुत अच्छा नहीं था। यद्यपि इस काल में उत्पादन तो बढ़ा था तथा सत्राहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक इस काल आर्थिक विकास अपने चरम पर पहुँच गया था। परन्तु सामाजिक विसंगति और वितरण के कुप्रबंधन के कारण इस समृद्धि का लाभ सिर्फ शासक और कुलीन वर्ग को ही मिला था। जनसामान्य, कृषकों, श्रमिकों आदि के लोगों के जीवन में कोई उल्लेखनीय बदलाव नहीं आया। ये लोग प्रायः अभाव का जीवन

जीते थे। फ्रांसीसी यात्री बर्नियर के विवरण पर यकीन करें तो इस काल में मुगल सूबेदारों के अत्याचार से दुःखी होकर कृषक खेती छोड़ कर भाग रहे थे।[9] इतिहास कार सर जदुनाथ सरकार ने भी भारतीय कृषकों, शिल्पियों तथा श्रमिकों की दयनीय दशा का वर्णन किया है। फराओ नूनिज, बर्नियर, बर्थेमा, ट्रेवनियर आदि विदेशी यात्रियों ने मुगल काल में जन सामान्य की दयनीय स्थिति का बहुत ही मार्मिक चित्रण किया है। आगरा स्थित डच फैक्ट्री के प्रधान ने लिखा कि किसानों की दशा इतनी बदहाल है कि उन्हे सूखी रोटी भी मुश्किल से नसीब होती है। कृषकों की स्थिति शाहजहाँ और औरंगजेब के शासन काल में और भी खराब हो गयी है। इस समय भू राजस्व की दर एक तिहाई से बढ़ा कर आधा कर दिया गया था। अकबर के शासन काल में प्राप्त होने वाले भू राजस्व की राशि 17 करोड़ थी यह औंरगजेब काल में बढ कर 43.5 करोड़ रुपये हो गयी। औरंगजेब कालीन लगातार युद्ध, मिलावटी सिक्कों का चलन तथा लगान की बर्बर वसूली ने किसानों को पूरी तरह से तबाह कर दिया। गावों के गरीबों के मकान प्रायः मिट्टी के एक दो कमरे वाले होते थे। उनमें फर्नीचर के नाम पर चारपाई और चटाई के अलावां कुछ नहीं होता था। प्रायः मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग किया जाता था। तवे के अतिरिक्त उनके पास लोहे की कोई अतिरिक्त वस्तु नही थी।

मुगल काल में अकाल और महामारी भी जन–सामान्य पर अकथनीय दुःख लेकर आते थे। इससे ग्रामीण की जन धन दोनों की हानि होती थी। इन परिस्थितियों में कृषकों की ऋण ग्रस्तता बढ़ जाती थी। ऐसा नहीं है कि मुगल काल में कृषकों का जीवन पूर्णतयाः दुखों में डूबा हुआ और अंधकार पूर्ण ही था, अपितु उसमें उत्सव व खुशियों के क्षण भी होते थे। तीज, त्यौहार, मेले, धार्मिक सामाजिक संस्कारों के समय वे लोग खुशियाँ मनाते थे। अपनी छोटी–छोटी बचतों से खरीदारी भी करते थे। जन्म, मृत्यु और विवाह जैसे संस्कारों का यथा सामर्थ्य आयोजन भी करते थे।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि मुगल कालीन किसानों की आर्थिक स्थिति संतोष जनक नहीं थी। किसान अन्नदाता तथा राजस्व दाता था, परन्तु उसकी कई समस्यायें थी। लगान की अधिकता, प्राकृतिक आपदाओं और सामाजिक तनावों का उनकी स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता था। वे प्रायः जमीदारों और सरकारी अधिकारियों के शोषण का शिकार होते थे। कृषि

के अतिरिक्त कृषि आधारित उद्योग, हस्तशिल्प और पशुपालन उनके आय के अन्य साधन थे। गरीब किसानों का भोजन, वस्त्र आवास आदि निम्न कोटि का था। फिर भी वह इन हालात में भी अपने लिए तीज–त्यौहार आदि में खुशी के अवसर निकाल लेता था। इन सभी अवस्थाओं के साथ किसानों की जीवन शैली अत्यंत संघर्ष पूर्ण और अनिश्चित थी, जिससे वे स्वयं को आर्थिक रूप से असुरक्षित महसूस करते थे।

संदर्भ

1. *वर्मा, हरिश्चन्द्र : मध्य कालीन भारत भाग–2, पृ० 399*
2. *मोरलैण्ड, दि एग्रेरियन सिस्टम आफ मुगल इण्डिया, इलाहाबाद, 1929, पृ० 59*
3. *बाबर नामा, अनु0 एस0 वेवरीज, पृ० 519*
4. *इरफान हबीब, एग्रेरियन सिस्टम आफ मुगल इण्डिया, पृ० 249*
5. *आई0एच0 कुरैशी, द एडमिनिस्ट्रेशन आफ द मुगल एम्पायर,कराची, 1966, पृ० 232*
6. *नोमन अहमद सिद्धकी, मुगल भू–राजस्व प्रशासन (1700–1750 ई0), हिन्दी अनु0 राजमनि शुक्ला नई दिल्ली, 1977, पृ० 62–64*
7. *बर्नियर, ट्रेवल्स इन द मुगल एम्पायर, 1656–1688, अ0वी0 बाल पुर्नसम्पादित 1989, पृ० 168*
8. *बर्नियर, पूर्वोद्धत, पृ० 146–147*
9. *चोपड़ा, पूरी एवं दास, भारत का सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक इतिहास*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 126-130

नई सदी में शहरी ग्रामीण लिंकेज का अभिनव प्रयास

डॉ० दिनकर त्रिपाठी *

भारत सरकार के द्वारा शहरी एवं ग्रामीण लिंकेज की अवधारणा पर विस्तृत रूप से कार्य किया जाना दृढ़संकल्पित है। इसके अन्तर्गत जहाँ एक ओर विभिन्न योजनाओं के संचालन द्वारा गाँव एवं शहरों की दूरी को कम किया जा रहा है, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्र के युवाओं को गाँव में ही रहकर स्वरोजगार अपनाने के लिए आकर्षित किया जा रहा है। इस दिशा में प्रगति लाने हेतु डिजिटल कनेक्टिविटी की दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया गया है। डिजिटल कनेक्टिविटी के माध्यम से ही शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के बीच दूरी कम हुई है। वर्तमान के डिजिटल संसार में लोगो की मानसिकता को बदलने और कमजोर व्यक्ति को समान रूप से सशक्त करने का यह महत्त्वपूर्ण प्लेटफार्म है। यही कारण है कि भारत सरकार द्वारा इस योजना पर काफी जोर दिया जा रहा है। यही नहीं शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों का निर्धारण करने हेतु राष्ट्रीय आर्थिक विकास की समुचित योजना तैयार की गयी है। शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के मध्य बाधाओं को बदलने के लिए विभिन्न महत्त्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी विभिन्न महत्त्वपूर्ण अवसरों पर अपने सम्बोधनों में कहते आये हैं, कि गावों में शहरी जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराना सरकार का महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है। इसी को दृष्टिगत रखते हुए सरकार की ओर से प्रधानमंत्री ग्रामीण योजना में के मद में जारी बजट को 14000 करोड़ रूपये से तीन प्रतिशत बढ़ाकर 19000 करोड़ रूपये खर्च कर ग्रामीण सड़कों का निर्माण करके ग्रामीण इलाकों के लोगों की शहरों तक पहुँच में सुगमता प्रदान की जा रही है। 73000 हजार करोड़ रूपये के माध्यम से मनरेगा जैसे महत्त्वपूर्ण रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया है। इससे यह स्पष्ट है कि केन्द्र सरकार का पूरा फोकस ग्रामीण विकास पर केन्द्रित है। भारत सरकार द्वारा जलजीवनमिशन स्कीम 15 अगस्त 2019 प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा प्रारम्भ की गयी है, जिसके अन्तर्गत 3.60 लाख करोड रूपये प्रदान किये जाने का प्रावधान है। राज्य और केन्द्र द्वारा अलग–अलग बजट दिया जायेगा। जलजीवन मिशन के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों

* *एसोसिएट प्रोफेसर–राजनीति विज्ञान विभाग, फिरोज गाँधी कालेज, रायबरेली*

के घरों में पीने के पानी के लिए कनेक्शन दिये जा रहे हैं। अभी तक 3.27 करोड़ ग्रामीण परिवारों को वाटर कनेक्शन प्रदान किये जा चुके हैं। उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रधानमंत्री आवास योजना पर विशेष फोकस करते हुए वित्त मंत्री माननीय निर्मला सीतारमण ने पी0एम0 आवास योजना के लिए 66 फीसदी अधिक आवंटन बढ़ाकर 79000 करोड़ रूपये कर दिया है, जो बहुत अधिक उत्तम एवं सकारात्मक पहल है। इससे देश में घरों की संख्या वृद्धि में बल मिलेगा। सरकार की ओर से जानवरों को रखने के लिए (एनीमल हॉस्टल) बनाने की भी योजना है। इसके लिए एक सार्वजनिक स्थान विकसित किया जा रहा है। गाँव के लोग पशुओं को एक स्थान पर रखेंगे, जो दूध का संग्रहण व सप्लाई केन्द्र के रूप में विकसित होंगे।

यह एक सच्चाई है कि शहरी लोग विदेशों में काम करने तथा उच्च शिक्षा प्राप्त करने का सदैव सपना देखते हैं। ग्रामीण जन वर्तमान में गाँवों से निकलकर शहरों में निवास करने में ही अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर देते हैं।

भारतीय ग्रामीणों का शहरों से लिंकेज होने के कई महत्त्वपूर्ण कारण हैं। वास्तव में स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत की आर्थिक परिस्थितियों में सुधार करने हेतु कई योजनाएँ बनाई गयीं। प्रारम्भ में अधिकांश उद्योग केवल शहरी क्षेत्रों में ही खोल दिए गए। वर्तमान में सरकारें अधिकांश निजी औद्योगिक इकाईयाँ शहरों के स्थान पर ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित करने का प्रयास कर रही हैं। इसके पीछे कारण यह है कि इन्हें ग्रामीण क्षेत्रों में सस्ती दरों पर पर्याप्त भूमि आसानी से उपलब्ध हो जाती है साथ ही वहीं काम करने हेतु सस्ती दर पर पर्याप्त मात्रा में मेहनतकश श्रमिक मिल जाते हैं। इसके पीछे ग्रामीणों की यह सोच होती है कि घर में ही रहकर कम पारिश्रमिक पर भी कार्य मिल जाये, तो बाहर जाने से बेहतर है। इसी सोच को देखते हुए भारत सरकार की ओर से ग्रामीणों को रोजगार उपलब्ध कराने एवं शहरों जैसी सुविधा प्रदान करने के लिए लगातार नये प्रयास किये जा रहे हैं। इसी प्रयास को दृष्टिगत रखते हुए वैश्वीकरण और उदारीकरण जैसी नई आर्थिक नीतियों ने भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को प्रोत्साहन दिया है। परिणामतः इससे भारत की आर्थिक जटिलताएँ काफी कम हुई हैं। वर्तमान में अधिकांश आर्थिक नीतियों का निर्माण सरकार द्वारा गावों में ही शहरी सुविधाएँ उपलब्ध कराने की दृष्टि से किया जा रहा है।

केन्द्र सरकार की ओर से चलायी जा रही प्रत्येक योजना के निर्माण में इस बात का अवश्य ध्यान रखा जाता है कि वह किस तरह से गाँवो को

शहरी सुविधाओं से जोड़ दिया जाए। इतने वर्षों बाद भी ग्रामीण लोग कृषि पर आधारित जीवन ही जी रहे हैं, जबकि वर्तमान में पर्याप्त तकनीकि विकास हो चुका है। जबकि अभी तक ग्रामीण क्षेत्रों में आय के साधन पर्याप्त नहीं हैं। ऐसी स्थिति में सरकार की यह कोशिश रहती है कि वह ग्रामीण भरत की पुरानी तस्वीर को बदलने हेतु हर सम्भव प्रयत्न करे। इसके लिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्र भी शहरी सुविधा जैसे युक्त हो। ग्रामीण युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से भारत सरकार शहरी ग्रामीण लिंकेज की अवधारणा पर कार्य कर रही है। डिजिटल कनेक्टिविटी शहरी ग्रामीण के मध्य दूरी कम कर रही है – डिजिटल इण्डिया पहली जुलाई 2015 को भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी द्वारा प्रारम्भ किया गया है। डिजिटल इण्डिया ग्रामीण क्षेत्रों में हाईस्पीड नेटवर्क प्रदान करने के लिए एक पहल थी। मेकइन इण्डिया, भारत माता, सागर माला, स्टार्टअप इण्डिया, भारत नेट, और स्टैण्डअप इण्डिया सहित अन्य सरकारी लाभार्थी योजनाओं के रूप में डिजिटल इण्डिया मिशन प्रारम्भ किया गया है।

डिजिटल इण्डिया मिशन मुख्य रूप से तीन क्षेत्रों में केन्द्रित हैं जो इस प्रकार हैं :–

1. प्रत्येक नागरिक को उपयोगिता से तीन स्रोतों के रूप में डिजिटल अवसंरचना प्रदान करना।
2. माँग पर शासन और सेवाएँ।
3. प्रत्येक नागरिक के डिजिटल शसक्तिकरण की देखभाल करना।

डिजिटल इण्डिया के उद्देश्य

डिजिटल इण्डिया का आदर्शवाक्य 'शक्ति से सशक्तिकरण' है। इस पहल के उद्देश्य निम्नांकित हैं :–

1. सभी ग्राम पंचायतों में हाईस्पीड इन्टरनेट उपलब्ध कराना।
2. सभी इलाकों में सर्विस सेन्टर (C.S.C.) तक आसान पहुँच प्रदान कराना।
3. यह एक ऐसी पहल है, जो बड़ी संख्या में विचारों को एक एकल को व्यापक दृष्टि में जोड़ती है, ताकि उनमें से प्रत्येक को एक बड़े लक्ष्य के हिस्से की रूप में देखा जा सके।

4. डिजिटल इण्डिया कार्यक्रम कई मौजूदा योजनाओं के पुनर्गठन पर भी ध्यान केन्द्रित करता है। जिन्हें एक समकालिक तरीके से लागू करता है।

डिजिटल इण्डिया मिशन के लाभ

इस मिशन के कुछ लाभ निम्नांकित है :–

1. भारत नेट कार्यक्रम के अन्तर्गत 2,74,246 के आप्टिकल फाइवर नेटवर्क ने 1.15 लाख से अधिक ग्राम पंचायतों को जोड़ा है।
2. ई–गवर्नेस से सम्बन्धित लेन–देन में वृद्धि हुई है।
3. एल०ई०डी० सोलर लाइटिंग, सैनिटरीनैपकिन प्रोडक्सन यूनिट और वाई–फाई चौपाल जैसी सर्वसुविधा युक्त सुविधाओं के साथ डिजिटल गावों की स्थापना।
4. भारत सरकार की राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस परियोजना के अन्तर्गत एक सामान्य सेवा केन्द्र (सी0एस0सी0) बनाया गया है, जो कि सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICI) तक पहुँच प्रदान करता है। कम्प्यूटर और इन्टरनेट एक्सेस के माध्यम से सी0एस0सी0, ई–गवर्नेंस, शिक्षा, स्वास्थ्य, टेलीमेडिसिन, मनोरंजन और अन्य सरकारी सेवाओं सम्बन्धित मल्टीमीडिया सामग्री प्रदान करते हैं। डिजिटल इण्डिया को बढ़ावा देने हेतु केन्द्रीय वित मंत्री निर्मला सीतारमण ने 4795.24 करोड़ रूपये के बजट का प्रावधान किया है, ताकि आने वाले समय में भारत भी विकसित देशों के समान प्रत्येक क्षेत्र में डिजिटल इण्डिया का प्रयोग कर आगे बढ़ सके। ई–कामर्स से अरबों डालर के कारोबार होने की सम्भावना है और इससे देश में व्यापक सम्भावनाएँ दृष्टिगोचर हो रही है। परिणाम स्वरूप जो देश को विकास की गति प्रदान करने में सहायक सिद्ध होंगी। ई–कामर्स से 280 करोड रूपये का राजस्व अर्जित किया गया है। सुशासन के लिए डिजिटल कनेक्टिविटी की आवश्यकता रही है और देश के आई0टी0 सेक्टर का कारोबार इस समय सौ अरब डालर से अधिक का है विश्व की प्राख्यात कम्पनियाँ भारत के आई0टी0 क्षेत्र से जुड़ी हैं। भारत चीन के बाद दुनिया की दूसरी अर्थ व्यवस्था के रूप में अपने को प्रतिस्थापित करने के लिए निरन्तर प्रयास कर रहा है।

दीन दयाल उपाध्याय अन्त्योदय योजना

(1) इस योजना का आरम्भ 25 सितम्बर 2014 को अन्य उपायों के माध्यम से आजीविका के अवसरों में वृद्धि कर शहरी और ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी को कम करना है।

दीन दयाल उपाध्याय अन्त्योदय योजना के अन्तर्गत दो घटक मिलकर काम करते हैं। प्रथम घटक से शहरी भारत के लिए और द्वितीय ग्रामीण भारत के लिए। शहरी घटक का कार्यान्वयन **'केन्द्रीय आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मन्त्रालय करता है** जबकि ग्रामीण घटक का कार्यान्वयन केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा संचालित किया जाता है। प्रारम्भिक योजना स्वर्णजयन्ती ग्रामस्वराज योजना (SGSY) 1999 में प्रारम्भ की गयी थी। इसका नाम बदल कर वर्ष 2011 में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन कर दिया गया है। अन्त में उन्हें दीनदयाल उपाध्याय आजीविका योजना (DDU-AU) में मिला दिया गया है।

(2) केन्द्र सरकार के द्वारा उपर्युक्त योजनाओं के माध्यम से हर सम्भव प्रयास किये जा रहे हैं, ताकि भविष्य में शहरों जैसी सुविधाएँ गाँवों में आसानी से और पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराई जा सकें।

पूर्णलिखित वर्णनों से निष्कर्षतः कहा जाना समुचित है कि भारत सरकार ने शहरी ग्रामीण लिंकेज योजना के नवीनतम प्रयासों से भारतीय ग्रामों एवं शहरों में अनेकशः आधुनिक सुविधायुक्त संसाधनों के विकास के साथ ही आर्थिक सुधारों का प्रयास किया है। जिससे शहरों में बढ़ती भीड़ को रोका जा सके तथा ग्रामीण क्षेत्रों में ही रोजगार और आर्थिक संसाधनों में वृद्धि कर गाँवों से शहर में जाने से रोका जा सके।

सन्दर्भ

1. *इण्डिया, सरकार, भारत 25 सितम्बर 2014.*
2. *हिन्दुस्तान टाइम्स अभिगमन तिथि 19 नवम्बर 2017.*
3. *जी.आर. मदन, अमित अग्रवाल, परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन दिल्ली 2012*
4. *कुरूक्षेत्र फरवरी 2015*
5. *कुरूक्षेत्र अप्रैल 2015*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 131-136

भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं की भूमिका

*डॉ. धीरज कुमार चौधरी**
*अजीत कुमार गौतम***

सारांश

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं के योगदान की चर्चा किए बिना भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास अधूरा ही रह जाएगा। भारत की महिलाओं द्वारा राष्ट्रीय आंदोलन में किए गए संघर्ष और बलिदानों को इतिहास में अग्रणी स्थान मिलना चाहिए। उन्होंने सच्ची भावना और अदम्य साहस के साथ संघर्ष किया और भारत को आजादी दिलाने के लिए अनेक यातनाओं, शोषण और कठिनाइयों का सामना किया, लेकिन राष्ट्रीय आन्दोलनों में महिलाओं के योगदानों को वह स्थान नहीं मिला है, जो उनको मिलना चाहिए था। राष्ट्रीय आंदोलनों में पुरुषों के योगदानों को अधिक व्याख्यायित किया गया है किन्तु जब महिलाओं की बात आती है तो कुछ गिनी–चुनी महिलाओं को इतिहास के पन्नों में स्थान दिया गया है, जबकि बहुत सी महिलाओं ने आन्दोलनकारियों के साथ आन्दोलन में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया, जेल गयी और अपने प्राणों की आहुति दी। इस शोध पत्र में उन गुमनाम महिलाओं के योगदानों को उजागर किया जायेगा, ताकि उन महिलाओं को इतिहास के पन्नों पर उचित स्थान मिल सके।

मुख्य शब्द : *1942, भारत छोड़ो आन्दोलन, महिलाएँ, स्वतंत्रता, आन्दोलन*

भारतीय परिवेश में सदा से ही महिलाओं का एक महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की अग्रणी भूमिका रही है। जब पराधीन भारत में महात्मा गांधी ने भारत छोड़ो आंदोलन का बिगुल बजाया, तब महिलाओं का योगदान अविस्मरणीय रहा। 1942 में हुए इस आंदोलन में महिलाएँ हर क्षेत्र में सक्रिय रहीं और ब्रिटिश साम्राज्य की नींव हिलाने में उन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।[1]

भारत छोड़ो आंदोलन, जिसका आगाज 8 अगस्त 1942 को महात्मा गांधी ने किया था उसमें महिलाएँ विभिन्न दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण रही। गांधीजी के तीन शब्दों ने सब में नई प्राणवायु फूँक दी। यह आंदोलन प्रारंभ होते ही 'नेता विहीन' हो गया, क्योंकि सभी बड़े नेता जेल में डाल दिए गए। इस समय

* *एसो. प्रोफेसर, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, ईश्वर शरण पी.जी. कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज*
** *शोध छात्र, ईश्वर शरण पी.जी. कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज*

महिलाएँ ही थी, जिन्होंने इस आंदोलन की कमान संभाली एवं इसको सक्रिय बनाए रखा।[2]

बंबई में 8 अगस्त,1942 को "ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी" द्वारा पारित भारत छोड़ो प्रस्ताव ने यह तय किया कि अगर भारतवासियों को तुरंत सत्ता नहीं सौंपी जाती है, तो गांधी के मार्गदर्शन में यहाँ लोक सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू किया जाएगा। इस अवसर पर गांधी ने अपना प्रसिद्ध नारा *'करो या मरो'* भाषण दिया, कहा कि यह अंतिम युद्ध एक "निर्णायक युद्ध" होगा और इसलिए भारतीय या तो आजादी छीने या उसके लिए अपनी जाने गवाएँ। इससे पहले से ही चिढ़ी बैठी भारतीय जनता की कल्पना को पंख लग गए और वह स्थापित सत्ता के पतन की आशा करने लगी। जैसा कि "ज्ञानेंद्र पांडे" का कथन है कि गाँधी ने इसे यह कह कर एक "मनोवैज्ञानिक बढ़ावा" दिया कि हर कोई अब स्वयं को "स्वतंत्र पुरुष या स्त्री" समझे और अगर नेतागण गिरफ्तार कर लिये जाएँ, तो अपनी कार्यवाही का रास्ता खुद तय करें।[3]

गाँधी जी के भाषण में विभिन्न वर्गों को साफ–साफ निर्देश दिए गए थे। सरकारी कर्मचारी नौकरी ना छोड़ें, लेकिन कांग्रेस के प्रति अपनी निष्ठा की घोषणा कर दें। सैनिक अपने देशवासियों पर गोली चलाने से इंकार कर दें। राजा महाराजा जनता की प्रभुसत्ता स्वीकार करें और उनकी रियासतों में रहने वाली जनता अपने को भारतीय राष्ट्र का अंग घोषित कर दें तथा राजाओं का नेतृत्त्व तभी मंजूर करें, जब वह अपना भविष्य जनता के साथ जोड़ लें। छात्र पढ़ाई तभी छोड़े जब आजादी हासिल हो जाने तक अपने इस निर्णय पर दृढ़ रह सके।[4]

अगस्त 1942 को "अखिल भारतीय कांग्रेस समिति" द्वारा पारित प्रस्ताव में साफ–साफ कहा गया था कि, "एक ऐसा समय आ सकता है जब निर्देश जारी करना संभव ना हो सके या निर्देश लोगों तक पहुँच ही ना सके या कोई कांग्रेस समिति कार्य न कर सके। अगर ऐसा होता है तो प्रत्येक पुरुष और स्त्री को जो इस आंदोलन में भाग ले रहा है जारी किए गए निर्देशों की चौहद्दी में अपने काम का खुद ही फैसला करना होगा। हर भारतीय को जो आजादी चाहता है और उसके लिए प्रयत्नशील है, अपना मार्गदर्शक खुद ही बनना होगा।[5] उनका भय सही साबित हुआ क्योंकि 9 अगस्त को तड़के ही गांधी समेत सभी अग्रणी कांग्रेसी नेता गिरफ्तार कर लिए गए और फिर तो जनता का अभूतपूर्व क्रोध भड़का, जिसे राष्ट्रवादी दंत कथाओं में "अगस्त क्रांति" का नाम दिया जाता है आंदोलन की इस असाधारण तीव्रता ने हर एक को हैरान कर दिया। वायसराय लिनलिथगो ने इसे, "1857 के बाद का सबसे गंभीर विद्रोह कहा।"[6]

भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं की भूमिका उनके समर्पण, बलिदान एवं देशभक्ति की कहानी है, जिसे स्वराज प्राप्त करने की लड़ाई के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। महिलाओं ने सक्रिय रूप से सत्याग्रह एवं विभिन्न गतिविधियों में भाग लिया। उन्होंने सभाएँ आयोजित कर उनमें अपने भाषणों द्वारा ब्रिटिश साम्राज्य का विरोध किया। उन्होंने गाँव–गाँव में गांधी जी के "करो या मरो" के नारे को पहुँचाया और भारत छोड़ो के संदेश को जन जन में फैलाया।[7]

1942 के भारत छोड़ो आंदोलन ने पुनः एक बार महिलाओं को गतिशीलता प्रदान की। 8 अगस्त को महात्मा गांधी की घोषणा तथा उनके सहित कांग्रेस के शीर्ष नेताओं की 8–9 अगस्त मध्य रात्रि को हुई गिरफ्तारी से पूरे देश में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध उत्तेजना की लहर दौड़ गई। गांधी जी ने लोगों को "करो या मरो" का संदेश दिया जिससे उनमें क्रांति की भावना उत्पन्न हो गई और वह हिंसात्मक गतिविधियों में लग गए रेल पटरियाँ उखाड़ना, पोस्ट ऑफिस तथा सरकारी कार्यालयों में आग लगाना और ऐसे कार्य करना जिससे ब्रिटिश शासन तंत्र असहाय हो जाए। इस आंदोलन का कार्यक्रम बनाया गया। जिस समय मुंबई में कांग्रेस के शीर्ष नेताओं की गिरफ्तारी हुई उसी समय कुछ महिला कांग्रेसी नेताओं ने सफलतापूर्वक गिरफ्तारी से बचकर भूमिगत होकर आंदोलन को चलाने का निश्चय किया। उन महिलाओं में सुचेता कृपलानी, अरूणा आसफ अली तथा मृदुला साराभाई प्रमुख थी। पुलिस की कार्रवाई से बचने के लिए भूमिगत आंदोलन का कार्यालय कई बार बदलना पड़ता था। भूमिगत आंदोलन की सफलतापूर्वक देश के विभिन्न प्रांतों के नेताओं से संपर्क कर भारत छोड़ो आंदोलन का संचालन किया। इस भूमिगत आंदोलन में सुचेता कृपलानी और अरुणा आसफ अली जैसी महिलाओं का सक्रिय योगदान था। इन महिलाओं ने ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध देश की जनता को जागृत करने के उद्देश्य से कई स्थानों की गुप्त यात्राएं की। कई बार वे भेष बदलकर विभिन्न प्रांतों के भूमिगत आंदोलनकारियों से संपर्क करती थीं तथा उन्हें आंदोलन के बारे में निर्देश देती थी। इन महिलाओं के साथ और योग्य नेतृत्त्व के बल पर लगभग 10 से 12 महीनों तक क्रांतिकारी भूमिगत आंदोलन चलता रहा। भूमिगत आंदोलन के दौरान इन महिलाओं को साधारण जनता, व्यासायी, उद्योगपतियों तथा सेना एवं सरकारी कर्मचारियों का भी बहुत सहयोग मिला। आंदोलन के दौरान भारतीय वायु सेना के एक पायलट "बीजू पटनायक" ने जिन्हें सेना के लिए सामग्री लेकर अनेक स्थानों में जाना पड़ता था अरूणा आसफ अली को अपने हवाई जहाज में छुपाकर कई जगहों पर ले गए थे।

इस क्रांतिकारी और भूमिगत आंदोलन में महिलाओं ने एक और महत्त्वपूर्ण कार्य संपादित किया यह था "भूमिगत रेडियो स्टेशन" की स्थापना और इसका प्रसारण। इस कार्य में मुंबई की एक छात्रा ऊषा मेहता विशेष रूप से भूमिगत रेडियो के कार्यक्रमों का प्रसारण करती थी। प्रारंभ में इस रेडियो से सीमित कार्यक्रम प्रसारित होते थे, परंतु बाद में इसमें भारत छोड़ो आंदोलन संबंधित समाचार तथा प्रमुख भूमिगत कांग्रेसी नेताओं के भाषण प्रसारित होने लगे। सरकार ने इस रेडियो स्टेशन का पता लगाने का बहुत प्रयास किया परंतु उषा मेहता और उनकी सहेलियों द्वारा बार–बार प्रसारण केंद्र बदले जाने से पुलिस को सफलता नहीं मिली। बाद में उषा मेहता और उनके साथियों को गिरफ्तार कर उन्हें आजन्म कारावास का दंड दिया गया।[8]

छत्तीसगढ़ राज्य भी भारत छोड़ो आंदोलन से अछूता नहीं रहा था। महात्मा गांधी जी और शीर्ष नेताओं की गिरफ्तारी की सूचना मिलते ही रायपुर में 9 अगस्त को आम हड़ताल हो गई थी। लाउडस्पीकर के माध्यम से गिरफ्तारी की सूचना दी गई थी। बाजार, स्कूल, कॉलेज सब बंद कर दिए गए थे। शाम 4:00 बजे राष्ट्रीय विद्यालय से एक विशाल जुलूस निकला। अंग्रेजों भारत छोड़ो के नारों से आकाश गूँज उठा। रायपुर के तात्यापारा चौक तक आते–आते जुलूस में 20,000 से भी अधिक मजदूर, विद्यार्थी और नागरिक शामिल हो गए थे। पुलिस कप्तान जुलूस को गांधी चौक नहीं जाने देना चाहता था, लेकिन 20,000 जनता को रोकने की शक्ति पुलिस में भी नहीं थी। रात 8:00 बजे गांधी चौक में आम सभा हुई जिसमें लोगों ने सरकार विरोधी नारे लगाए। रायपुर की तरह बिलासपुर, दुर्ग आदि स्थानों में भी जुलूस निकाले गए थे तथा वहाँ भी सभाएँ की गई थी। बहुत से लोगों को गिरफ्तार किया गया। केवल रायपुर जिले में ही गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों की संख्या 447 थी। भारत छोड़ो आंदोलन में जहां एक ओर पुरुष सक्रिय भूमिका निभा रहे थे तो वहीं दूसरी ओर महिलाएं भी आंदोलन में पीछे नहीं थी और पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही थी। छत्तीसगढ़ राज्य में जिन महिलाओं ने आंदोलन में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था उसमें राधाबाई का नाम विशेष उल्लेखनीय है। राधाबाई ने अपना तन–मन–धन सब कुछ देश सेवा में अर्पित कर दिया था। सविनय अवज्ञा आंदोलन से लेकर भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय भूमिका में रही। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेकर जेल गई। जहाँ पर उनकी सहयोगी महिलाएं राजकुंवर बघेल, मोचीबाई श्रीवास्तव, लीलाबाई, सुमिरिती बाई, रुक्मणी बाई एवं नोटरी बाई। राधाबाई जेल में महिलाओं को आध्यात्मिक उन्नति तथा सत्याग्रह की प्रेरणा देती रहती थी तथा जेल से बाहर छूटते ही आंदोलन में सक्रिय हो जाती थी। भारत छोड़ो आंदोलन ने छत्तीसगढ़ की

महिलाओं में एक नया उत्साह उत्पन्न किया। महिलाओं ने बड़ी संख्या में आंदोलन में भाग लिया और जेल भी गई। इन महिलाओं में इन्द्रोतीन बाई, दया बाई, भावन्तीन तथा भगवती को 6–6 माह का कारावास की सजा सुनाई गई थी। कुछ सत्याग्रही महिलाओं के साथ ब्रिटिश पुलिस द्वारा बर्बर व्यवहार किया गया, लेकिन महिलाओं ने पुलिस आतंक से बिना डरे आंदोलन में सक्रियता से भाग लिया। जुलूस में भाग लेने के कारण श्रीमती भवानी बाई को 5 माह 22 दिन की सजा हुई। भागीरथी बाई ने इस आंदोलन में भूमिगत रहकर आंदोलनकारी महिलाओं को सहयोग दिया। मंटोरा बाई तथा मनमत बाई ने बंगोली तथा खुटेरी जैसे पिछड़े क्षेत्रों में रहकर महिलाओं को जागृत करने का कार्य किया। जिसके कारण इनको 6–6 माह की सजा हुई।

भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं की भरपूर भागीदारी थी उन्होंने आंदोलन में न सिर्फ हिस्सा लिया बल्कि पुरुषों की बराबरी करते हुए इसका नेतृत्त्व सँभाला। 9 अगस्त 1942 को अरूणा आसफ अली ने मुंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में राष्ट्रीय झंडा फहरा कर भारत छोड़ो आंदोलन की शुरुआत की। उषा मेहता ने मुंबई में कांग्रेस का रेडियो स्टेशन शुरू किया और उस रेडियो स्टेशन का नाम "द वॉइस ऑफ फ्रीडम" रखा। मातंगी हजारा ने बंगाल के तामलुक में 6000 लोगों के जुलूस का नेतृत्त्व किया जिनमें से अधिकतर महिलाएँ थी। इसी तरह सुचेता कृपलानी ने भी आंदोलन में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया।[9]

1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान अनेक महिलाएँ पुलिस की गोली से शहीद भी हुई जिनमें बिहार से 19 अगस्त को रामरतिया ग्वालिन भागलपुर में अंग्रेजों की गोली का शिकार हुई, वही भोजपुर के शहर में कलीदेवी 15 सितंबर को शहीद हुयीं।

बाडीसाल में "स्त्री आत्मरक्षा समितियाँ" गठित की गई तथा उन्हें जापानी बमो एवं ब्रिटिश तथा अमेरिकी बलात्कारियों से बचाव के तौर–तरीके समझाए गए। यहां उन्हें सबसे पहले लाठी चलाना सिखाया गया। मैमनसिंह जिले के शेरपुर नामक स्थान पर अनेक गुप्त बैठक आयोजित की गई जिनमें फासीवाद के खिलाफ महिलाओं की भूमिका पर चर्चाएं हुई। पटना में स्त्रियों ने प्रभातफेरिया तथा पोस्टर प्रदर्शनी आयोजित की।[10]

भारत छोड़ो आंदोलन की मुश्किल घड़ियों में महिलाएँ घरों से निकलकर बाहर आईं और अपने अदम्य साहस एवं संगठित समर्थन के साथ पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी हुईं। कई महिलाओं ने प्रमुखता से इस आंदोलन में भाग लिया और उनकी यह भागीदारी स्वतंत्रता प्राप्त करने

तक चलती रही। आंदोलन ने भारतीय महिलाओं के लिए नए रास्ते खोल दिए। इससे पूर्व महिलाएँ परिवार के सीमित दायरों में एक हाशिए पर रहते हुए जीवन जी रही थी। उन्हें एक नई प्रकार की स्वतंत्रता एवं सामाजिक पहचान प्राप्त हुई, जिससे वे पूर्व में वंचित थी। यह आंदोलन नारीवाद का एक सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है, क्योंकि इसमें महिलाओं ने बड़ी संख्या में भाग लिया था। सभी बड़े पुरुष नेताओं के जेल में चले जाने के बाद महिलाओं ने कमान सँभाली और जो योगदान महिलाओं ने दिया वह अविस्मरणीय है इनके योगदान के महत्त्व को समझते हुए "महात्मा गांधी" ने कहा कि, "जब स्वतंत्रता के लिए भारतीय सेनानियों की लड़ाई का इतिहास लिखा जाएगा तब महिलाओं द्वारा किए गए बलिदान की चर्चा सबसे पहले होगी।"[10]

इस प्रकार जब हम भारत छोड़ो आन्दोलन में महिलाओं की भूमिका का विश्लेषण करते हैं, तो देखते हैं कि जैसे–जैसे राष्ट्रिय आन्दोलन विकराल रूप धारण करते जा रहा था वैसे–वैसे आन्दोलन में महिलाओं की सहभागिता बढ़ती जा रही थी। भारतीय महिलाएँ देशभक्ति की भावना से ओत–प्रोत होकर भारत छोड़ो आन्दोलन में न सिर्फ विदेशी शासन से आजादी पाने के लिए अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया, अपितु घरेलू एवं सार्वजनिक जीवन की जिम्मेदारियों को भी साथ–साथ निभाया।

सन्दर्भ

1. *प्रतिभा, भारत छोड़ो से नवभारत, ऑरेंज बुक्स पब्लिकेशन, स्मृति नगर, भिलाई, छत्तीसगढ़, 2021, पृ. 177*
2. *वही, पृ. 178*
3. *बंधोपाध्याय शेखर, प्लासी से विभाजन तक और उसके बाद, ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, हिमायतनगर, हैदराबाद, 2006, पृ. 412*
4. *चंद्र विपिन, मुखर्जी मृदुला, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, नई दिल्ली, 1990, पृ. 441*
5. *वही, पृ. 449*
6. *बंधोपाध्याय शेखर, प्लासी से विभाजन तक और उसके बाद, पृ. 412*
7. *प्रतिभा, भारत छोड़ो से नवभारत, पृ. 180*
8. *डॉ. मनोरमा राय, भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं की सहभागिता की भूमिका का संक्षिप्त विवरण, शोध मंथन, Vol. 10, No.II, April-June 2019, pp. 645-651*
9. *मोहम्मद अशरफ उमर, भारत छोड़ो आंदोलन में बलात्कार की शिकार हुई थी बड़ी संख्या में महिलाएं, प्रभात खबर,10 अगस्त 2019.*
10. *वही, पृ. 197–98*
11. *प्रतिभा, भारत छोड़ो से नवभारत, पृ. 182*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 137-143

दलित महिलाओं का भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान : एक अध्ययन

*डॉ० अंकिता सिंह**
*चित्रा सिंह***

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में दलित समुदाय के लोगों की क्या भूमिका थी? उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन में कितनी और किस हद तक अपनी भागीदारी दी थी, इसका अध्ययन करना और पता लगाना ही इस प्रपत्र का मुख्य उद्देश्य है। सन् 1857 की क्रान्ति से लेकर आजादी (भारत की स्वतंत्रता) तक दलित महिलाओं ने किस रूप में भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में अपनी भूमिका निभाई उसका प्रामाणिक ब्यौरा देना भी इस पत्र का उद्देश्य है। 1857 में भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की शुरूआत एक क्रान्ति के रूप में हुई और देश के अन्य समुदाय तथा वर्ग के लोगों की भांति दलित समाज के लोगों ने भी इसमें अपनी अहम् भूमिका निभाई परन्तु इनको इतिहास के पन्नों में स्थान नहीं दिया और ये लोग और इनके बलिदान की गाथाएँ दब गयीं। इन्हीं लोगों के भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में किए गये योगदानों का विवरण निम्नलिखित है –

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में झांसी की अमर वीरांगना झलकारी बाई (कोरी)

10 मई 1857 को मेरठ छावनी में भारतीय सैनिकों के सशस्त्र विद्रोह के साथ भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम प्रारम्भ हुआ। जो जंगल की आग की तरह देखते देखते सारे उत्तर भारत में फैल गया था।

मातृ भूमि की रक्षा के लिए जहां हजारों क्रान्ति वीरों ने विद्रोह और संघर्ष किया वहीं अनेक वीरांगनाओं ने भी स्वतंत्रता संग्राम यज्ञ में अपने प्राणों की आहूति दी उन्हीं वीरांगनाओं में एक थी ''अमर शहीद झलकारी बाई।''

वीरांगना झलकारी बाई वर्ग की उपजाति कोरी थी– उनके पति ''पूरन कोरी'' राजागंगाधर राव के दरबार में मामूली सिपाही थे।

---

* *असि० प्रोफेसर, महिला पी०जी० कालेज, बहराइच, सम्बद्ध : डॉ० राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद, अयोध्या*
** *शोध छात्रा, महिला पी०जी० कालेज, बहराइच, सम्बद्ध : डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद*

वीरागंना झलकारी बाई अपने पति के पैतृक पेशा–कपड़ा बुनने के काम को करती थी। वह एक आदर्श महिला थी। उनका पारिवारिक जीवन अत्यन्त संघर्ष मय था। कभी–कभी अपने पति के साथ राजमहल में जाती थी। रानी लक्ष्मीबाई उनके व्यक्तित्व तथा सुन्दरता से बड़ी प्रभावित थीं। क्योंकि झलकारी बाई की मुखाकृति रानी लक्ष्मी से हुबहु मिलती थी। शैनेः शैने रानीलक्ष्मी बाई और झलकारी बाई में गहरे सम्बन्ध हो गये थे।

वीरांगना झलकारी बाई बचपन से ही वीर प्रकृति की थीं–उनमें उत्साह तत्परता जैसे प्रधान गुणों का समावेश था। इसके अतिरिक्त झलकारी बाई अपने पति पूरन से सभी सैनिक गुणों को प्राप्त कर तलवार, बन्दूक चलाना तथा घुड़सवारी से निपुणता प्राप्त कर ली थी। यह शिक्षा भविष्य में काम आयी जब अंग्रेजों ने झाँसी पर अधिकार करने की कुचेष्टा की तब भारतीय सैनिकों ने स्वेच्छाा से तथा रानी लक्ष्मी बाई के इच्छा के विरूद्ध विद्रोह कर दिया।

इस तथ्य को प्रसिद्ध इतिहासकार एस0 एन0 सेन0 अपनी पुस्तक ''1857 (पृष्ठ 267–216) में इस विषय पर गंभीर विवेचना करने के बाद निष्कर्ष पर पहुंचे है कि ''उस समय के अंग्रेज अफसर इस स्पष्ट राय के थे कि रानी लक्ष्मी बाई ने न तो विद्रोह किया और न ही कोई योजना बनाई और स्वेच्छा से विद्रोही सैनिकों का साथ दिया।''

झाँसी का 1857 का स्वतंत्रता संग्राम जो मात्र सिपाही विद्रोह के नाम से जाना जाता था। उस समय किसी ने कल्पना नही ंकी थी कि वह सिपाही विद्रोह स्वतंत्रता आन्दोलन था– स्वतंत्रता आन्दोलन इसलिए था कि उसे दलित जाति के लोगों ने किया था जिनको अपनी मात्र–भूमि की रक्षा एवं स्वतंत्रता के सिवाय राजपाट से कोई सरोकार नहीं था। विद्रोह का संचालन भाउ बख्शी व पूरन कोरी कर रहे थे और उनके साथ था वीरांगना झलकारी बाई जो अपनी मातृ–भूमि की रक्षा एवं स्वतंत्रता के लिए अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए ब्रिटिश सेना से घमासान युद्ध कर रही थी।

''सिलेक्शन्स फ्राम दि मिलिट्री डिपार्टमेंट ऑफ गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया 1857–58 (पृष्ठ 13 प्रकाशक, जी0 डब्लू फारेस्ट)'' में लिखा है। सिपाहियों के स्वैच्छिक विद्रोह व झांसी पर पूर्ण विजय के बाद जब अधिकांश सेनाए दिल्ली की ओर चली गयी तब रानी लक्ष्मी बाई के नाम से विद्रोही सैनिक झांसी का शासन चलाने लगे लक्ष्मी बाई सैनिकों के इस काम में भी स्वेच्छा से शामिल नहीं थी– इस दौरान लक्ष्मी बाई अंग्रेजों से गुप्त दूरस्थ सम्बन्ध रखती थी और

अपने हक में समझौते का प्रयास कर रही थी। यहा तक लिखा है कि विद्रोह सफल होने के पूर्व अंग्रेजों को गुप्त मदद (गोला, बारूद) भी दे चुकी थी।

जासूस विभाग ने भारत सरकार को सूचना दी थी कि 17 जून 1857 को रानी लक्ष्मी बाई की मृत्यु हो गयी– लक्ष्मी बाई समझौते के लिए बेताब थी और केवल इतना चाहती थी कि उन्हें अपमानित न किया जाय तथा उनका राज उनके राजा पति के जीवन काल तक स्वीकार कर लिया जाय। वे विद्रोही सैनिकों को दण्डित किये जाने के विरूद्ध नहीं थी।

इतिहासकार ठाकुर लछमन सिंह गौर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ''ओरछा के इतिहास'' में लिखते हैं कि सन् 1855–56 ई0 तक झांसी का शासन रानी लक्ष्मी बाई ने अंग्रेजों की तरफ से किया था। जब कानपुर के बल्वे का समाचार झांसी पहुँचा उस समय झांसी में अंग्रेजों के सेनानायक कप्तान डेनयाल थें रानी लक्ष्मी बाई का इस विद्रोह से कोई सम्बन्ध नहीं था परन्तु अंग्रेजों की काली पलटन बागी हो गयी थी। इस सेना के हवलदार गुरूबख्स ने अचानक बलवा का झण्डा खड़ा किया, गोला, बारूद जो कुछ था उस समय में अधिकार कर लिया अंग्रेज झांसी के किले से निकल भागे किले और शहर झांसी पर विद्रोहियों का अधिकार हो गया। गार्ड नामक अंग्रेज इस युद्ध में मारा गया। झांसी के कमिश्नर साहब स्कीन का वध इसी समय हुआ था।

व्रिदोह के दो दिन पहले मिस्टर गार्डन रानी लक्ष्मी बाई से मिले थे। उन्होंने रानी लक्ष्मी बाई पर पूरा विश्वास किया था कि वह अंग्रेजों से विद्रोह नहीं करेंगी। विद्रोहियों ने झांसी के किले पर कब्जा करने के बाद शहर में रानी लक्ष्मी बाई के महल को घेर लिया। रानी लक्ष्मीबाई ने विद्रोहियों को मार कर भगा दिया और यह सब हाल अंग्रेजों को लिख भेजा। शहर के कमिश्नर की तरफ से रानी लक्ष्मी बाई झांसी की शासक बन गई थी। झांसी के कमिश्नर थिंक भी रानी लक्ष्मीबाई को पूर्ण अधिकार प्रदान कर चुके थे।

सदाशिव नारायण एक बड़ी सेना लेकर झांसी के समीप पहुँचा करैरा पर हमला करके उसने अंग्रेजों के थानेदार और तहसीलदार को मार भगाया और करैरा पर अधिकार कर लिया। रानी लक्ष्मी बाई अपनी सेनर लेकर करैरा गई इनको देखकर सदाशिव नारायण डर कर भाग गया और करैरा पर रानी लक्ष्मी बाई का अधिकार हो गया। सदाशिव नारायण नरबर की ओर भागा परन्तु वह कैद होकर झांसी के किले में बन्द हो गया।

ओरछा के महाराजा हम्मीर सिंह का दीवान नत्ये खां ने उसी समय में समय बीस सेना लेकर झांसी पर (रानी लक्ष्मी बाई) आक्रमण करने आया इस

युद्ध में नत्थे खां की हार हुई। अंग्रेजों से घमासान युद्ध हुआ इसमें रानी लक्ष्मी बाई के शरीर में अनेक घाव हो गये इसमें चौदह हजार सेना अंग्रेजों की नष्ट हो गयी, संग्राम भूमि के निकट एकपर्ण कुटी में रानी साहिबा लक्ष्मी बाई का 16 जून 1818 को देहान्त होना बताया गया है।

लेकिन असलियत यह है कि महारानी लक्ष्मीबाई जून 1858 ई0 में प्रतापगढ़ के महाराजा की सहायता से वह नेपाल की जंगली पहाड़ियों की गुफा में अज्ञात वास किया था और वि0सं0 1972 अर्थात् 1915 ई0 में 80 साल की उमर में महारानी लक्ष्मी बाई स्वर्गवासी हुई थी। प्रतापगढ़ से प्रमाण मिला है।

प्रसिद्ध इतिहासकार आर0सी0 मजमूदार का स्पष्ट निष्कर्ष है ''प्राप्त तथ्यों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके आधार पर कहा जा सके कि रानी लक्ष्मीबाई विद्रोह की नेत्री थी।''[1]

उपरोक्त तथ्यों को लेकर 1857 के फौजी विद्रोह के एक ऐसे शोध तथा पुर्नमूल्यांकन की भारी आवश्यकता है जिसमें पूर्व रानी और राजाओं की वास्तविक भूमिकाओं का सही चित्रण हो। रानी लक्ष्मी बाई के सम्बन्ध में उपरोक्त तथ्य उचित व सही प्रतीत नहीं होते हैं क्योंकि भारत की वीर गाथाओं तथा किवदंतियों में उनका नाम आदर से लिया जाता है वे एक वीरांगना नारी थी।

झलकारी बाई का पति पूरन कोरी, भाऊ बख्शी कोरियों को सेना के साथ अंग्रेजों का नरसंहार कर रहे थे। इस समय तक संघर्ष अपनी चरम सीमा पर था झलकारी बाई रानी लक्ष्मीबाई के प्रति अधिक चिंतित थी कि कहीं रानी लक्ष्मी बाई अंग्रेजों के हाथ न जा जायं और अंग्रेज अपनी विजय पताकाफरा दे। ऐसी नाजुक स्थिति में झलकारी बाई ने बड़ी सूझ–बूझ से रानी को मंत्रणा दी कि वह अंग्रेजों के हाथ न आयें वरना अंग्रेजों के मनसूबे कामयाब हो जायेंगे। रानी ने भी सुरक्षित स्थान पर जाने की इच्छा प्रकट की तब झलकारी बाई ने उन्हें भण्डारी फाटक से अपने वफादार सिपाहियों के साथ रवना कर दिया।

संघर्ष की ऐसी भयंकर स्थिति में भी झलकारी बाई संतुलित थी– उनमें धीरता और वीरता का अनोखा संगम था। निश्चय ही वह जितनी सरल थी उतनी ही साहसी और जितनी सौम्य उतनी ही शौर्यकला में दक्ष थी।

भांडेरी गेट से लेकर उन्नाव गेट तक युद्ध संचालन स्वयं झलकारी बाई कर रही थी तोपखाने को भी संभाल रखा था। जबकि उनके पति पूरन कोरी और भाऊ बख्शी आदि दूसरे स्थान पर अंग्रेजों से लोहा ले रहे थे।[2]

झलकारी बाई का चेहरा और व्यक्तित्व रानी लक्ष्मी बाई के समान था जो उस समय मूल्यवान सिद्ध हुआ तब रानी लक्ष्मीबाई किले से बाहर बहुत दूर जा चुकी थी और झलकारी बाई अपने को रानी लक्ष्मी बाई घोषित कर घोर युद्ध में अंग्रेजों का संहार कर रही थी। उनका मुख्य उद्देश्य था अंग्रेजों को सारे दिन लड़ाई में उलझाये रखना ताकि रानी लक्ष्मी बाई बिठूर के सुरक्षित स्थान तक पहुँच जाय। झलकारी बाई की यह योजना तो सफल रही अंग्रेज उन्हें रानी लक्ष्मी बाई समझ कर दिन भर लड़ते रहे।

दुर्भाग्य वश उनके पति पूरन कोरी अपनी मातृ–भूमि की रक्षा करते हुए शहीद हो गये। झलकारी बाई को इस दुखद घटना की जब जानकारी हुई तो वे वहां पहुंच कर कुछ क्षणों तक भाव शून्य हो अपने पति के शव को देखती रहीं भावतंद्रा भं होते ही अपने पति के चरणों को स्पर्श कर विद्युत तरंगों की तरह उछल का घोड़े पर सवार हो अंग्रेज सेना पर घायल सिंहनी की भांति टूट पड़ी। अनेक अंग्रेज सिपाही और सेना अधिकारी झलकारी बाई के हाथों मारे गये।

घमाससान युद्ध–प्रलय का तांडव–अंग्रेज सेना के पल भर में पैरर उखड़ गये झलकारी बाई अंग्रेजों के लिए मौत की आंधी बन चुकी थी, तभी एक सनसनाती गोली उनके सीने को चीरते हुए आर–पार हो गयी। उनका घोड़े से गिरना क्या था कि शरीर सैकड़ों गोलियों से छलनी हो गया। इस प्रकार रानी लक्ष्मी बाई के प्रति सच्ची मित्रता, मातृभूमि की रक्षा और उसकी स्वतंत्रता के लिए अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए वीरांगना झलकारी बाई वीरगति प्राप्त कर अमर हो गई।

वीरांगना झलकारी बाई का नाम भारत के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जायेगा क्योंकि वह दलित समाज की थी जिसका न राज्य था, न राजमहल न वह रानी बन सकती थीं और न अधिकारीणी, वे मात्र अपने देश मातृभूमि की रक्षा व स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों को न्योछावर कर शहीद हो गई। उनका त्याग–बलिदान व आदर्श भारतीय समाज के लिए अनुकरणीय है।[3]

वीरांगना महावीरी देवी

सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में जिला मुजफ्फर नगर का भी योगदान किसी से कम नहीं है, क्योंकि कुछ मायनों में अधिक ही हो सकता है क्योंकि यहा की नारियें ने क्रान्तिकारियों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर स्वतंत्रता संग्राम में लड़ाई लड़ी थी।

सभी जाति व धर्म की नारियों ने वीरता का परिचय दिया उन लोगों ने टोलियां बनाकर अंग्रेजों से लोहा ही नहीं लिया बल्कि अपनी शौर्यता तथा एकता का परिचय दिया जिससे अंग्रेज सैनिकों के दांत खट्टे हो गये और वे मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए।[4]

अपने देश की रक्षा व स्वतंत्रता के लिए खुशी–खुशी प्राणों को न्यौछावर कर अमर होने वाली वीरांगनाओं में थी– वीरांगना महावीरी देवी। अमर वीरांगना महावीरी देवी– ग्राम, मुंडभर–भाजू, तहसील कैरोना, जिला मुजफ्फरनगर की रहने वाली थी। वीरांगना महावीरी देवी अशिक्षित थी फिर भी उनकी बुद्धि विलक्षण थी। शौर्यता तथा निर्भिकता उनकी विशेषता थी बाल्यवस्था से ही साहसी और शक्तिशाली होने के कारण तेज स्वभाव की थी। गांव का धनी सम्पन्न व्यक्ति यदि किसी गरीब को सताता अथवा उत्पीड़ित करता था तो वह उस असहाय निर्बल व्यक्ति के लिए बड़े से बड़े व्यक्ति से टक्कर लेती थी और डटकर विरोध करती थी। उल्लेखनीय है यह वह जमाना था जब अछूतों को पशु से बद्दतर कीड़े–मकोड़े की तरह समझा जाता था।

वीरांगना महावीरी देवी ने मानो दीन–दुखियों के लिए ही जन्म लिया था उन्होंने जीवन पर्यन्त न्याय के लिए लड़ने की प्रतिज्ञा ली थी और अपने को उनकी सेवा के लिए समर्पित कर दिया था। धीरे–धीरे उनका यश चारों ओर फैलने लगा और जगह–जगह उनकी शौर्यता निर्भिकता तथा समाज के प्रति मर–मिटने की भावना की चर्चा होने लगी।

वीरांगना महावीरी देवी का पारिवारिक जीवन बड़ा ही कष्ट मय था। उनके पिता सूप–पंखा बनाने का कार्य करते थे। जो उनका पैतृक कार्य के साथ–साथ जीवन यापन का साधन था। गरीबी बेकारी से पीड़ित होते हुए भी उन्होंने अपने मान–सम्मान पर कभी आंच आने नहीं दी। कभी भी खैरात व पकवान को स्वीकार नहीं किया बल्कि अपने जाति के लोगों को इसके लिए मना करती थी। वीरांगना महावीरी देवी ने अपने समाज की नारियों का एक संगठन बनाया जिसका उद्देश्य था घृणित कार्यों में लगी महिलाओं व बच्चों को हटाना और सम्मान के लिए जीना और सम्मान के लिए मरना। अंग्रेजों ने जब मुजफ्फरनगर को अपने अधिकार में लेने के लिए आक्रमण किया तब इन स्वाभिमानी नारियों ने अपने मातृ–भूमि की रक्षा के लिए अपने को समर्पित कर दिया।[5]

वीरांगना महावीरी देवी ने बाईस नारियों की एकटोली लेकर अंग्रेजों की सेवा पर सशस्त्र आक्रमण कर दिया। अंग्रेजों को यह उम्मीद नहीं थी कि गांव की महिलाऐं उन पर आक्रमण करेगी क्योंकि उन्हें लड़ाई करके भला क्या

मिलने वाला था। वीरांगना महावीरी देवी की नारियों को टोली जिनके हाथों में कांते और गड़ासे थे अंग्रेजों की सेना से जा भिड़ी घमासान युद्ध होने लगा अंग्रेज आश्चर्यचकित रह गये। अनेक अंग्रेज महावीरी देवी के हाथों मारे गये। वीरांगना महावीरी देवी अंग्रेजों से घमासान युद्ध करते हुए मातृभूमि की रक्षा में वीरगति को प्राप्त किया साथ ही बाईस अज्ञात वीरांगनाऐं भी थी। देश के प्रति उनका त्याग और बलिदान सदैव प्ररेणा देता रहेगा।[6]

सन्दर्भ

1. *मजूमदार, आर0सी0, हिस्ट्री ऑफ कल्चर ऑफ दी इण्डियन पीपुल, पृ0 11*
2. *कार्यालय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1990*
3. *डिन्कर, डी0सी0, स्वतंत्रता संग्राम में अछूतों का योगदान, पृ0 24–25*
4. *विपिन चन्द्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम*
5. *मुखर्जी, एच0, इण्डियाज स्ट्रगल फार फ्रीडम, कलकत्ता, 1962*
6. *डिन्कर, डी0सी0, स्वतंत्रता संग्राम में अछूतों का योगदान, बोधसत्य प्रकाशन, लखनऊ, 1990*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 144-148

ग्रामीण शिक्षा एवं स्वास्थ्य का बदलता स्वरूप

डॉ० ऋतेश त्रिपाठी *

शिक्षा, स्वास्थ्य और स्वच्छता एक दूसरे के पूरक हैं। एक शिक्षित व्यक्ति स्वच्छता के साथ–साथ अपने स्वास्थ्य के प्रति भी जागरूक होता है। स्वच्छता के इसी महत्त्व को समझते हुए वर्तमान सरकार ने स्वच्छ भारत मिशन के साथ–2 स्वच्छ विद्यालय सम्बन्धी अभियान गतिमान किया, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक विद्यालयों में लड़के एवं लड़कियों हेतु पृथक शौचालयों के निर्माण कराये गये। अनुसंधान के क्षेत्र में गुणवत्तायुक्त शिक्षा, नवाचार की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए सरकार ने नई शिक्षा नीति (NEP) पर कार्य कर रही है।

भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने अपने वक्तव्य में कहा कि ''यदि हमें राष्ट्र का निर्माण करना है, तो सबसे पहले गाँवों का निर्माण करना होगा। क्योंकि शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर समुचित ध्यान दिये बिना राष्ट्र का सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं है। जब सबसे पहले हम शिक्षा की बात करते हैं, तो स्पष्ट होता है कि शिक्षा वह हथियार है, जिसके सहारे अज्ञानता के गहन अंधकार से मानवता बाहर निकलकर आजादी की नई साँस ले पाती है। सामाजिक क्षेत्र में लोगों को शिक्षा स्वास्थ्य और रोजगार की सुविधा उपलब्ध कराये बिना किसी राजनीति का कोई तात्पर्य नहीं है। सन् 1937 में महात्मा गांधी जी ने राज्यों के भावी शैक्षिक स्वरूप पर विचार करने के उद्देश्य से 22–23 अक्टूबर को स्वयं की अध्यक्षता में अखिल भारतीय शैक्षिक सम्मेलन आयोजित किया गया। 23 अक्टूबर, 1937 को वृद्ध चर्चा के अनन्तर बुनियादी शिक्षा को लेकर कुछ महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये गये, जो कि इस प्रकार से हैं –

1. बच्चों एवं बालकों को सात वर्ष तक राष्ट्रव्यापी निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाय।
2. शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।
3. इस समय दी जाने वाली शिक्षा हस्तशिल्प या उत्पादक कार्य पर केन्द्रित हो।
4. सभी योग्यताओं और गुणों का विकास, जहाँ तक सम्भव हो, बालक द्वारा चुनी हुई हस्तकला से सम्बन्धित हो। डॉ0 जाकिर हुसैन के अध्यक्षता में उपर्युक्त प्रस्तावों के अनुरूप पाठ्यक्रम निर्माण के लिए

* *असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, सी.एम.पी. कालेज, प्रयागराज*

एक समिति की स्थापना की गयी थी। इन्हीं प्रस्तावों के अनुरूप राष्ट्रीय शिक्षा योजना तैयार की गयी जिसे वर्धा शिक्षा योजना के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इसके साथ ही तय हो गया था कि वर्धा योजना ही राष्ट्रीय शैक्षिक योजना होगी। चूंकि शिक्षा प्रारम्भ में संविधान में निर्धारित राज्य सूची में था, लिहाजा केन्द्र सरकार सीधे हस्तक्षेप नहीं कर पाती थी। चूँकि भारत की पहचान गाँवों के रूप में ही थी, इसी को दृष्टिगत रखते हुए ग्रामीण व्यवस्था को ही आधार बनाया गया था। तब से लेकर वर्तमान में भी ग्रामीण शिक्षा व्यवस्था संचालित है।

स्वच्छता की अवधारणा के सन्दर्भ में गाँधी जी ने अपने विचार रखे थे। चूँकि आजादी से पूर्व में भारत में निर्धनता अधिक थी और संसाधनों का अभाव भी था। अतः गाँधी जी ने तत्कालीन आवश्यकताओं और सुविधा के अनुरूप उपाय उपलब्ध कराये थे। वर्तमान में ग्रामीण महिलाओं हेतु इज्जतघर और भारतीय ग्रामीण शिक्षा की नीव गाँधी की ही सोच का प्रतिफल है। इसी कारण 2019 तक खुले शौच से मुक्त करने के लिए 'स्वच्छ भारत' अभियान के अन्तर्गत चलाए जा रहे कार्यक्रम का प्रतीक चिह्न गाँधी जी का ही चश्मा है।

जब हम ग्रामीण शिक्षा पर चर्चा करते हैं, तो पाते हैं कि ग्रामीण शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिंह राव ने 1995 में मिड डे मील योजना को पेश किया था। इसके पीछे अवधारणा यह थी कि गरीबी और भूख के चलते खासतौर पर ग्रामीण बच्चे कुछ कमाई करने के लिए अपने माता–पिता का हाथ बँटाने के चक्कर में बीच में ही अपनी शिक्षा को छोड़ देते हैं। वहीं दूसरी ओर लाखों टन अनाज एफ0सी0आई0 के गोदामों में पड़ा–पड़ा सड़ जाता था। इसी के दृष्टिगत तत्कालीन प्रधानमंत्री स्कूलों में बढ़ते ड्रापआउट रोकने की योजना बनाते हुए हरियाणा सुरजकुंड में मिडन्डेमील योजना का बना भोजन स्वयं खाकर इस योजना को प्रारम्भ किया था। यही कारण है कि देश का शैक्षिक और साक्षरता के परिदृश्य में लगातार वृद्धि हो रही है। इन योजनाओं का ही प्रभाव है कि 2001 में भारत में साक्षरता का जो प्रतिशत था, वह 2021 में बढ़कर 73.5 प्रतिशत हो गया है। स्वच्छ विद्यालय के अधीन स्कूलों में लड़कों और लड़कियों के लिए पृथक–पृथक शौचालयों के निर्माण के शतप्रतिशत अर्जित लक्ष्य मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्राप्त मुख्य उपलब्धियों में से एक है। मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा ई–पाठशाला, सारांश, दर्पण और मोबाईल ऐप पर, एन0सी0ई0आर0टी0 की पुस्तकों की

उपलब्धता जैसी कई नीतियाँ लागू की गयी है। वहीं नई शिक्षा नीति (एन0ई0पी0) 2020 का गठन करके 23 वर्षों के बाद किया जा रहा है।

विशेष जरूरत वाले बच्चे – सर्वशिक्षा अभियान के सहयोग से 25 लाख से अधिक बच्चों को प्राथमिक शिक्षा हेतु प्रवेश दिलाया गया है। विशेष जरूरत वाले ऐसे बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के लिए एन0सी0ई0आर0टी0 द्वारा क्लासरूम के लिए पाठ्यक्रम की समरूपता हेतु सामग्री को विकसित किया गया है।

बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ – बालिकाओं में शिक्षा को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से 20 जनवरी, 2015 यह कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। यह कार्यक्रम महिला एवं बालविकास मंत्रालय, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय और मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा संयुक्त रूप चलाया जा रहा है। 25 जून 2015 को अर्न्तराष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर छठीं से दसवीं कक्षा हेतु योग का पाठ्यक्रम जारी किया गया है।

ई–पाठशाला – ई–पाठशाला का शुभारम्भ मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा डिजिटल इण्डिया अभियान के एक हिस्से के रूप में किया गया, जो कि एन0सी0आर0टी0 पाठ्य पुस्तकों और अन्य विभिन्न शैक्षिक संस्थानों में निहित ई–रिसोर्सेज का एकल बिंदु संग्रह है। एन0सी0ई0आर0टी0 द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों हेतु 19वीं से 12वीं तक पाठ्यक्रम सी0बी0एस0ई0 निर्धारित करता है।

मिडडे मील योजना – भारत सरकार ने 30 सितम्बर 2015 को मिडडे मील नियमावली 2015 को अधिसूचित किया है। इस योजना को लागू करने वाली एजेंसियों द्वारा इस नियमावली के प्रभावी अनुपालन में स्कूलों में बालिकाओं में मिडडे मील की बेहतर नियमितता सुनिश्चित करने में राज्यों को मद्द मिल रही है।

स्टडी वेब्स ऑफ एक्टिव लर्निंग फॉर यंग एण्ड एस्पायरिंग माइंड्स–यह (SWAYAM) एक ऐसा पोर्टल है, जिसमें सभी विषयों पर मैसिव ओपन ऑनलाईन कोर्सेस उपलब्ध है। 'स्वयं' एक भारतीय इलेक्ट्रानिक ई–शिक्षा मंच हैं, जिसमें हाईस्कूल से लेकर पोस्ट ग्रेजुएट स्तर के लिए इलेक्ट्रानिक प्लेटफार्म में पाठ्यक्रमों को प्रस्तावित किया गया है। आई0टी0 का प्लेटफार्म 'स्वयं' 09 जुलाई 2017 को भारत के महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविन्द ने प्रारम्भ किया। 'स्वयं' 34 डी0टी0एच0 चैनलों के माध्यम से लगभग 2000 पाठ्यक्रम आयोजित करने की क्षमता है। राष्ट्रीय कौशल योग्यता फ्रेमवर्क के अनुसार

प्रारम्भ किया गया। क्रेडिट फ्रेमवर्क फॉर स्किल्स एण्ड एजुकेशन (सीबीसीएस) औपचारिक प्रणाली के माध्यम से शिक्षा प्रणाली में बहुआयामी निकास और प्रवेश को अनुमति देने के माध्यम से कौशल का प्रमाणीकरण करने का मार्ग प्रशस्त करता है। वर्ष 2015–16 से (सीबीसीएस) प्रणाली सभी 39 केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में लागू किया गया है।

सक्षम भारत अभियान – ग्रामीण क्षेत्रों के विकास समर्थ बनाने और इसके उपयोग के लिए उच्च शिक्षा और समाज को जोड़ने के उद्देश्य से किया गया है।

उच्चतर अविष्कार अभियान – सभी आई0आई0टी0 को नवाचार के लिए अपेक्षित क्षेत्रों की पहचान करने के लिए उद्योग के साथ मिलकर काम करने तथा व्यवसायीकरण के स्तर पर प्रयोग किये जाने वाले समाधान सुझाने के लिए प्रोत्साहित किया गया है। उच्चतर अविष्कार अभियान इन कार्यों को करने हेतु दो सौ पचास करोड़ रूपये का निवेश प्रतिवर्ष कर रहा है। इसके अतिरिक्त विशेषकर पिछड़े क्षेत्रों और उत्तर–पूर्व के राज्यों के लगभग 134 जिलों में विशेष साक्षरता अभियान था, तो चलाये जा चुके हैं या चलाए जा रहे हैं।

'स्किल इण्डिया' प्रोग्राम – यह योजना युवाओं को रोजगार हेतु उन्मुख करने और उन्हें दक्ष बनाने हेतु लागू किया गया है। इसके अन्तर्गत 'स्किल इण्डिया' अभियान के अन्तर्गत देशभर में लगभग 1500 मल्टी स्किल डेवलपमेंट सेन्टर खोले जा चुके हैं। जिसके लिए 3418.07 करोड़ रूपये 2022–23 हेतु जारी किया गया है।

अब हम विचार करते हैं ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं ओर सुविधाओं की। भारत सरकार स्वास्थ्य से जुड़े बहुस्तरीय बुनियादी ढाँचे के निरन्तर सुदृढ़ीकरण और राज्यों के साथ सक्रिय सहयोग करते हुए सार्वजनिक स्वास्थ्य से जुड़े उपायों की व्यवस्था की गयी है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं की पहुँच बढ़ाने के उद्देश्य से 2005 में 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' प्रारम्भ किया गया। इसका उद्देश्य 2012 तक स्वास्थ्य सुविधाओं को विशेष रूप से कमजोर स्टोर खोले गये हैं, जिसमें से अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किये गये हैं।

सरकार ने 'आयुष' विभाग के माध्यम से पारम्परिक भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के मध्य आयुर्वेद को पुनर्जीवित करने और प्रसारित कर विस्तारित

करने का प्रयास किया है। ग्रामीण क्षेत्रों यदि अभी तक अत्याधुनिक अथवा बड़े अस्पताल नहीं हैं और चिकित्सकों का अभाव है। ऐसे क्षेत्रों में आयुर्वेद, यूनानी और होम्योपैथी पद्धतियों से प्रभावी और किफायती उपचार के विकल्प खोजे गये हैं। सरकार के इस अभियान का वास्तविक लाभ ग्रामीण क्षेत्रों को प्राप्त हो रहा है। योगशिक्षा को बढ़ावा देना भी सरकार का लोगों को स्वास्थ्य प्रति जागरूक करने के अभियान का ही एक प्रमुख हिस्सा है। योग प्रोत्साहन और बढ़ावा देने से आम जन मानस न केवल स्वास्थ्य लाभ ले सकता है बल्कि दीर्घकाल तक स्वस्थ और संयमित जीवन जी सकता है। चूँकि स्वास्थ्य और शिक्षा दोनों संविधान की समवर्ती सूची के विषय है। अतः केन्द्र सरकार राष्ट्रीय स्तर पर योजनाएँ तो बना सकती है, लेकिन उन्हें राज्यों को अपनी अनुरूपता में ही लागू किया जा सकता है।

पूर्व विवेचनों के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत सरकार के शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सुधारों तथा नूतन व्यवस्थाओं से भारतीय ग्रामीण शिक्षा में जहाँ एक ओर मूलभूत परिवर्तन हो रहे हैं, जिससे शिक्षा सम्बन्धी सुधार और सुविधाओं में वृद्धि हो रही है, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण स्वास्थ्य विषयक सुधारों और संसाधनों की उपलब्ध से उसमें नूतन विकास और बदलाव आये हैं, जो सरकार के अपने लक्ष्य और दायित्वों की पूर्णता में उत्तम प्रयास सिद्ध हुआ है।

सन्दर्भ

1. *भारत भूषण, स्वास्थ्य, पोषण और आयुर्वेद–योजना पत्रिका अक्टूबर 2012 पृ0 2730*
2. *उमेश चतुर्वेदी कुरूक्षेत्र पत्रिका अंक 08 पृ0 62*
3. *नीरज, चतुर्वेदी, ग्रामीण समाज में शिक्षा का महत्त्व क्या है ? www.leverageedu.com*
4. *डॉ. ऋतु सारस्वत, ग्रामीण भारत में स्वास्थ्य योजनाएँ : एक आकलन, कुरूक्षेत्र, अंक जुलाई 2015*
5. *चन्द्रकांत लहरिया, ग्रामीण भारत में चिकित्सा की बुनियादी सुविधाएँ, कुरूक्षेत्र अगस्त 2018*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 149-154

भारतीय स्वाधीनता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

*मधु मिश्रा**

14 अगस्त 1947, एक ऐसी रात जब लोग सोये तो गुलाम देश में थे लेकिन अगली सुबह उनकी आजादी देश की आजादी की सुबह थी, अर्थात् 15 अगस्त 1947। आज भी हम ऐसा सोचते हैं कि भारतीय स्वाधीनता संग्राम में हमारे देश के महान पुरुषों क्रांतिकारियों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। हम महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, सुभाष चंद्र बोस, चंद्र शेखर आजाद, भगत सिंह जैसे पुरुषों की भूमिका को मानते हैं। याद करते हैं, परंतु भारतीय स्वाधीनता संग्राम में पुरुषों के अलावा महान महिलाओं की भी अहम भूमिका रही है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम 1857–1947 तक भारत में ब्रिटिश शासन को समाप्त करने के साथ ऐतिहासिक घटनाओं की श्रृंखला रही है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देने वाली महिलाओं, उनके जीवन, संघर्ष और आंदोलन में उनकी भूमिका को कभी भी पुरुषों के समान मान्यता नहीं दी गई। उनके द्वारा किए गये कार्यों का विवरण भी बहुत संक्षेप में उल्लेखित किया जाता है, जबकि महिलाओं की भागीदारी 1817 से ही शुरू हो गयी थी।

राष्ट्रीय स्तर पर सरोजिनी नायडू, विजयलक्ष्मी पंडित, कमला देवी चट्टोपाध्याय और मृदुला साराभाई से शुरुवात करते हुए हम केरल में ऐनी मैसक्रिन और ए वी कुट्टीमलुममा, मद्रास प्रेसीडेंसी में दुर्गा बाई देशमुख, यूपी में रामेश्वरी नेहरू और बी अम्मान , दिल्ली में सत्यवती देवी और सुभद्रा जोशी, बंबई में हंसा मेहता और उषा मेहता और कई अन्य जैसे प्रांतीय स्तर के नेताओं के नाम गिने जा सकते हैं। वास्तव में हमारे स्वाधीनता संग्राम की प्रकृति ऐसी है कि क्षेत्रीय स्तर और अखिल भारतीय स्तर के नेताओं के बीच अंतर करना बहुत मुश्किल है। कई महिलाओं ने स्थानीय स्तर पर शुरुआत की और आगे चलकर राष्ट्रवादी मंच की प्रमुख बनी। इन सभी भारतीय महिलाओं के अलावा ऐनी बेसेंट, मारग्रेट कजिन्स जैसी आयरिश महिलायें भी थी, जो ब्रिटिश शोषण के आयरिश अनुभव के अपने ज्ञान को भारत ले आयी। भारतीय स्वाधीनता संग्राम में महिलाओं की भूमिका अग्रलिखित हैं –

---

* *शोध छात्रा, मध्यकालीन इतिहास, डॉ.राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.)*

बी अम्मान

यूपी में खिलाफत आंदोलन अली भाइयों, मौलाना मोहम्मद अली और शौकत अली के कार्यों को बी अम्मान के ऊर्जावान प्रयासों से चिन्हित किया गया था। बी अम्मान वह लोकप्रिय नाम था जिससे वह जानी जाती थी, उनका वास्तविक नाम आबादी बानो बेगम था । एक साहसी महिला जिसने पितृसत्ता और परदादा को अपने रास्ते में नहीं आने दिया, उन्होंने 1914 के आस–पास सक्रिय राजनीति की, जब उनके बेटे जेल में थे, क्योंकि उन्हे लगा कि इस कारण किसी को नुकसान नहीं होना चाहिए। वह तब तक साठ से अधिक थी– उन्होंने खिलाफत आंदोलन के दौरान पंजाब, बंबई, यूपी और बिहार का दौरा किया, कई सभाओं को संबोधित किया और आंदोलन के लिए बड़ी रकम इकट्ठा किया वह अपने को पर्दा से अलग करती और सभा को संबोधित करतीं, महिलाओं को आगे आने और बड़ी संख्या में आंदोलन में भाग लेने के लिए कहतीं। खिलाफत मुद्दे पर आयोजित जनसभाओं में महिलाओं को आकर्षित करने में उनकी उपस्थिति ने प्रमुख भूमिका निभाई।

पद्मजा नायडू

21 वर्ष की आयु में,उन्होंने राष्ट्रीय परिदृश्य में प्रवेश किया और हैदराबाद की भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की संयुक्त संस्थापक बनीं। उन्होंने खादी का संदेश फैलाया और लोगों को विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के लिए प्रेरित किया। उन्हें 1942 में "भारत छोड़ो" आंदोलन में भाग लेने के लिए जेल में डाल दिया गया था। स्वतंत्रता के बाद,पद्मजा पश्चिम बंगाल की राज्यपाल बनीं।

कैथरीन मैरी हेइलमैन

इनका नाम गांधी जी द्वारा सरल बेन रखा गया, ये समाजसेविका थीं। उत्तराखंड के कुमाऊँ की पहाड़ियों में कौसली में आश्रम स्थापित किया,राजनीतिक कैदियों के परिवारों की मदद करने के लिए गाँव –गाँव गयी उन्होंने "रिवाइविंग आवर डाइंग प्लेनेट" नामक पुस्तक लिखी।

रामेश्वरी नेहरू

जवाहरलाल नेहरू के चचेरे भाई की पत्नी रामेश्वरी नेहरू ने इलाहाबाद में एक महिला सभा की स्थापना की और इलाहाबाद की महिलाओं को राजनीतिक

मुद्दों पर चर्चा करने के लिए घरों से बाहर निकालने की कोशिश की। 1917 में नेहरू जी की बहन विजय लक्ष्मी पंडित ने वर्णन किया है कि जिस मुद्दे पर चर्चा की जा रही थी वह विषय ' दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की दुर्दशा थी'। रामेश्वरी जी ने महिला पत्रिका "स्त्री दर्पण" की स्थापना किया जो हिन्दी पढ़ने वाली जनता के बीच बेहद लोकप्रिय हुई थी।

कल्पना दत्ता

यह सूर्यसेन जी के विचारों से प्रभावित महिला क्रांतिकारी नेता थी, चटगांव शस्त्रागार छापें में शामिल हुई, और बाद में वह भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गईं।

मैडम भीका जी कामा

1907 में स्टटगार्ट (जर्मनी) में अंतर राष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन में पहला राष्ट्रीय ध्वज फहराया। फ्री इंडिया सोसाइटी का आयोजन किया और अपने क्रांतिकारी विचार को फैलाने के लिए "वन्दे मातरम्" पत्रिका शुरू की। उन्हें उपयुक्त रूप से "भारत माता की संयुक्त राज्य अमेरिका में पहली सांस्कृतिक प्रतिनिधि" कहा जा सकता है।

अरुण आसफ अली

1942 में भारत छोड़ो आंदोलन की शुरुवात का संकेत देने के लिए राष्ट्रीय ध्वज फहराया। भारत छोड़ो आंदोलन की पूर्ण कार्यकर्ता बन गई और गिरफ़्तारी से बचने के लिए भूमिगत हो गईं । भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की मासिक पत्रिका 'इंकलाब' का संपादन किया। उन्हें भारत के सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया था।

राजकुमारी अमृत कौर

1919 से गांधीजी की करीबी अनुयायी थी। 1930 के नामक सत्याग्रह और भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। स्वतंत्र भारत की पहली स्वास्थ्य मंत्री बनीं, वह भारतीय बाल कल्याण परिषद् की संस्थापक अध्यक्ष और अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की संस्थापक सदस्य थीं।

भगिनी निवेदिता

स्वामी विवेकानंद की शिष्या सिस्टर निवेदिता मिस मारग्रेट नोबेल नाम की एक आयरिश महिला थीं। जो सत्य की खोज में जनवरी, 1898 में भारत आईं। उन्होंने पूरे अमेरिका और यूरोप में भारत के लिए प्रचार किया। 1905 में बनारस काँग्रेस अधिवेशन में भाग लिया और स्वदेशी आंदोलन का समर्थन किया।

ऐनी बेसेंट

यह एक आयरिश महिला थीं। इन्होंने 1916 में होमरुल तथा थियोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना किया। 1917 में कलकत्ता में एक कार्यकाल के लिए भारतीय राष्ट्रीय कॉग्रेस की पहली महिला अध्यक्ष बनीं। 'न्यू इंडिया' और 'कॉमनवेल्थ' का सम्पादन किया, स्वतंत्रता संग्राम, शैक्षिक उन्नति और सामाजिक सुधारों के लिए ऐनी बेसेंट को हम याद करते हैं।

सुचेता कृपलानी

समाजवादी उन्मुखता के साथ एक उत्साही राष्ट्रवादी थीं। सेंट स्टीफेन्स से पढ़ी हुई थी। इस राजनेता ने 15 अगस्त 1947 को संविधान सभा के स्वतंत्रता सत्र में वन्दे मातरम गाया था।

सरोजिनी नायडू

1925 में कानपुर के अधिवेशन में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की पहली भारतीय महिला अध्यक्ष थी, 1928 में गांधी जी से अहिंसा का संदेश लेकर अमेरिका गईं। 1930 में जब गांधी जी को एक विरोध के लिए गिरफ्तार कर लिया गया तो सरोजिनी जी ने आंदोलन की कमान संभाली, 1931 में गांधीजी और पंडित मालवीय के साथ गोलमेज शिखर सम्मेलन में भाग लिया। वह 1932 में काँग्रेस की कार्यवाहक अध्यक्ष भी रहीं, 1942 भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान गिरफ्तार हुईं और 21 महीने जेल में रहीं।

कमला देवी चटोपाध्याय

1929 में युवा काँग्रेस की अध्यक्ष चुनी गयीं और उन्होंने काँग्रेस नेताओं से पूर्ण स्वराज को अपना लक्ष्य घोषित करने की अपील किया था। 26 जनवरी

1930 को कमला देवी ने सबका मन मोह लिया। जब हाथापाई में तिरंगे की रक्षा के लिए चट्टान का काम किया। उन पर काफी वार हुए, जिसमें उनका काफी खून बह गया।

उषा मेहता

उषा मेहता ने विट्ठलभाई झावेरी, बाबूभाई खाकर और राम मनोहर लोहिया के साथ बॉम्बे में फ्रीडम रेडियो की स्थापना की, जो 3 सितंबर 1942 से उसी वर्ष 12 नवंबर तक सफलतापूर्वक प्रसारित किया।

रानी लक्ष्मीबाई

रानी लक्ष्मीबाई स्वतंत्रता सेनानी थी। उन्हें हम झांसी की रानी के नाम से भी जानते हैं। रानी विक्टोरिया ने अंग्रेजों को झांसी पर हमला करने और रानी को मारने का आदेश दिया था, परंतु इस वीर नायिका ने मरते दम तक अंग्रेजों को सफल नहीं होने दिया। 17 जून 1858 का वह दिन था, जब खूब लड़ी मर्दानी, अपनी मातृभूमि के लिए जान देने से भी पीछे नहीं हटी ''मैं अपनी झांसी नहीं दूँगी'' अदम्य साहस के साथ उनके द्वारा बोला गया यह वाक्य बचपन से लेकर अब तक हमारे साथ है।

रानी गाइडिनलियु

रानी गाइडिनलियु भारत की नागा आध्यात्मिक एवं राजनीतिक नेत्री थीं जिन्होंने भारत में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध विद्रोह का नेतृत्त्व किया उनको भारत सरकार द्वारा समाज सेवा के क्षेत्र में 1982 में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था।

निष्कर्ष

इस प्रकार भारतीय स्वाधीनता संग्राम में प्रत्यक्ष तथा परोक्ष दोनों प्रकार से महिलाओं की भूमिका प्रशंसनीय मानी जा सकती है। नेहरू जी ने भी अपनी पुस्तक ''भारत एक खोज'' में एक फ्रांसीसी लेखक के शब्दों का उल्लेख करते हुए लिखा हैं कि " यदि किसी समाज के विकास का अनुमान लगाना है, तो उस समाज में महिलाओं की भागीदारी को देखना आवश्यक है।" हमारे स्वाधीनता

संग्राम में महिलाओं की भूमिका ने समाज को उन्नति की तरफ अग्रसर किया है। 1940 के दशक के दौरान प्रगतिशील लेखक संघ और भारतीय जन नाट्य संघ जैसे वामपंथ के विभिन्न सहायक संगठनों में भग लेने वाली महिलाओं की संख्या में कई गुणा वृद्धि हुई। रशीद जहां इस्मत चुगताई, रेखा जैन और अन्य ने साहित्य, रंगमंच और संगीत में अपनी पहचान बनाई।

इन सभी सांस्कृतिक रूपों का उपयोग भारत के विभिन्न हिस्सों में श्रमिकों और किसानों को लामबंद करने के लिए किया गया था। यह भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं द्वारा निभाई गई बहुत सक्रिय भूमिका के साथ संयुक्त रूप से इंगित करता है कि 1940 के दशक तक महिलायें किस हद तक "इतिहास की प्रेरक" बन रही थीं।

संदर्भ

1. *चंद्र, बिपिन, 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 1990, पृ. 2*
2. *डॉ. एस.एल. नगोरी, कांता नगोरी, भारतीय वीरांगनाएं, तन्वी पब्लिकेशन, 2017, पृ. 14–15*
3. *राज लक्ष्मी गौड़, नारी जागरण और गाँधीजी (लेख), मध्य प्रदेश संदेश, 1971*
4. *वेबीनार फ्रॉम बाई जूस, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भूमिका, 2022*
5. *गुप्ता मोहिनी, गुप्त विश्व प्रकाश, स्वतंत्रता संग्राम और महिलायें, राधा पब्लिकेशन्स, 2008, पृ. 94*
6. *अग्रवाल,डॉ० चंद्र मोहन , : 'युग युगीन भारतीय नारी' इंडियन पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, 2000*
7. *शर्मा, प्रज्ञा, 'भारतीय समाज में नारी' पॉइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर 2001*
8. *मिश्रा, सरस्वती, 'भारतीय स्त्रियों की परिस्थिति' शारदा पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1996*
9. *कौर, मनमोहन, 'रोल ऑफ वुमेन इन फ्रीडम मूवमेंट', स्टर्लिंग पब्लिकेशन्स, मोरीगेट, दिल्ली–6*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 155-159

पंचदशी में वर्णित ब्रह्मविचार

*स्मिता पटेल**

सारांश

ब्रह्म इस दृष्टिगोचर सम्पूर्ण चराचर जगत का मूल कारण और मूलाधार है। नेत्र जिसको देख नहीं सकते, कर्ण जिसकी ध्वनि नहीं सुन सकते तथा इन्द्रियाँ जिसे महसूस नहीं कर सकती, नाम रूपादि से रहित वह ब्रह्म केवल अनुभूति योग्य है। चूँकि मानव जीवन विविध दुःखों से संतप्त है और वह इन दुःखों से आत्यन्तिक निवृत्ति चाहता है। दुःख निवृत्ति और सुख की प्राप्ति के लिए ब्रह्म का ज्ञान आवश्यक है। इसी कारण ब्रह्म की जिज्ञासा स्वतः हो जाती है और अपनी इस जिज्ञासा को शान्त करने के लिए वह विविध शास्त्रों और दर्शनों का सहारा लेता है। आचार्य विद्यारण्य स्वामी जी ने आत्मा को ही ब्रह्म माना है और आत्मा तथा परमात्मा में ऐक्य प्रतिपादन के लिए चार वेदों से चार महावाक्य उद्धृत करके भली–भाँति ब्रह्मतत्व का प्रतिपादन किया है। उस ब्रह्म की सत्य, शाश्वत, सत्ता तथा जगत को स्पष्ट करने के लिए पंचदशीकार ने एक का दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। जिसमें ब्रह्म के शुद्ध निर्विकार होने से लेकर अपंचीकृत भूत रचित सूक्ष्म शरीर से युक्त होने तक का वर्णन किया है। वह ब्रह्म अशरीरी, निराकार, अविनश्वर, अजर अमर और शाश्वत है। वह लघु से लघु और महान से महान है। जो ब्रह्मतत्व को जान गया उसको जन्म मृत्यु से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। न केवल पंचदशीकार वरन् सभी दार्शनिक यह बात स्वीकार करते हैं।

संसार के सभी प्राणियों में मनुष्य सर्वाधिक तर्कशील और विचारशील प्राणी है। उसकी सदैव ही जिज्ञासा रहती है कि दुःख निवृत्ति और सुख की प्राप्ति कैसे हो? परन्तु सुख क्या है? क्या रूपये प्राप्त कर लेना, परीक्षा में सफल हो जाना या नौकरी पा लेना सुख है? एक सुखद वस्तु प्राप्त होने पर दूसरे की कामना स्वतः उत्पन्न हो जाती है। इसीलिए सुख की कोई निश्चित परिभाषा देना असम्भव है। यही कारण है कि दर्शनों का मुख्य लक्ष्य हैः सुख प्राप्ति का ऐसा उपाय बताया जाये, जो आत्यान्तिक दुःखों के निवारण में समर्थ हो। सांसारिक दुःखों से निवृत्ति को दार्शनिक भाषा मे मोक्ष करते हैं। कोई दर्शन कहता है, महेश्वर की सेवा से मोक्ष मिलता है, तो कोई आत्मसाक्षात्कार को मोक्ष का मार्ग बताता है। वहीं कुछ दर्शन ब्रह्म ज्ञान को ही मोक्ष का साधन स्वीकार करते हैं।

* *शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग, फिरोज़ गाँधी कालेज, रायबरेली*

ब्रह्म अथवा आत्मा एक ऐसी सर्वव्यापी सत्ता है, जो इस दृष्टि के प्रत्येक कण में विद्यमान है। जिसका अर्थ विशाल या विराट है, जिससे विश्व की उत्पत्ति हुई है, जिस पर सम्पूर्ण विश्व आधारित है और अन्त में जिसमें सब विलीन हो जाता है, वह एक अद्वितीय परम ब्रह्म ही है। ब्रह्मशब्द की व्युत्पत्ति बर्हति, वर्धति व्याप्नोति इति ब्रह्म अर्थात् जा सदैव वर्धमान है, व्यापक है वही ब्रह्म है। वृह धातु में मनिन् प्रत्यय लगाकर ब्रह्म पद की निष्पत्ति हुई है। ब्रह्मपद का मौलिक अभिप्राय एकमात्र शाश्वत नित्य चेतन तत्त्व है, जो सत् चित् आनन्द स्वरूप है और इस दृश्य और अदृश्य जगत का कारण है। मैं ब्रह्म को जानता हूँ, मैं ब्रह्म को नहीं जानता हूँ, ये सब व्यापार छोड़कर जो स्वयं अद्वितीय चेतन रूप में रहता है, वह स्वयं ब्रह्म है–

दर्शनादर्शने हित्वा स्वयं केवलरूपतः।
यस्तिष्ठति स तु ब्रह्मन् ब्रह्मवित्स्वयम्।।[1]

ईश्वर, सर्वात्मा, भगवान, परमात्मा, परममत्व, परमसत्ता आदि अनेकानेक नामों से जाना जाता हुआ अशब्द, अस्पर्श, अरूप, अव्यय तथा नित्य ऐसी जिसकी व्याख्या की जा सकती है, वह ब्रह्म अविनाशी है। जिस प्रकार फलादि कार्य उत्पन्न करने के पश्चात् भी कदली आदि पौधों की अनित्यता देखी गयी है, उस प्रकार ब्रह्म का अन्तवत्व नहीं देखा गया है। कठोपनिषद् के ब्रह्म के सम्बन्ध में कहा गया है–

अशब्दमस्पर्श रूपमव्ययं, तथारसं नित्यमगन्धवच्च यत्।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं, निचाय्यं तन्मृत्युमुखात्प्रमुच्यते।[2]

वह ब्रह्म जो सभी वर्णनों और संकल्पनाओं से परे हैं। उसके सम्बन्ध में मनीषियों का कहना है कि जिसे हम देख नहीं सकते, वाणी से व्यक्त नहीं कर सकते, जो सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर है और महान से भी महतर, जो जीवात्मा के हृदय रूपी गुहा में निवास करता है, ऐसे उस सर्वव्यापी ब्रह्म को न बहुत प्रवचन से, न मेधा से, न सुन कर प्राप्त किया जा सकता है वरन् कोई विरला वीतशोक साधक ही उसकी कृपा से उसको प्राप्त कर सकता है :–

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यते, न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमैवेष वृणुते तेन लभ्यस्तस्येश आत्मा विवृणुते तनूंस्वाम्।।[3]

ब्रह्म के सम्बन्ध में सदानन्द जी भी कहते हैं कि 'वस्तु सच्चिदानन्दाद्वयं ब्रह्म[4]' अर्थात् जो भूत, भविष्य, वर्तमान काल में भी विनाश को प्राप्त न होने वाला, जो सदा अक्षुण्ण रहे वह ब्रह्म है। वह ब्रह्म सर्वथा निष्क्रिय, निर्विकार

और निराकारादि है। उसे किसी भी रूप में परिभाषित करना सम्भव नहीं है, फिर भी दर्शनाशास्त्रों और उपनिषदों में उसे 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म[5]' कहकर परिभाषित करने का प्रयास किया है। ब्रह्म की इसी असीमितता और विशालता को व्यक्त करने के लिए छान्दोग्योपनिषद् में कहा गया हैः–

यो वै भूमा तत्सुखं। नाल्पे सुखमस्ति।
भूमैव सत्यं सुखम्। भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्यः।[6]

आचार्य स्वामी विद्यारण्य ने अपने ग्रन्थ पंचदशी में स्पष्ट रूप से आत्मा को ही ब्रह्म माना है। आत्मा एवं परमात्मा में ऐक्य प्रतिपादन करते हुए विद्यारण्य जी कहते हैं कि ब्रह्म एवं आत्मा एक ही वस्तु के दो नाम हैं। इस एकरूपता को व्यक्त करते हुए कहते हैं :–

इत्थं सच्चितपरानन्द आत्मा युक्ता, तथाविधम्।
परं ब्रह्म, तयोश्चैक्यं श्रुत्यन्तेषूपदिश्यते।।[7]

वेदों में भी आत्मा एवं परमात्मा के ऐक्य प्रतिपादन के लिए अनेक वाक्य प्रस्तुत किये गये हैं। स्वामी विद्यारण्य जी ने चार वेदों से एक एक महावाक्य उद्धत किये हैं :–

प्रथम महावाक्य 'ऋग्वेदीय ऐतरेयोपनिषद' से उद्धृत है। इस महावाक्य में प्रज्ञानं पद की व्याख्या करते हुए मुनि कहते है। विविध वृत्तिरूप उपाधियों से युक्त चैतन्य ही निर्विकार रूप में प्रज्ञान है। जिस चेतना शक्ति द्वारा प्राणी विविध क्रियाकलापों को करता है, वह चेतना शक्ति ही आत्मा है, वही प्रज्ञान है और प्रज्ञान स्वरूप ही ब्रह्म है।

द्वितीय महावाक्य 'यजुर्वेदीय बृहादारण्यकोपनिषद्' से अहं ब्रह्मस्मि है। इस महावाक्य में तीन पद हैं – अहं ब्रह्म अस्मि। स्वामी विद्यारण्य मुनि के अनुसार शम, दम, श्रवणादि ज्ञान युक्त देह परमात्मा के साक्षीरूप में स्थित जो प्रकाशमान है, वही अहम पद है। परन्तु मनुष्य अपना मौलिक स्वरूप होते हुए भी उस आत्मा रूपी ब्रह्म को नहीं जान पाता है। इसीलिए पंचदशीकार कहते हैं, अनुभव ज्ञान द्वारा सिद्ध होता है कि अहं तथा ब्रह्म पद दोनों एक ही परमात्मा के वाचक हैं तथा अस्मि पद इनकी एकता को सिद्ध करता है। मैं आत्मा हूँ, आत्मा ब्रह्म है, अतः मैं ही ब्रह्म हूँ।

तृतीय महावाक्य तत्त्वमसि है। इस महावाक्य में भी तीन पद तत् त्वम् असि। इस दृश्यमान संसार का निमित्त और उपादान दोनों कारण ही ब्रह्म है, तत् पद कारण रूप ब्रह्म है और त्वम् पद शरीर, इन्द्रिय, प्राण, मन आदि में स्थित

होता हुआ भी इन सबसे पृथक शुद्ध, निर्विकार, चेतनतत्त्व की ओर संकेत करता है तथा असि पद ऐक्य पद का बोधक है। तत्त्वमसि इस महावाक्य का प्रतिपाद्य अर्थ है ब्रह्म सत् चित् आनन्द स्वरूप है। यदि ईश्वर और जीव दोनों के उपाधि भाग का परित्याग कर दिया जाये तो मूलतत्त्व ब्रह्म ही शेष रहता है।

चतुर्थ महावाक्य अयमात्मा ब्रह्म अथर्ववेदीय माण्डूक्योपनिषद् पद से लिया गया है। इसमें स्वयं प्रकाशमान होने से जो प्रत्यक्ष हो रहा है, वह अयम् पद से व्यक्त किया गया है। जिसमें जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं का बोध होता हे, जो नित्य स्वयं प्रकाश है अहंकार से देह पर्यन्त जो प्रत्यक्ष साक्षी चेतनतत्त्व है, वही आत्मा ही ब्रह्म है।

इस प्रकार महावाक्यों को आधार बनाकर ब्रह्म को प्रतिपादित किया गया है। पंचदशीकार के अनुसार उस ब्रह्म की चार अवस्थाएँ होती है, चित्, अन्तर्यामी, सूत्रात्मा और विराट।

स्वतश्चिदन्तर्यामी तु मायावी, सूक्ष्मसृष्टितः।
सूत्रात्मा, स्थूलसृष्ट्यैव विराडित्युच्यते परः।।[8]

जिस प्रकार चित्रपट में अन्तिम अवस्था में वस्त्र, वस्त्रनिर्मित, आकृतिचित्र, रंग आदि अनेक वस्तुएँ दृष्टिगत होती हैं, ठीक उसी प्रकार ब्रह्म की चतुर्थ अवस्था में स्थूल सृष्टि उपाधि के संसर्ग से सम्पूर्ण जगत की रचना उपलब्ध होती है। सभी जड़, चेतन सृष्टि, भूमि, नदी, सूर्य, चन्द्र, पशु–पक्षी, देव, मनुष्य सब उसमें समाये हुए होते हैं। मनुष्य इस विश्व की उच्चतम कृति है। अन्नमय, मनोमय और ज्ञानमय कोष से मनुष्य का यह स्वरूप निर्मित हुआ है। किन्तु जब तक वह अपने को इन कोषों में सीमित रखता है, तब तक वह दुःखों से संतापित रहता है, परन्तु यदि वह अविनाशी, सच्चिदानन्द स्वरूप परब्रह्म को जान लेता है, तब ऐसी स्थिति में पहुँच जाता है, जहाँ कोई परिवर्तन नहीं होता है और इस परब्रह्म को जानने के लिए स्वात्म चिन्तन से बड़ा कोई साधन नहीं है :–

यथा अगाधनिधेर्लब्धौ नोपायः खननं विना।
मल्लाभे अपि तथा स्वात्मचिन्तां मुक्त्वा न चापरः।।[9]

अन्ततः पंचदशीकार का परम ध्येय इस अखण्ड, अविनाशी, परमतत्त्व के ऐक्य का साक्षात्कार करना है, क्योंकि सम्पूर्ण सृष्टि उस ब्रह्म का प्रतिरूप है। मनुष्य इस विश्व की जितनी भी कल्पना करता है, वह सब ब्रह्म ही है। जो दृष्टिगोचर हो रहा है, वह भी ब्रह्म है और जो अदृश्य है, वह भी ब्रह्म है।

जिस प्रकार लोहे के खण्ड को जानने के पश्चात् जो कुछ उस धातु से बना है उसको पहचाना जा सकता है, उसी प्रकार इस आत्मा रूपी ब्रह्म को जान लेने के पश्चात् सब कुछ ज्ञात हो जाता है। वह परम सत्ता एक, द्वितीय तथा आद्य है, उसको जानने के पश्चात् अज्ञात भी ज्ञात एवं अप्राप्य भी हो जाता है।

संदर्भ

1. *पंचदशी 4/68*
2. *कठोपनिषद् 1/3/15*
3. *कठोपनिषद् 1/2/23*
4. *वेदान्तसार*
5. *तैत्तिरीयोपनिषद् 2/1/1*
6. *छान्दोग्योपनिषद् 7/23/1*
7. *पंचदशी 1/10*
8. *पंचदशी 6/14*
9. *पंचदशी 9/153*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 160-170

भारतीय रक्षा का आधुनिकीकरण और सामरिक स्वायत्तता : एक ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक अध्ययन

*आशा**

सारांश

रक्षा किसी भी राष्ट्र का मौलिक व सर्वोपरी राष्ट्र हित होता है, जिसका आधार एक सशक्त, सुदृढ़, समस्त साजो–सामान से संपन्न आत्मविश्वासी सेना होती है। एक राष्ट्र का विकास, शांति, समृद्धि तभी संभव होती है। जब वहाँ की सुरक्षा सुनिश्चित हो। रक्षा में आधुनिकीकरण सुरक्षा के साथ सामरिक स्वायत्तता भी सुनिश्चित करता है। भारत की सामरिक स्वायत्तता का विश्लेषण किया गया है। शोध में पिछले 75 वर्षों में भारतीय रक्षा के विकास व आधुनिकीकरण और सामरिक स्वायत्तता की यात्रा का विश्लेषण किया गया है, शोध से अवधारणात्मक, ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। शोध में द्वितीय स्रोतों से संग्रहित तथ्यों का प्रयोग किया गया है। शोध में पाया गया की रक्षा में आधुनिकीकरण व स्वदेशीकरण ने सेना को अधिक सशक्त, सुदृढ़ बनाया, जिससे देश की सामरिक स्वायत्तता सुनिश्चित हुई है।

शब्द सूची : *भारतीय रक्षा, आधुनिकीकरण, सामरिक स्वायत्तता, मेक इन इंडिया, आत्मनिर्भर भारत।*

शांति, सुरक्षा और सामरिक स्वायत्तता को सुनिश्चित करने के लिए बदलती परिस्थितियों व जरूरत के अनुरूप युद्ध के लिए तैयार रहना किसी भी देश की प्राथमिक आवश्यकता हैं। रक्षा में आधुनिकीकरण और आत्मनिर्भरता इसी संदर्भ में भारत का एक प्रयास है। सिपरी के 2023 के वार्षिक प्रतिवेदन के अनुसार भारत विश्व का सबसे बड़ा हथियार आयातक है। रक्षा खर्च के मामले में भारत का विश्व में अमेरिका, चीन और रूस के बाद चौथा स्थान है। (सिंह, 2023) 2022 में भारत का स्थान तीसरा था। भारत का रक्षा खर्च पिछले वर्ष की तुलना में छः प्रतिशत बढ़ा है। भारत ने 2022 में वैश्विक रक्षा हथियारों के आयात का ग्यारा प्रतिशत आयात किया। 2018–22 के बीच भारत के हथियार आयात में 11 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई। (स्टाफ, 2023) इस

* *शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय), लखनऊ, उत्तर प्रदेश*

गिरावट का बड़ा कारण, रक्षा जरूरत की पूर्ति में घरेलू उद्योग के योगदान में वृद्धि को बताया गया। अध्ययन में भारत की इस वर्तमान रक्षा स्थिति का विश्लेषण ऐतिहातिक सन्दर्भ में किया गया है, ताकि वर्तमान स्थिति का उचित अनुमान लगाया जा सके।

सामरिक स्वायत्तता

सामरिक स्वायत्तता किसी राष्ट्र की वह अवस्था है, जिसमें एक राष्ट्र, अपने राष्ट्र हितों के अनुरूप स्वायत्त विदेश नीति का संचालन करता है। जैसा की अमेरिका के पहले राष्ट्रपति जॉर्ज वॉशिंगटन ने 1796 में अपने विदाई भाषण में कहा की 'अपने भाग्य को यूरोप के किसी भी हिस्से से जोड़कर, अपनी शांति और समृद्धि को यूरोप की महत्त्वाकांक्षा, आपसी होड़, उनके हितों, जिद या सनक के साथ मिलाने से हमें क्या हासिल होगा?' (शेषासायी, 2022) उनका यह वक्तव्य सामरिक स्वायत्तता के संदर्भ जितना तब प्रासंगिक था, उतना ही आज भी प्रासंगिक है।

1947 से भारत जिस प्रकार की नीति का अनुसरण कर रहा है। वह सामरिक स्वायत्तता की अवधारणा पर आधारित है, जिसमें भारत के राष्ट्र हित सर्वोपरि है जिसके अनुरूप वह बिना किसी दबाव के अपनी विदेश नीति का अनुसरण कर रहा है। नव–स्वतंत्र भारत ने इसी सामरिक स्वायत्ता को बनाए रखने और स्वतन्त्र विदेश नीति का पालन करने के लिए गुटनिर्पेक्ष की नीति का अनुसरण किया, ताकि वह किसी देश का पिछलग्गू बनकर न रह जाये। भारत ने वि–उपनिवेशीकरण का समर्थन कर अन्य देशों की स्वायत्तता व स्वतंत्रता के लिए पुरजोर प्रयास किया। भारत आज जिस सामरिक स्वायत्तता का अनुसरण कर रहा है, उसका इतिहास बहुत पुराना है। बस समय के साथ इसका स्वरूप बदला है, लेकिन आधार आज भी समान है।

सामरिक स्वायत्तता का अनुसरण करने के लिए एक देश को सैन्य, कूटनीतिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से सशक्त होना अनिवार्य है, तभी वह वैश्विक स्तर पर अपने पक्ष को और सशक्त रूप से न केवल रख सकता है बल्कि उसे स्वीकृत भी करा सकता है। वैसे तो भारत हमेशा ही वैश्विक राजनीति में सामरिक स्वायत्तता के अनुरूप अपनी विदेश नीति के अनुसरण के लिए जाना जाता है, लेकिन पिछले कुछ वर्षों में इसमें एक विशेष प्रकार

का सकारात्मक परिवर्तन देखा गया। जिसका विश्लेषण इस लेख में किया गया है।

भारतीय रक्षा के आधुनिकीकरण के चार चरण

औपनिवेशिक विरासत से आजादी तक : भारतीय सेना का आरम्भिक विकास 17वीं सदी में हुआ और समय के साथ दुनिया की सबसे महान स्वयंसेवी सेनाओं में से एक बन गई। कुछ यूरोपीय शक्तियों, अर्थात् पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी और अंग्रेजी ने, व्यापार की खोज में, भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी जैसी व्यापारिक कंपनियों की स्थापना की, धीरे–धीरे देश को उपनिवेश बनाया और स्थानीय लोगों के बीच मतभेदों का फायदा उठाया। समय के साथ शासकों ने अंततः पूरे देश पर कब्जा कर लिया। शुरुआत में, उन्होंने भारतीयों को चौकीदार, दूत और रक्षक के रूप में नियुक्त किया। 1697 में भारतीय सेना का पहली बार गठन हुआ। (राओ, 2021) रॉबर्ट क्लाइव के नेतृत्त्व में अंग्रेजी सेना ने 1752 में अर्कोट की लड़ाई में फ्रांसीसियों को हराया। उसके बाद अंग्रेजों ने मैसूर युद्ध, मराठा युद्ध, नेपाल गोरखा से युद्ध, सिंध पर कब्जा, सिक्खों से युद्ध के आलावा भारतीय सैनिकों की टुकड़ियों ने फिलीपींस, सीलोन, मिस्र में भी लड़ाई लड़ी। (राओ, 2021) 1857 के विद्रोह के बाद ब्रिटिश क्रॉउन ने भारत सरकार अधिनियम 1858 के तहत भारत का नियंत्रण ईस्ट इंडिया कंपनी से अपने हाथ में ले लिया। जहां 1857 के विद्रोह के पहले ब्रिटिश सेना में भारतीयों का अनुपात छः अनुपात एक रखा था, उसे 1858 के सुधार के बाद तीन अनुपात एक कर दिया गया। 1903 और उसके बाद 1907 में पुनः सेना का पुनर्गठन किया और सेना को डिवीजन में बाट दिया गया। भारतीय सेना ने ब्रिटेन की तरफ से प्रथम विश्व युद्ध में भाग लिया।

भारतीय सेना ने दोनों विश्व युद्धों के बीच कई अभियानों में भाग लिया। इनमें मेसोपोटामिया 1921–1922, शंघाई 1927, बर्मा 1930–1932 और नॉर्थ वेस्ट फ्रंटियर शामिल थे। चौटफील्ड समिति (1938) ने भारतीय सेना के मशीनीकरण, भारत के भीतर छोटे हथियारों और गोला–बारूद का उत्पादन, विभिन्न सेवाओं को बढ़ाकर रसद व्यवस्था में और सुधार, नेतृत्त्व विकसित करने के लिए संस्थानों की स्थापना आदि सिफारिश की। द्वितीय विश्व युद्ध में भारतीय सेना ने अपनी शक्ति का अच्छा प्रदर्शन किया। द्वितीय विश्व युद्ध के अंत तक भारतीय सेना की ताकत 20 लाख से अधिक हो गई थी। द्वितीय

विश्व युद्ध के बाद वैश्विक परिस्थिति पूरी तरह बदलने लगी। औपनिवेशिक शक्तियाँ अब आर्थिक, राजनीतिक और सैन्य रूप से उतनी सक्षम नहीं रही थी, की वे उपनिवेशों को नियंत्रित रख सके।

संरक्षणवाद और आदर्शवाद से यथार्थवाद की ओर (आजादी से 1990 तक) : आजादी के बाद भारत की रक्षा रणनीति पूरी तरह ब्रिटिश विरासत पर आधारित थी। 1947 में भारत आजाद हो गया। आजादी के बाद और विभाजन के समय भारतीय सेना में 2,60,000 थल सैनिक, 88 बटालियनें, 12 टैंक रेजीमेंटें, 18 1/2 तोपखाना रेजिमेण्ट, 61 इंजीनियर यूनिटें तथा अन्य सिगनल, सैनिक पूर्ति, ऑर्डनेन्स, चिकित्सा तथा ई.एम.ई. यूनिटें थीं। (शर्मा, 1973) आजादी के तुरंत बाद भारत को पाकिस्तान से युद्ध का सामना करना पड़ा। इस युद्ध ने भारत की भविष्य की रणनीति निर्धारित की। भारत आजादी के बाद से ही केवल पाकिस्तान को ही खतरे के रूप में देखता रहा और उसी के अनुरूप उसने अपनी रक्षा व्यवस्था का निर्माण किया। 1950 तक भारत का रक्षा उद्योग भी आंशिक रूप से ही विकसित हुआ था। तब तक भारत में लगभग 19 आयुध कारखानों, कुछ रक्षाशोध संस्थानों और 1956 में रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन (डीआरडीओ) की प्रयोगशालाएँ ही स्थापित हुई थी। 1940 में हिंदुस्तान एयरक्राफ्ट फैक्ट्री और 1954 में भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड की स्थापना की। आजादी के कुछ सालों बाद तक भारत रक्षा उत्पादन में बेहतर प्रदर्शन कर रहा था। (राओ, 2021) 1950 के दशक में भारत अपनी रक्षा आवश्यकताओं के लिए 90 प्रतिशत तक ब्रिटेन पर निर्भर था। लेकिन 1953 तक हलके हथियारों के मामले में भारत ने 80 प्रतिशत तक आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली। 1960 के दशक के मध्य तक रक्षा उत्पादन में भारत का प्रदर्शन बेहतर था। 1950 के दशक में एच.ए.एल ने आत्मनिर्भरता को काफी महत्त्वाकांक्षी स्तर पर अपनाया और 1962 तक 162 विमान तैयार किए। समय के साथ ऑर्डर की कमी के कारण उत्पादन बंद कर दिया। (शर्मा, 1973) 1948 में प्रथम औद्योगिक नीति आयी, जिसके अनुसार उद्योगों के विकास में राज्य की अहम भूमिका थी। इसमें 1956 में कुछ बदलाव हुए। इस समय भारत साम्यवादी मॉडल का अनुसरण कर रहा था, जहाँ उद्योगों को राज्य से संरक्षण प्राप्त था। लेकिन अब भी महत्त्वपूर्ण उद्योग राज्य के ही नियंत्रण में थे, जिसमें रक्षा भी शामिल था। 1950–51 से 1960–61 तक भारत का रक्षा बजट कुल बजट का 33 प्रतिशत से घट कर 16 प्रतिशत कर दिया।(राओ, 2021) अब तक भारत

की रक्षा रणनीति का निर्धारण पाकिस्तान को ध्यान में रखकर किया जा रहा था। चीन की हरकतों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। परिणाम स्वरूप चीन ने इसका फायदा उठाया और भारत 1962 का युद्ध हार गया।

भारत ने 1962 में चीन से हार के बाद तुरंत एक पंचवर्षीय सुरक्षा योजना को लागू किया। सरकार ने रक्षा सम्बन्धी कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए जिसके अंतर्गत सैन्य शक्ति 8,25,000 निश्चित की गयी और दस पर्वतीय डिवीजन सहित 21 सुसज्जित डिवीजन बनाए गए। वायुसेना में 45 स्क्वाड्रन रखना निश्चित हुआ, तत्काल 9000 अफसरों की भर्ती के आलावा और कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाए गए। इन सब सुधारों का परिणाम यह हुआ की भारत ने 1965 के युद्ध में पाकिस्तान को हराया। (बेहर, 2021) 1962 से 1980 तक भारत ने ग्यारा आयुध कारखाने, दो सार्वजनिक उद्यम और डी.आर.डी.ओ की प्रयोगशालाओं का विस्तार किया। अब स्वदेशी उत्पादन के स्थान पर लाइसेंस उत्पादन पर अधिक जोर दिया जाने लगा। शीत युद्ध के अंत तक भारत सौ प्रतिशत ग्राउंड एयर डिफेन्स, 75 प्रतिशत फाइटर एयरक्राफ्ट डिफेन्स, 60 प्रतिशत ग्राउंड अटैक एयरक्राफ्ट, 100 प्रतिशत बख्तर बंद वाहनों, 80 प्रतिशत टैंकों, 95 प्रतिशत कन्वेंशनल सबमरीन्स, 70 प्रतिशत फ्रिगेटर के लिए सोवियत संघ पर निर्भर था। (बेहेरा, 2016) 1983 में सरकार ने डी.आर.डी.ओ को पाँच मिसाइल पृथ्वी, आकाश, नाग, त्रिशुल और अगनी को बनाने के लिए 388.83 करोड़ और लाइट कॉम्बैट एयरक्राफ्ट बनाने के लिए 560 करोड़ दिया। (बेहेरा, 2016)

रक्षा में उदारीकरण से आत्मनिर्भरता की ओर प्रारंभिक प्रयास (1991 से 2014 तक) : 1990 के दशक तक भारत के पास 39 आयुध कारखाने नौ सार्वजनिक उद्योग थे। सभी रक्षा उद्यम पर सरकार का नियंत्रण था। 1998 में सरकार ने रक्षा क्षेत्र में सुधार पर सुझाब देने के लिए छः टास्क फोर्स का गठन किया, जिसकी सिफारिश पर 2000 के दशक के शुरू में सरकार ने रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के लिए निजी क्षेत्र की सौ प्रतिशत तक की भागीदार का निर्णय लिया। 2001 में सरकार ने 26 प्रतिशत तक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति भी दे दी। 1990 में डॉ एपीजे अब्दुल कलाम जी की अध्यक्षता में एक सेल्फ–रिलायंस रिव्यू कमेटी बनाई गई, जिसने 10 वर्षों के लिए आत्मनिर्भरता की एक योजना तैयार की, जिसके लिए एक सेल्फ रिलायंस इंडेक्स भी बनाया गया, जिसके अनुसार भारत 1992–93 में मात्र 30 प्रतिशत सुरक्षा सामग्री का

उत्पादन कर रहा था जिसे 2005 तक बढ़ाकर 70 प्रतिशत करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। स्वदेशी मिसाइल प्रणाली विकसित करने के प्रयास करने के अलावा, भारत ने 1998 में रूस के साथ एक सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल प्रणाली, 'ब्रह्मोस' विकसित करने के लिए एक समझौता भी किया। यह दुनिया की सबसे तेज सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल है, जिसे पनडुब्बी, जहाज या विमान से लॉन्च किया जा सकता है। ब्रह्मोस को 2006 में भारतीय सेना में सफलतापूर्वक शामिल किया गया था। 1991 तक डीआरडीओ के अंतर्गत प्रयोगशालाओं की संख्या 49 हो गई। केलकर समिति की सिफारिश पर 2006 और 2013 में रक्षा अधिग्रहण प्रणाली में संशोधन किया ताकि रक्षा आधुनिकीकरण में निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ाया जा सके। सरकार के इन सभी प्रयासों के बाबजूद भी भारत रक्षा क्षेत्र अपने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर पाया और निजी क्षेत्र ने घरेलु रक्षा उद्योग में कोई विशेष रुचि नहीं ली।

भारतीय रक्षा में आधुनिकीकरण ओर आत्मनिर्भरता (2014 से अब तक)

2014 में भारत में सत्ता परिवर्तन हुआ। नई सरकार की प्राथमिकताऐं, रणनीति, महत्त्वाकांक्षायें और दृष्टिकोण पहले की सरकार से अलग थे। जिसने बदलते घरेलु और वैश्विक परिदृश्य के अनुरूप रक्षा के आधुनिकीकरण को प्राथमिकता दी और उसी के अनुरूप रणनीति का अनुसरण किया। 2014 में सरकार ने 'मेक इन इंडिया' कार्यक्रम के तहत कई नीतिगत पहल की हैं और रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने के लिए रक्षा उपकरणों के स्वदेशी डिजाइन, विकास और निर्माण को प्रोत्साहित करने के लिए सुधार किये।

भारत सरकार ने 2025 तक 1.75 लाख करोड़ रुपये के रक्षा उत्पादन का लक्ष्य रखा है, जिसमें 35,000 करोड़ रुपये का निर्यात शामिल है। 2047 तक नौसेना में पूरी तरह आत्मनिर्भरता का लक्ष्य है। भारत तकनीकी तौर पर विकसित देशों की सूची में 17वें स्थान पर हैं। वित्तीय वर्ष 2022–23 में भारत का निर्यात 16,000 करोड़ रुपये रहा, जो 2016–17 से 10 गुना से अधिक रहा। अक्टूबर, 2022 में स्टॉकहोम द्वारा जारी एक अध्ययन के अनुसार, हथियार उत्पादन क्षमताओं में भारत 12 इंडो पैसिफिक देशों में चौथे स्थान पर है। रक्षा के क्षेत्र में स्वदेशी युद्धपोत हो या विमान अपने सामर्थ्य से भारत न केवल स्वदेशी रक्षा उपकरणों का निर्माण कर रहा है, बल्कि उसका निर्यात कर दुनिया

के बड़े 25 निर्यातक (23वें स्थान पर) देशों में शामिल हो चुका है। (स्टाफ, 2023) सरकार की पहल के साथ, विदेशी स्रोतों से रक्षा खरीद पर खर्च जो कुल खर्च का 46 प्रतिशत हुआ करता था, पिछले चार वर्षों यानी 2018–19 से 2021–22 में घटकर 36 प्रतिशत हो गया है, अर्थात भारत का रक्षा निर्यात पर खर्च घटा है, क्योंकि अब भारत की बहुत सी जरूरतें घरेलू उद्योग पूरी कर रहे है।

सरकार ने ऐतिहासिक कदम उठाते हुए चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ की नियुक्ति की, जिसका उद्देश्य सेना के तीनों अंगों के बीच समन्वय स्थापित करना और संसाधनों का समुचित उपयोग करना था। आपात स्थिति में स्पेयर पार्ट्स और गोला–बारूद खरीदने की शक्ति भी सेना को दी गई है। अब कोई भी सेना मुख्यालय अपने हिसाब से 300 करोड़ रुपये तक की खरीदारी कर सकता है। रक्षा मंत्रालय को भी अब 2,000 करोड़ रुपये के रक्षा सौदों के लिए कैबिनेट की मंजूरी की जरूरत नहीं है।

रक्षा निर्यात को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने पिछले नौ वर्षों में कई नीतिगत पहल और सुधार पेश किए हैं। एंड–टू–एंड ऑनलाइन निर्यात प्राधिकरण की शुरुआत के साथ, निर्यात प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित और अधिक उद्योग अनुकूल बनाया गया है। इससे समय की बचत और प्रक्रिया का सरलीकरण हुआ है। सरकार ने हथियारों के विभिन्न भागों और घटकों, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और प्रमुख उपकरणों के निर्यात के लिए तीन ओपन जनरल एक्सपोर्ट लाइसेंस (ओजीईएल) भी जारी किए हैं। जो एक निर्यात लाइसेंस है, जिसके द्वारा एक निर्धारित अवधि में किसी विशेष उपकरण को एक निश्चित उपभोक्ता को बेचा जा सकता है।

रक्षा विनिर्माण को बढ़ाने के लिए, रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन (डीआरडीओ) अपनी नवीन विकसित प्रौद्योगिकी को बिना किसी शुल्क के निजी उद्योगों को हस्तांतरित कर रहा है। उद्योगों की डीआरडीओ के पेटेंट तक पहुँच सुनिश्चित की जा रही है। डीआरडीओ विशिष्ट प्रौद्योगिकी प्रदर्शनों के माध्यम से उद्योगों के साथ सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है, जो न केवल उद्योगों को उत्पाद सुधार के लिए उपयोगकर्ता की प्रतिक्रिया प्राप्त करने में सक्षम बनाता है, बल्कि यह अपने उत्पादों का स्व–परीक्षण और मूल्यांकन करने की भी अनुमति देता है। ये पहल डीआरडीओ और उद्योगों के बीच सहयोग को

बढ़ावा देती हैं, जिससे रक्षा प्रौद्योगिकी और उत्पाद विकास की प्रगति में भी सुविधा मिलती है। सरकार ने एमएसएमई, स्टार्ट–अप, व्यक्तिगत इनोवेटर्स, आर एंड डी संस्थानों और अकादमिक सहित उद्योगों को शामिल करके रक्षा में नवाचार और प्रौद्योगिकी विकास को बढ़ावा देने के लिए रक्षा उत्कृष्टता के लिए नवाचार की भी स्थापना की है। यह अनुसंधान एवं विकास को आगे बढ़ाने के लिए वित्त पोषण और अन्य सहायता प्रदान करता है। इसके अलावा, कार्यात्मक स्वायत्तता और दक्षता बढ़ाने और आयुध कारखानों में नई विकास क्षमता और नवाचार लाने के लिए, सरकार ने 41 आयुध कारखानों को सात रक्षा सार्वजनिक क्षेत्र इकाइयों (डीपीएसयू) में परिवर्तित कर दिया है। यह 100 प्रतिशत सरकारी स्वामित्त्व वाली कॉर्पोरेट इकाई है। इससे उनकी कार्यप्रणाली और भी सुव्यवस्थित हो गई है। इस अवधि के दौरान सरकार द्वारा की गई पहलों में रक्षा अधिग्रहण प्रक्रिया 2020 के तहत घरेलू स्रोतों से पूंजीगत वस्तुओं की खरीद को प्राथमिकता देना, लाइसेंसिंग प्रक्रिया का सरलीकरण और 74 प्रतिशत एफडीआई शामिल है। सरकार ने रक्षा में आत्मनिर्भरता हासिल करने के लिए और घरेलु स्तर पर रक्षा उत्पादन बढ़ने के लिए उत्तर प्रदेश व तमिलनाडु में रक्षा गलियारों को स्थापत किया है।

भारतीय रक्षा का आधुनिकीकरण और रणनीतिक स्वायत्ता का बदलता स्वरूप

किसी भी संप्रभु राष्ट्र की रणनीतिक व सामरिक स्वायत्तता सुनिश्चित करने, वैश्विक नेतृत्त्व और महाशक्ति बनने में रक्षा एक मूलभूत भूमिका निभाती है। भारत की भू–राजनीतिक स्थिति, परिस्थिति के अनुरूप भारत के लिए एक मजबूत, आधुनिक, सशक्त रक्षा व्यवस्था का होना उसकी मूलभूत आवश्यकता है। पिछले कुछ वर्षों में भारत सरकार ने भारतीय रक्षा के सशक्तिकरण, आधुनिकीकरण और आत्मनिर्भरता के लिए कुछ विशेष प्रयास किए, जिसके परिणाम स्वरूप भारत की सामरिक स्वायत्तता पर इसका विशेष प्रभाव देखने को मिला। 2016 में जब पाकिस्तान के आतंकियों ने जम्मू–कश्मीर के उरी सेक्टर में भारतीय सेना के शिविर पर हमला किया था। तो भारत ने पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में आतंकी लॉन्च पैड्स पर सर्जिकल स्ट्राइक की। 2019 में पुलवामा के बाद प्रतिक्रिया स्वरूप भारत ने बालाकोट में जैश–ए–मोहम्मद के सबसे बड़े प्रशिक्षण शिविर पर हमला किया। दोनों ही घटनाओं में भारतीय सेना ने पूर्ण आत्मविश्वास के साथ दुश्मन से संघर्ष किया। भारत ने आतंकवाद

को एक वैश्विक विषय बनाया और पाकिस्तान की आतंकवादी गतिविधियों के कारण उसे वैश्विक स्तर पर अलग–थलग कर दिया।

पिछले कुछ सालों में सरकार ने गतिशील, परिवर्तनकारी विदेश नीति का अनुसरण किया, जिसका आधार था, सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास और सबका प्रयास। भारत ने अपने पड़ोसी देशों से सम्बन्ध सुधारने और खुद के लिए नए विकल्प विकसित करने के लिए पड़ोसी पहले की नीति अपनाई, जिसमें 'एक्ट ईस्ट', 'थिंक वेस्ट' और 'कनेक्ट सेंट्रल एशिया' का अनुसरण कर विस्तृत पड़ोसी देशों से अच्छे सम्बन्ध विकसित किए और व्यापार के लिए नए सहयोगियों की भी तलाश की। इसका भारत को केवल आर्थिक लाभ ही नही मिला, बल्कि भारत ने इन देशों से संबंध सुधार कर न सिर्फ चीन को चुनौती देकर खुद की स्थिति को मजबूत किया है, बल्कि वैश्विक राजनीतिक में भी अपनी स्थिति को मजबूत किया है। इस सामरिक रणनीति का लाभ भारत को कोविड के बाद और यूक्रेन–रूस युद्ध के दौरान देखने को मिला। कोविड के दौरान भारत ने अपनी जरूरतें पूरी करने के साथ दुनिया के देशों को दवा और टीके उपलब्ध कराए। जहाँ पश्चिमी देश आपदा का अवसर उठाकर लाभ कमाना चाहते थे। वहीं भारत ने खुले दिल से विश्व की सहयता की। यूक्रेन–रूस के युद्ध के दौरान जहाँ विश्व पुनः दो भागों में बट गया, रूस पर बड़े स्तर पर आर्थिक प्रतिबंध लगे। ऐसे में भारत पर रूस के साथ अपने संबंध पूरी तरह खत्म करने का दबाव आया जो भारत के लिए असंभव था। क्योंकि भारत आज भी अपनी कुल सुरक्षा जरूरतों का लगभग 50 प्रतिशत रूस से पूरा करता है। ऐसे में भारत ने उन सभी दबावों के बाबजूद रूस से अपने सम्बन्ध जारी रखे। रूस से कच्चा तेल खरीदा और उसे दुनिया भर में बेचकर लाभ भी कमाया। भारत ने किसी महाशक्ति का पिछलग्गू बनने के स्थान पर अपने राष्ट्र हितों को प्राथमिकता दी, जिसे आगे चलकर पश्चिमी देशों व अमेरिका ने भी स्वीकार। जहाँ रूस–यूक्रेन युद्ध में विश्व बटा हुआ था। वहीं भारत ने रूस के साथ–साथ पश्चिमी देशों व अमेरिका से भी अच्छे संबंध बनाए रखे।

भारत सागर योजना के द्वारा सहयोगियों के साथ मिलकर सामरिक सुरक्षा के लिए काम कर रहा है। भारत वैश्विक शांति, वार्ता द्वारा संघर्षों का समाधान, बहु–ध्रुवीय वैश्विक व्यवस्था और नियम आधारित वैश्विक व्यवस्था

का समर्थक हैं। ताकि कोई एक देश वैश्विक व्यवस्था पर अपना प्रभुत्त्व स्थापित न कर सके।

निष्कर्ष

सामरिक स्वायत्तता और रक्षा का गहरा संबंध है। किसी भी देश की सामरिक स्वायत्तता को सुनिश्चित करने के लिए उसे रक्षा की दृष्टि से सशक्त होना किसी भी राष्ट्र की पहली शर्त है। 21वीं सदी में युद्ध का स्वरूप पूरी तरह बदल चुका है। आज कोई राष्ट्र अपनी सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए पारंपरिक तरीकों या हथियारों पर निर्भर नहीं रह सकता। अतः रक्षा व्यवस्था में आधुनिकीकरण से ही सुरक्षा सुनिश्चित होगी।

सन्दर्भ

- *L.G. (2022, May 05). 8 years back, Modi promised to transform India's military. Today, the plan is in disarray. Retrieved from The Print: https://theprint.in/opinion/*
- *AIR. (2023, June 05). 9 years of Modi govt: India's Self Reliance in Defence Sector. Retrieved from All India Radio: https://newsonair.gov.in/News*
- *ANI. (2023, April 25). Indian Navy to buy missiles worth $200 mn from Russia, America: Report. Retrieved from Hindustan Times: https://www.hindustantimes.com/india-news/*
- *Badi, R. (2023, March 13). India Tops Global List in Arms Imports, Belies Govt's Tall Claims of 'Atmanirbharta'. Retrieved from The Wire: https://thewire.in/security/*
- *Mazumdar-, J. (2019, jan 28). https://swarajyamag.com/defence/*
- *Negi, M. (2023, May 30). PM Modi's strength in The Defence Sector! Power Of 9. Retrieved from India Today: https://www.indiatoday.in/ india/*
- *PHILIP, S. A. (2022, June 03). Defence preparedness improved in eight years of Modi, but military must begin to punch hard. Retrieved from The Print: https://theprint.in/opinion/*

- *Sharma, G. D. (2012, April 23). Parliamentary standing committee on defence admits shortage of ammunition. Retrieved from India Today: https://www.indiatoday.in/india/north/story/parliamentary*
- *Sinha, A. (2023, May 24). 9 Years Of PM Modi: Unlocking India's Potential As A Defence Exporter. Retrieved from Zee News: https://zeenews.india.com/india/*
- *कर्नल आर हरिहरन. (मार्च 2023). 21वीं सदी के युद्ध की तैयारी . फोकस, वर्ल्ड, पृ. 05.*
- *जनरल के.वी. कृष्ण राओ. (19 अगस्त 2021). ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ़ द प्री–पार्टीशन इंडियन आर्मी. इंडियन डिफेन्स रिव्यू : http://www.indiandefencereview .com/spotlights/*
- *द वायर स्टाफ. (10 अप्रैल 2023). इंडिया इज नो लॉन्गर इन द लिस्ट ऑफ़ टॉप 25 आर्म्स एक्सपोर्टर्स: सीपरी . द वायर: https://thewire.in/government /india –*
- *पथिकृत पायने. (17 अगस्त 2022). अंडर पीएम मोदी अनप्रेजेंटेड मोडर्निज़ेशन ऑफ़ आर्म्ड फोर्सेज. ऑर्गनिज़र : https://organiser.org/*
- *राहुल सिंह. (24 अप्रैल 2023). इंडिया फोर्थ बिग्गिस्ट मिलिट्री स्पेंडर इन वर्ल्ड: सीपरी . हिंदुस्तान टाइम्स : https://www.hindustantimes.com/india – news/india –*
- *लक्समन कुमार बेहर. (2021). इंडिया'स डिफेन्स इकॉनमी . न्यू यॉर्क : रूटलेज.*
- *लक्समन कुमार बेहेरा. (2016). इंडियन डिफेन्स इंडस्ट्री: एन एजेंडा फॉर मेकिंग इन इंडिया . नई दिल्ली : इंस्टिट्यूट फॉर डिफेन्स स्टडीज एंड एनालाइसिस.*
- *लेफ्टि कर्नल गौतम शर्मा. (1973). भारतीय सेना और युद्धकला : प्राचीन कल से आज तक. दिल्ली: राजपाल एंड संज.*
- *हरी शेषासायी. (24 अगस्त 2022). भारत की सामरिक स्वायत्तता बनाम लैटिन अमेरिका की कट्टर गुटनिरपेक्षता. आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन : https://www.orfonline.org/hindi/research/*

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 171-176

पूर्वी उत्तर प्रदेश में ब्रिटिश भू–धृति पद्धति

*कुमार गौरव सिंह**

सारांश

भारत में किसान आन्दोलन की जड़ अंग्रेजों द्वारा किसानों के शोषण एवं अत्याचार तक सीमित नहीं था, बल्कि औपनिवेशिक शासन ने हिन्दुस्तान के भू–धृति पद्धति और राजस्व नीति में आमूलचूल परिवर्तन कर कृषि–व्यवस्था को ही तहस–नहस कर डाला और यही किसानों के उग्रता का मुख्य कारण था। ऐसे परिवर्तनों की जड़ इतनी गहरी थी कि, किसानों की जो बदतर अवस्था उस समय सुनिश्चित कर दी गई, वह आज तक बनी हुई है। अतः प्रस्तुत शोध पत्र में ब्रिटिश भू–धृति पद्धति का पूर्वी उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में मूल्यांकन किया गया है।

शब्द कुंजी : *किसान आन्दोलन, भू–पद्धति, ब्रिटिश, गवर्नर, नवाब, मुगल।*

भारत में अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भू–धृति पद्धति मुगल शासक अकबर द्वारा सुनिश्चित थी, जिसकी अंग्रेज विद्वानों ने बहुत प्रशंसा की तथापि इन्होंने यह भी सन्देह व्यक्त किया कि, जिलों और परगनों में माल विभाग के कर्मचारी शाही नियमों और आज्ञा–आदेशों का ईमानदारी से पालन करते होंगे। *विसेण्ट स्मिथ* के विचार में, ''माल सम्बन्धी जो सिद्धान्त रूप में था वही व्यवहार में भी था, इस सम्बन्ध में शंका हुए बिना नहीं रहा जाता, क्योंकि वर्तमान ब्रिटिश सरकार द्वारा सावधानी और निगरानी बरतने के बावजूद सामंजस्य प्राप्त करने में प्रायः असमर्थ रही है, जबकि अकबर के समय में इस तरह की निगरानी व्यवस्था नहीं थी।''[1] अकबर काल में माल विभाग में भ्रष्टाचार फैला हुआ था[2], किन्तु सच्चाई यह है कि, 19वीं अथवा 20वीं शताब्दी की अपेक्षा अकबर के समय सार्वजनिक नैतिकता अैर नियम पालन का मापदण्ड निःसन्देह ऊँचा था।[3]यही कारण था कि, तत्कालीन यूरोपीय पर्यवेक्षक 16वीं–17वीं शताब्दी में हमारे पूर्वजों की ईमानदारी और युगों से पूजित व्यवहारिक नियम कायदों श्रद्धा एवं विश्वास के साथ पालन करने के स्वभाव को देखकर दंग रह गये थे।[4] सच्चाई तो यह है कि भारत की सदियों से प्रचलित नियम पालन की व्यवस्था को गलत साबित करना और तरह तरह के भ्रष्ट आचरण का स्रोत ब्रिटिश काल की व्यवस्था में पनप रही थी। यह भ्रष्टाचार करों की दरों निर्धारण में अधिक स्पष्ट थी।[5]यदि मध्यकाल में कर निर्धारण का अवलोकन किया जाय तो विदित होता है कि, फीरोज तुगलक को छोड़कर दिल्ली के प्रायः सभी

* *शोध छात्र, इतिहास, डी०ए०वी० पी०जी० कालेज, आजमगढ़*

सुल्तान कर की अधिक दरें रखते रहे। शेरशाह लगान बन्दोबस्त के लिए प्रसिद्ध हैं, किन्तु वे भी पैदावार का एक–तिहाई कर सुनिश्चित किये थे। इसके अतिरिक्त जरीबाना, महसीलाना तथा बीमा आदि अतिरिक्त वसूली किया जाता था, जिसे अकबर कृषकों से नहीं लेते थे।[6] यूरोपीय इतिहासकार का मानना है कि, ब्रिटिशकाल की अपेक्षा अकबर के शासनकाल में भूमि कर की दर अधिक थी, किन्तु उन्होंने जमींदार के अस्तित्त्व को स्वीकार नहीं किया था और जमीन की पैदावार किसान और सरकार दोनों में ही बँटती थी।[7]

किसानों की मूल समस्या का उदय ब्रिटिश शासनकाल में स्वीकार की गयी जमींदारी प्रथा से जन्म ली। ये जमींदार पैदावार का आधा भाग काश्तकारों से वसूल कर लेते थे, जबकि 16वीं शताब्दी के काश्तकारों को ऊपज का केवल एक–तिहाई ही देना पड़ता था। जिससे पुष्टि होता है कि मध्ययुगीन किसान ब्रिटिश शासनकाल के किसान से कहीं अधिक खुशहाल था। 15 अगस्त, 1947 ई0 के पश्चात् के बाद कृषि–विधान में व्यापक परिवर्तन हुए हैं और आशा किया गया कि, इससे किसानों की पूर्व–दशाओं में सकारात्मक परिवर्तन होगा और पुनः किसानों की प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी।[8]

ईस्ट इण्डिया कम्पनी की भू–धृति प्रणाली एवं राजस्व नीति

औपनिवेशिक शासन की स्थापना के साथ ही तत्कालीन भूमि प्रणालियों को अंग्रेज अपने स्वार्थ में समाप्त करना आरम्भ कर दिया। चूंकि अंग्रेजी सत्ता के लिए भू–राजस्व (लगान) आमदनी का मुख्य स्त्रोत था इसलिए कम्पनी इसका पूरा–पूरा फायदा उठाने का इरादा सुनिश्चित किया।[9]यद्यपि *प्लासी की लड़ाई* के बाद कुछ समय तक कम्पनी इस दिशा में बड़ी सतर्कता से कदम उठाती रही; तथापिसन् 1762 ई0 में उसने बर्दवान और मिदनापुर में एक नया प्रयोग करते हुए इन इलाकों से अधिकतम लगान प्राप्ति हेतु सार्वजनिक नीलामी से जमींने बेचना प्रारम्भ कर दिया। कम्पनी के एक उच्च कर्मचारी *हैरी बैरेल्स्ट* के शब्दों में, 'जमीनों को आम नीलामी के जरिए तीन साल की अवधि के लिए पट्टे पर दिया गया। जिन लोगों के पास न कोई धन और नहीं चरित्र वे निलामी में बोलियाँ लगाते थे, तो दूसरी ओर जमीन का भूतपूर्व किसान अपनी जमीन नहीं छोड़ना चाहता था और उन बोलियों से बढ़ कर बोली लगाता था, जो सामान्यतया जमीन की वास्तविक मूल्य से ज्यादा उसकी बोली होती थी।[10]यह तरीका सरकार के लिए लाभकारी था, तो किसान के लिए हानिकारक था।[11]स्पष्ट है कि, अंग्रेजी नीति से बदतर राजस्व प्रणाली का मार्ग शायद ही कोई और हो सकती थी।[12]

इसी तारतम्यता में कम्पनी अपनी स्थिति को और मजबूत करते हुए सन् 1765 ई0 में *क्लाइव* ने मुगल सम्राट से बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी प्राप्त कर ली।इसके तहत् क्लाइव को इन प्रान्तों की जमीनों का निरीक्षण कराना और लगान वसूली करना था, किन्तु कम्पनी इन क्षेत्रों की जमीन को अपनी जागीर मानती थी और अपने अवैध आय का स्रोत समझती थी, जिससे प्राप्त आय को इंग्लैण्ड भेजना ध्येय था। स्पष्ट है कि, ऐसी प्रणाली का दुःखद परिणाम होना सुनिश्चित था। क्लाइव स्वयं वार्षिक राजस्व का लेखा–जोखा करके इंग्लैण्ड को उसने आश्वासन दिया कि, 'इसके बाद भी कम्पनी को एक करोड़ 22 लाख सिक्के वाले रूपये, या 16 लाख 50 हजार 9 सौ पौण्ड स्टलिंग का शुद्ध मुनाफा बचा रहेगा।'[13] प्रत्येक वर्ष इतनी बड़ी रकम बंगाल से इंग्लैण्ड को भेजने के कारण वहाँ किसानों की दुर्दशा होने लगी।

यह भी ध्यातव्य है कि, यद्यपि क्लाइव कम्पनी के लिए दीवानी प्रथा आरम्भ किया, राजस्व की वसूली वह नवाब के कठपुतली नायबों के द्वारा करता रहा। आरम्भ में ये ही नवाब किसानों का शोषण करते थे, क्योंकि सुनिश्चित दर से अधिक वसूली कर अपने लिए अधिकाधिक आय को बचा लेते थे और अपने नए अंग्रेजों को उनके मर्जी के अनुसार राशि देकर खुश भी कर देते थे।[14]

सन् 1767 ई0 में क्लाइव के जाने के बाद *वैरल्स्ट* गवर्नर बनकर आया और वह भी लगान वसूल करने वाले दमनकारियों द्वारा बंगाल की लूटखसोट का तमाशा एक असहाय दर्शक की भाँति देखता रहा। बिडम्बना तो यह थी कि, लगान वसूली के समय इस बात का कोई ध्यान नहीं रखा जाता था कि फसल अच्छी हुई है या नहीं।[15] सन् 1770 ई0 में बंगाल में भीषण अकाल पड़ा, लेकिन सरकार ने इस विपत्ति की ओर ध्यान न देकर निर्दयतापूर्वक लगान वसूल किया। इस अकाल में अनेक किसान लोग दम तोड़ दिये थे।[16] फिर भी *काटियर* जो वैरल्स्ट के बाद गर्वनर जनरल बनकर आया था, निर्दयता के साथ लगान वसूल करता रहा। इसके बाद सन् 1772 ई0 में *वारेन हेस्टिंग* ने कोर्ट आफ डायरेक्टर्स को सूचना दी कि, 'प्रान्त की एक तिहाई आबादी खत्म हो जाने और पैदावार में कमी आने के बावजूद सन् 1771 ई0 में कुल राजस्व सन् 1768 ई0 की राशि से अधिक है। ऐसा आर्थिक चमत्कार तो गुलाम जनता के दुर्दिनों में मात्र लूट–खसोट से ही सम्भव हो सकता था।[17]

कुल मिलाकर क्लाइव और उसके बाद आने वाले गर्वनर कोई ठोस भूमि–प्रणाली नहीं बनाये। *वारेन हस्टिंग्स* से, जो 1772 ई0 में बंगाल के गवर्नर बने और 1774 ई0 में *रेग्यूलेटिंग एक्ट, 1773* के अधीन गवर्नर जनरल बने, से आशा की गई थी कि वे कोई सुधार व्यवस्था को लागू करेंगे, लेकिन वे

राजनीतिक अस्थिरता के चलते तथा इस ओर उसकी कोई रुचि नहीं होने से कोई सुधार सम्भव नहीं हो सका।परिणामस्वरूप और अधिक अव्यवस्था का प्रसार हुआ, जिससे लोग और ज्यादा परेशानी में पडे।[18]

हेस्टिंग्स ने नवाब के अधिकारियों के माध्यम से वसूली की जाने वाली राजस्व प्रणाली को समाप्त करते हुएइसकी जिम्मेवारी सीधे अपने ऊपर ले लिया। हेस्टिंग्स ने एक *राजस्व बोर्ड* बनाया और इसके लिए एक *अंग्रेज सुपरवाइजर* नियुक्त किया। साथ ही तीन वर्ष के पट्टे की अवधि *पाँच वर्ष* कर दिया, जो आगे चलकर यह प्रणाली सबसे खराब सिद्ध हुई।[19] क्योंकि पांच साल के पट्टे हेतु और अधिक कुख्यात रूप से नीलामी होने लगी एवं अधिकाधिक बढ़चढ़ कर बोली लगी, जिसके चुकता के लिए किसानों का दमन और अधिक सुनिश्चित हो गया। इसके बाद सन् 1777 ई0 में एक और नया प्रयोग किया गया तथा *वार्षिक पट्टे* पर जमीन देने की व्यवस्था की गयी। इसके तहत् अब जमीन सबसे अधिक बोली वालोंके बजाय उन लोगों को दी जाने लगी जो अंग्रेजों को अधिक राजस्व दे सकते थे।इससे किसानों के शोषणों में और अधिक वृद्धि हुआ। फिर भी यह प्रणाली सन् 1778–1780 तक लागू रहा।[20] इससे किसानों की स्थिति दिनों–दिन खराब होती रही थी, तो वहीं कम्पनी के भू राजस्व में 1781 ई0 में 26 लाख रूपए की वृद्धि हुई। इस सम्बन्ध में वर्ष 1784 ई0 में पारित *पिट्स इण्डिया ऐक्ट* के प्रावधान भी लागू नहीं हो सके, जिसमें सिफारिश की गई थी कि जमींदारों से ली जाने वाली राशि के लिए कुछ स्थायी सिद्धान्त निश्चित कर दिए जाएँ, क्योंकि हेस्टिंग्स सन् 1776 ई0 के बाद मराठों से होने वाले युद्ध में व्यस्त हो गया।[21]

सन् 1786 ई0 में *लार्ड कार्नवालिस* को ईस्ट इण्डिया कम्पनी का गवर्नर जनरल नियुक्त किया गया। इसके समय फसल उत्पादन कम होने से राजस्व भी कम आ रहा था, जिसमें सुधार के लिए कार्नवालिस को पूर्ण अधिकार प्रदान किये गये।इसके लिए कार्नवालिस ने सन् 1789 ई0 में जमीन के पट्टे की अवधि दस वर्षों के लिए सुनिश्चित किया। इस सन्दर्भ में दो प्रश्नों पर सरकारी अधिकारियों में काफी मतभेद था– *पहला,* जमींदारों की परिस्थिति से सम्बन्धित था। क्या जमींदार भू–स्वामी अथवा लगान वसूल करने वाला अधिकारी था? जमींदार राज्य द्वारा नियुक्त लगान वसूल करने वाला एक अधिकारी मात्र था, तो कार्नवालिस के मुख्य सलाहकार *सर जान शोर* उन्हें भू–स्वामी मानता था। *दूसरा,* जमींदारों से लगान की राशि निर्धारित करना। अंग्रेज प्रशासकों के मत में, जमींदारों द्वारा वसूली गयी कुल धनराशि का 9/10 भाग सरकार को मिलना चाहिए। इसके लिए सर जॉन शोर भूमि तथा

उसकी उपज को सुनिश्चित करने सम्बन्धी स्थायी बन्दोबस्त के पक्ष में थे। अतः इससे सम्बन्धित प्रावधान बनाये गये। अतः 1793 में स्थायी बन्दोबस्त को लागू किया गया।[22] इस व्यवस्था से कार्नवालिस को राजस्व सम्बन्धी प्रशासन में सरलता हो सकती थी और बंगाल से व्यापार के माध्यम से ही धन निष्कासन होता था। इसलिए इग्लैण्ड के शासकों के लिए स्थायी व्यवस्था को स्वीकृति देने का मुख्य आकर्षण निर्यात वृद्धि की उस सम्भावना में था, जो इस व्यवस्था से उत्पन्न हो सकती थी।[23] किन्तु यही व्यवस्था अंग्रेजों के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ, क्योंकि 19वीं सदी के प्रथम चतुर्थांश के पश्चात् कृषि उत्पादन के मूल्यों में वृद्धि और कृषकों पर अत्यधिक लगान बढ़ाने से नया जमींदार वर्ग सम्पन्न होता गया और यह व्यवस्था असफल रही।

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि, 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में भारत में अंग्रेजी आर्थिक नीति इग्लैण्ड के आर्थिक हितों से प्रभावित थी। इग्लैण्ड में इस काल में मुक्त व्यापार तथा औद्योगिक प्रगति का प्रभाव था, जिसके चलते अंग्रेजी सरकार भारत में अधिकाधिक मात्रा में उत्पादित वस्तुओं का आयात और कच्चे माल का निर्यात करना चाहती थी।[24] किन्तु, 19वीं सदी में कम्पनी अपने व्यापार नीति में परिवर्तन करते हुए सन् 1813 ई0 के *चार्टर एक्ट* से भारत का व्यापार (चाय व्यापार को छोड़ कर) मुक्त कर दिया और इग्लैण्ड के सामान्य व्यापारियों को भारत से व्यापार करने की पूरी छूट प्रदान कर दी गई।[25] इससे एक ओर भारत में इंग्लैण्ड से उत्पादित वस्तुओं का आयात बढ़ा, तो दूसरी ओर भारत में निर्मित वस्त्रों तथा कुटीर उद्योगों की वस्तुओं के निर्यात में भारी कमी आ गई और इंग्लैण्ड में कच्चे माल का निर्यात बढ़ा। उदाहरणार्थ, सन् 1794 ई0 में भारत में आयात किए गए उत्पादित वस्त्रों का मूल्य केवल 156 पौण्ड था, जो सन् 1813 ई0 में एक लाख से अधिक हो गया। इसी तरह सन् 1814 ई0 में इग्लैण्ड से केवल 8 लाख गज के लगभग कपड़ा आयात किया जाता था, जो बढ़कर सन् 1835 ई0 में 5 करोड़ 17 लाख गज से अधिक हो गया। इसके विपरीत सन् 1814 ई0 में 12 लाख 66 हजार गज कपड़ा भारत से निर्यात किया जाता था, जो सन् 1835 में घटकर तीन लाख गज हो गया।

सन्दर्भ

1. *Smith, V.A. : "Akbar, The Great Mogul", (1919).*
2. *Abul, Fazl : "Akbarnama", 3 Vols. (Translated into English-H.Beveridge).*
3. *Badayuni, Abdul Qadir : "Muntakhab-ul-Tawarikh", Vols. II and III (Translated into English - Vol, II by W.H. Lowe and Vol. III by Woolseley Haig).*

4. Irvine, W. : "Army of the Indian Moguls", (1903).
5. Moreland ,W.H. : "Agraria System of Muslim India" (1929).
6. Noer, Gount Von : "Kaisar Akbar", Vols. I and II (1880 and 1885).
7. Saran, P. : "The previncian Government of the Moguls", (1941).
8. Tripathi, R.P. : "Some Aspects of Muslim Administration}, (1936).
9. बेवरिज, एच0 : ''कम्प्रीहेंसिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया'', खण्ड–3, 1967
10. दत्ता, के0के0 : ''दि इंडियन टैरिफ प्राबलम्स'', 1933, पृ0 257
11. दत्ता, के0के0 : ''सर्वे ऑफ इण्डियाज स्कूल लाइफ एण्ड इकोनामिक कंडीशन इन एटींथ सेंचुरी'', 1961, पृ0 231
12. डे, एच0एल0 : ''दि इंडियन टैरिफ प्रॉबलम्स'', 1933, पृ0 75
13. गाडगिल, डी0आर0 : ''ओरिजिन ऑफ दि माडर्न इंडियन बिजनेस क्लास'', 1959, पृ0 57
14. हंटर, डब्ल्यू0डब्ल्यू0 : ''ए स्टेटिस्टिकल एकाउंट ऑफ बेंगाल'', खण्ड–5, 1875–76, पृ0 57
15. काये, जे0डब्ल्यू0 : ''एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ ईस्ट इण्डिया कम्पनी'', 1883, पृ0 233
16. मोंकटन जोन्स, एम0ई0 : ''वारेन हेस्टिंग्स इन बेंगाल'', 1918, पृ0 23
17. मुकर्जी, एन0 : ''दि रय्यतवारी सिस्टम इन मद्रास'', 1962, पृ0 357
18. नारोजी, दादाभाई : ''पावर्टी एण्ड अनब्रिटिश रूल इन इण्डिया'', 1962
19. सिन्हा, एन0 के0 : ''इकोनामिक एनल्स ऑफ बेंगाल'', खण्ड–1, 1956, पृ0 153.
20. विल्सन, सी0 आर0 : ''अर्ली एनल्स ऑफ दि इंगलिश इन बेंगाल'', खण्ड–3, 1895–1917, पृ0 247.
21. कीथ, ए0वी0 : ''कांस्टीट्यूशनल हिस्ट्री आफ इण्डिया'' पृ0 70.
22. सिन्हा, एन0के0 : ''इकोनोमिक हिस्ट्री आफ बेंगाल'', जि0 1, पृ0 85 बारवेल (कलकत्ता कौंसिल का एक सदस्य) के भारतीय व्यापारी का नाम कमालुद्दीन था।
23. इलबर्ट : ''गवर्नमेंट आफ इण्डिया'', पृ0 70
24. मजूमदार : ''हिस्ट्री आफ फ्रीडम मूवमेण्ट'', जि0 1, पृ0 295
25. ताराचन्द : ''हिस्ट्री आफ फ्रीडम मूवमेण्ट'', जि0 1, पृ0 274–275

मङ्गलम् - वर्ष 14(02) भाग-XXVII अगस्त 2023
ISSN-0976-8149 पृ. 177-186

एक राष्ट्र एक चुनाव लागू करने के लिए संवैधानिक पहलू और चुनौतियाँ

*काजोल तिवारी**

सारांश

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और किसी भी बड़े लोकतांत्रिक देश में चुनाव एक महत्वपूर्ण घटक होता है। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले देशों में सरकारी तंत्र द्वारा चुनाव कराना बहुत महंगा पड़ता है अरबों रुपए एक चुनाव कराने में भी खर्च हो जाते हैं और स्थिति तब और बेकार हो जाती है जब एक ही साल के अंदर कई बार चुनाव करवाने पड़ जाते हैं इसलिए भारत में काफी लंबे समय से एक साथ लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव करवाने की व्यवस्था पर बहस होती रही है। लोकप्रिय अर्थों में एक साथ चुनाव में संवैधानिक व्यवस्थाओं के सभी तीनों स्तरो केंद्र के स्तर पर लोक सभा, राज्य के स्तर पर राज्य विधानसभाओं और एकदम जमीनी स्तर पर स्थानीय नेताओं के लिए एक समकालीक तरीके से चुनाव होते हैं। इसलिए जब भी एक साथ चुनाव की व्यवस्था होगी तो एक मतदाता भी एक ही दिन सरकार के सभी स्तरों के सदस्यों को चुनने के लिए मतदान करेगा और यही एक साथ चुनाव कराने का प्रभावी अर्थ होगा। वर्तमान प्रस्तुत किए गए पेपर में भारत में एक राष्ट्र एक चुनाव को लागू करने के संवैधानिक पहलुओं और चुनौतियों के बारे में चर्चा की गई है।

मुख्य शब्द : *लोकतंत्र, एक राष्ट्र एक चुनाव, संविधान, लोकसभा, राज्य विधानसभा।*

प्रस्तावना

"The Ballot is stronger than the Bullet" – Abraham Lincoln.

किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र को चलाने के लिए चुनाव सबसे मूलभूत प्रक्रिया होती है चुनाव कराने का मतलब अप्रत्यक्ष रूप से लोगों की सेवा करना होता है। भारत में लगभग हर साल किसी न किसी राज्य में चुनाव होता है और कभी कभी एक ही साल में लोकसभा और कुछ राज्य विधानसभाओं के चुनाव में एक साथ पड़ जाते हैं। नीति आयोग के अनुसार पिछले 30 सालों मे कोई भी एक साल ऐसा नहीं रहा है, जब किसी राज्य विधानसभा के या

* *शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, गनपत सहाय पी० जी० कालेज, सुल्तानपुर (सम्बद्ध : डॉ राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश)*

लोकसभा के चुनाव ना रहे हो या फिर दोनों के एक साथ चुनाव न पड़े हो। चुनाव प्रक्रिया एक आम मतदाता के आसान और सरली कृत प्रक्रिया प्रतीत होती है जटिलता इसके प्रशासन और संसाधनों की व्यवस्था में भी नहीं अपितु असली समस्या यह है कि इसके पीछे व्यापक चुनावी राजनीति और वोट बैंक की राजनीति निहित होती है। भारत में हर साल लगभग 4 से 5 राज्य विधानसभाओं के चुनाव पड़ जाते हैं और लोकसभा, राज्य विधानसभाओं और पंचायतों के चुनाव प्रत्येक 5 वर्ष पर कराए जाते हैं। इस तरह से भारत में हमेशा चुनावी मोड़ की स्थिति बनी रहती है।

एक राष्ट्र एक चुनाव का अर्थ

वर्तमान में समाचारों के बहस के केंद्र में रही एक राष्ट्र एक चुनाव की अवधारणा कोई नई नहीं है। अनेक प्रमुख राजनीतिक नेताओं जैसे आदरणीय प्रवण मुखर्जी भारत के पूर्व राष्ट्रपति आदरणीय रामनाथ कोविंद भारत के पूर्व राष्ट्रपति और भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री माननीय नरेंद्र मोदी जी ने भी इस विचार का समर्थन किया है। इसके अतिरिक्त विगत वर्षों में कई विशेषज्ञ समितियों ने इस मुद्दे पर विस्तृत रूप से अपने विचार दिए हैं –

1 . लॉ कमीशन ऑफ इण्डिया – 170 वीं रिपोर्ट ऑन रिफार्म ऑफ इलेक्ट्रोरल लॉज (1999)

2. पार्लियामेंट्री स्टेण्डिंग कमेटी ऑन या एण्ड जस्टिस 79 रिपोर्ट (दिसम्बर 2015)

3. नीति आयोग – एनालिसिस ऑफ सिमलटेनियस इलेक्शनस बाइ बिबेक देबरॉय और किशोर देसाई – नवम्बर 2017

4. लॉ कमीशन ऑफ इण्डिया ड्रॉफ्ट रिपोर्ट (अगस्त 2018)

साधारण रूप में इसका अर्थ यह समझा जाता है कि सरकार के तीनों स्तरों लोकसभा, राज्य विधानसभाओं (विधानसभा) और पंचायतोंध्शहरी नगर निकाय के चुनाव एक ही समय पर क्रियान्वित किए जाते हैं। इसका मतलब एक मतदाता एक ही दिन सरकार की सभी तीनों स्तरों के सदस्यों को चुनने के लिए प्रत्येक 5 वर्ष पर अपना मतदान करता है।

यद्यपि वर्तमान व्यवस्था में मौजूदा प्रथा के अनुसार देश भर में चरण वार तरीके से सभी तीनों स्तरों पर चुनाव कराए जाते हैं और जिस निर्वाचित क्षेत्र में जिस दिन मतदान की तिथि निर्धारित होती है उसी दिन वह अपना मतदान करता है।

चुनाव का संक्षिप्त इतिहास

किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र को चलाने के लिए एक प्रतिनिधि संस्था की आवश्यकता होती है जो कि वहां के लोगों की इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करती है। इसलिए भारत में भी एक उत्तरदाई सरकार के गठन के लिए वर्ष 1952 में प्रथम आम चुनाव आयोजित किए गए इस समय लोकसभा और विभिन्न राज्यों की सभाओं के चुनाव एक साथ ही कराया गये। इसलिए भारत में एक साथ चुनाव की अवधारणा कोई नया विचार नहीं है। इसके पश्चात एक साथ चुनाव की यह प्रक्रिया लगातार तीन आम चुनाओं तक जारी रही उदाहरण वर्ष 1957, 1962 और 1967 की अवधि के चुनाव। लोकसभा के और कुछ राज्य विधानसभा के समय से पूर्व विघटन हो जाने के कारण एक साथ चुनाव की प्रक्रिया का यह चक्र बाधित हो गया, उनमें शामिल थे।

1. 1968 में हरियाणा विधानसभा।
2. 1969 में बिहार और पश्चिम बंगाल विधानसभा में।
3. 1970 में लोकसभा।
4. पांचवी लोकसभा (1971 में आम चुनाव) का कार्यकाल 1977 तक बढ़ा दिया गया।

एक राष्ट्र एक चुनाव को लागू करने के संवैधानिक प्रावधान

भारत इतना विविधता पूर्ण एवं विस्तृत राष्ट्र की यहां पर एक साथ चुनाव करवाना टेढ़ी खीर है। भारत का संविधान ब्रिटेन के संविधान की तरह लचीला नहीं है अपितु यह कठोर है इसलिए इस प्रक्रिया को लेकर लोगों के मन में संदेह हो जाता है। यद्यपि हमारे संविधान निर्माताओं ने सांसदों को संविधान में संशोधन का विकल्प दिया है लेकिन यह प्रक्रिया इतनी सरल नहीं है अपितु अत्यंत ही लंबी और बोझिल है एक साथ चुनाव करवाने की प्रक्रिया वर्तमान संवैधानिक ढांचे में संभव नहीं है। इसलिए हमें इस नीति को लागू करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण संवैधानिक संशोधन करने की आवश्यकता है जो कि निम्नलिखित है –

अनुच्छेद–83

यह अनुच्छेद संसद के दोनों सदनों राज्यसभा (उच्च सदन) और लोकसभा (निम्न सदन)की अवधि का प्रावधान करता है।

इसके अनुसार राज्यों की परिषद तब तक भंग नहीं होगी जब तक कि उसके एक तिहाई सदस्य हर दूसरे वर्ष की समाप्ति के तुरंत बाद सेवानिवृत्त ना हो जाएं यह विघटन संसद द्वारा बनाए गए प्रावधानों के अधीन होगा।

संसद आपातकाल की उद्घोषणा के अधीन है अर्थात आपातकाल की स्थिति में (लागू होने पर)दोनों सदनों का कार्यकाल अधिकतम 1 वर्ष की अवधि के लिए बढ़ाया जा सकता है। जबकि साधारण स्थिति में लोकसभा का कार्यकाल 5 वर्ष की अवधि तक रहेगा जब तक कि इसे पहले भंग किया जाए।

अनुच्छेद–172

यह अनुच्छेद राज्य विधान मंडलों की अवधि बताता है इसके अनुसार प्रत्येक राज्य विधानमंडल 5 वर्ष की अवधि तक कार्य करता रहेगा जब तक कि उसे पहले भंग न कर दिया जाए। प्रत्येक राज्य की विधान मंडल आपातकालीन उद्घोषणा के अधीन है और किसी भी राज्य में आपातकाल की उद्घोषणा होने पर उस राज्य के विधानमंडल की अधिकतम अवधि 1 वर्ष के लिए बढ़ाई जा सकती है।

संविधान के खंड 2 में कहा गया है विधान परिषद तब तक भंग नहीं होगी जब तक कि प्रत्येक दूसरे वर्ष की समाप्ति पर एक तिहाई सदस्य सेवानिवृत्त ना हो जाएं विघटन इस संबंध में संसद द्वारा बनाए गए प्रावधानों के अधीन है।

अनुच्छेद–85

संविधान का अनुच्छेद 85(बी) भारत के राष्ट्रपति को लोकसभा को भंग करने का अधिकार देता है यदि राष्ट्रपति को लोकसभा को भंग करना सही लगता है तो वह लोकसभा अध्यक्ष को एक उद्घोषणा और एक नोटिस द्वारा ऐसे सदन को भंग कर सकते हैं।

अनुच्छेद 174 और अनुच्छेद 356

संविधान का अनुच्छेद 174(2)(b) राज्य के राज्यपाल को विधानसभा भंग करने का अधिकार देता है यदि राज्यपाल को ऐसा करना उचित लगता है तो वह एक उद्घोषणा कर सकता है और राज्य विधान मंडल के अध्यक्ष को एक नोटिस देकर ऐसी विधानसभा को भंग कर सकता है।

संविधान के अनुच्छेद 356 के अनुसार आपातकाल की स्थिति में राज्य राष्ट्रपति शासन के अधीन होता है तथा भारत के राष्ट्रपति द्वारा विधानसभा को समय से पहले भंग किया जा सकता है।

'दल बदल विरोधी अधिनियम' 1985' के सानिध्य में राष्ट्रपति के शासन की घोषणा काफी सख्त है।

'एस आर 'बोम्मई बनाम भारत संघ' के मामले में उच्चतम न्यायालय ने दिशा निर्देश जारी किए हैं जिसके अनुसार –

1. भारत के राष्ट्रपति द्वारा राज्य विधानसभा का विघटन संसद के दोनों सदनों की सहमति के अधीन है। और
2. राष्ट्रपति शासन की घोषणा की वैधता न्यायिक समीक्षा के अधीन है यदि जांच के दौरान आपातकाल की घोषणा दुर्भावनापूर्ण (गलत) पाई जाती है तो अदालत राष्ट्रपति शासन को रद्द कर सकती है और पूर्ववत सरकार को बहाल कर सकती है।

अनुच्छेद 75 (3)

इस अनुच्छेद के 75(3) में कहा गया है की मंत्रिपरिषद सीधे और सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति उत्तरदाई होगा मंत्रिपरिषद अपनी वैधता विधायिका से प्राप्त करती है और सत्ता में तब तक बनी रहती है जब तक इसे विश्वास मत प्राप्त होता है यदि लोकसभा में अविश्वास मत पारित हो जाता है। तो मंत्रिपरिषद (सरकार) गिर जाती है अविश्वास प्रस्ताव पास होने के पश्चात लोकसभा में यह स्थिति कभी भी उत्पन्न हो सकती है।

अनुच्छेद 324

इस अनुच्छेद के द्वारा चुनाव आयोग को लोकसभा और राज्य विधान परिषदों के चुनाव की निगरानी, निर्देशन और नियंत्रण करने की शक्ति प्राप्त होती है।

दसवीं अनुसूची

यह अनुसूची दल बदल विरोधी कानूनों से संबंधित है यह सांसद या विधायक को किसी प्रस्ताव पर वोट देने पर पार्टी हित की अवज्ञा करने से रोकता है इसके अनुसार कोई सदस्य तब अयोग्य हो जाता है जब वह किसी विरोधी पार्टी में शामिल होने के उद्देश्य से स्वेच्छा से किसी पार्टी की सदस्यता त्याग देता है।

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951

भारत में चुनाव प्रक्रिया के लिए भारत के चुनाव आयोग को दी गई शक्तियों के अतिरिक्त संसद ने जन प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 अधिनियमित किया है यह भारत में चुनाव कराने के विभिन्न तौर–तरीकों को शामिल करता है और चुनाव कराने के संबंध में हर विवरण देता है जैसे गिनती की विधि, परिणाम घोषणा, विवादों का समाधान आदि।

इस प्रकार से एक राष्ट्र एक चुनाव की नीति को प्रभावी रूप लागू में करने के लिए संविधान के उपरोक्त अनुच्छेदों में संशोधन करना पड़ेगा। इन संशोधनों के उद्देश्य से सांसदों को भारत के संविधान के अनुच्छेद 368 में निर्धारित नियमों का पालन करना होगा।

एक साथ चुनाव क्यों

आदर्श आचार संहिता (Model code of conduct IMCC) के कारण विकास कार्यक्रमों और शासन पर प्रभाव –

- लोकसभा के आम चुनाव के दौरान आदर्श आचार संहिता पूरे देश में और विधानसभाओं के चुनाव के दौरान पूरे राज्य में लागू होती है जिन राज्यों में चुनाव रहता है।
- प्रभावी रूप से नियमित प्रशासनिक गतिविधियों को छोड़कर अन्य विकास कार्यक्रम कल्याणकारी योजना और पूंजीगत परियोजनाएं इत्यादि तब तक निलंबित रहती हैं जब तब आचार संहिता उस क्षेत्र में लागू रहती है।
- नीति आयोग के एक विश्लेषण से पता चलता है कि किसी राज्य विधानसभा के चुनाव के लिए आदर्श आचार संहिता की औसत अवधि 2 महीने मानते हुए हर साल देश के किसी न किसी क्षेत्र में लगभग 4 महीने या उससे अधिक समय तक आदर्श आचार संहिता के लागू होने की उम्मीद रहती है।

भारत सरकार और राजनीतिक दलों द्वारा किया जाने वाला भारी आवर्ती व्यय

- चूंकि चुनाव समय–समय पर होते रहते हैं इसलिए भारत सरकार लोकसभा का 100% और राज्य विधानसभाओं का 50% खर्च वहन करती हैं। इसी तरह राज्य सरकारें

- विधानसभा चुनाव का 50% और स्थानीय निकाय के चुनाव का 100% खर्च वहन करते हैं।

उपरोक्त राशि हालांकि विशाल नहीं है (लोकसभा के लिए 4000 करोड़ रुपए और गुजरात जैसे बड़े राज्यों के लिए लगभग 3000 करोड़ रुपए) फिर भी चुनाव एक साथ होने पर इसे अनुकूलित किया जा सकता है।

- क्योंकि किसी ना किसी राज्य में अक्सर चुनावी प्रक्रिया होती रहती है इसलिए राजनीतिक दल धन की प्राप्ति और प्रवाह को निम्न तर जारी रखने की आवश्यकता के बारे में चिंतित रहते हैं समाचार रिपोर्टों के अनुसार 2019 के लोकसभा चुनाव की लागत 60 हजार करोड़ रुपए थी जो 2014 में खर्च किए गए राशि का लगभग 2 गुना है।

- चुनावों में लगातार धन जुटाने और खर्च करने के इस दुष्चक्र के कारण अक्सर देश में काले धन और भ्रष्टाचार की मात्रा में वृद्धि होती है। 2019 में चुनाव आयोग में 3377 करोड रुपए की बेहिसाब नगदी जप्त की जो 2014 के चुनाव में जप्त की गई राशि से लगभग 3 गुनी अधिक थी।

लंबी अवधि के लिए सरकारी अधिकारियों और सुरक्षा बलों की नियुक्ति

- भारत जैसे बड़े देश में चुनाव कराना एक विशाल जटिल और समय लेने वाली गतिविधि है। चुनाव आयोग सुचारू, शांतिपूर्ण और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित कराने के लिए बड़ी संख्या में सरकारी अधिकारियों, शिक्षकों तथा अन्य कर्मचारियों के साथ–साथ सशस्त्र बलों (CRPF), राज्य पुलिस, होमगार्ड आदि की मदद लेता है।

- 2019 के लोकसभा चुनाव में 1 करोड़ से अधिक सरकारी अधिकारी इस प्रक्रिया में शामिल थे विशेषकर सशस्त्र बलों के ऐसी स्थिति अनुचित है क्योंकि यह ऐसे सशस्त्र बलों के एक हिस्से को छीन लेती है जिससे अन्य आंतरिक सुरक्षा के उद्देश्यों के लिए तैनात किया जा सकता था।

नीति निर्माण और शासन पर प्रभाव

- बार–बार चुनाव होने से सरकार और राजनीतिक दल लगातार प्रचार मोड़ में रहते हैं।

- चुनावी मजबूरियां नीति निर्माण का फोकस बदल देती हैं और दूरदर्शी लोक लुभावन और राजनीतिक रूप से सुरक्षित उपायों को कठिन संरचनात्मक सुधारों पर उच्च प्राथमिकता दी जाती है। जो दीर्घकालिक परिपेक्ष्य में जनता के लिए अधिक फायदेमंद हो सकते हैं।
- इससे शासन व्यवस्था के उचित अनुरूप से संचालन में कमी आती है और सार्वजनिक नीतियों और विकासात्मक उपायों के डिजाइन और वितरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

एक राष्ट्र एक चुनाव को भारत में लागू करने में संभावित चुनौतियां

1. इसके क्रियान्वयन से क्षेत्रीय दलों के महत्व में कमी आएगी क्योंकि क्षेत्रीय दल चुनाव पर खर्च और चुनावी रणनीति के मामले में राष्ट्रीय दलों से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाएंगे। राज्य विधानसभा चुनावों में स्थानीय मुद्दे और स्थानीय मतदाता बेहद अहम होते हैं इसलिए क्षेत्रीय दल एक साथ चुनाव का समर्थन नहीं करते इससे राजनीतिक समझौते का मुद्दा एक बार फिर केन्द्र में आ जाता है।
2. सभी राज्यों केंद्र शासित प्रदेशों और लोकसभा में एक साथ चुनाव कराना एक कठिन चुनौती होगी क्योंकि इसमें विशाल मशीनरी और संसाधनों की आवश्यकता होगी।
3. दोनों चुनाव को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय और राज्य के मुद्दों के मिश्रण की आवश्यकता होगी नहीं तो राज्यों के ऊपर राष्ट्रीय चिंताओं का साया होगा और राज्य के अपने निजी मुद्दे हाशिए पर चले जाएंगे जिसके कारण कानून निर्माता इस पर कम ध्यान देंगे।
4. संघीय सिद्धांत जिसके अनुसार प्रत्येक राज्य में राजनीतिक संघर्ष के लिए अपना स्वयं का ढांचा विकसित किया है एक साथ चुनाव कराने पर रोक लगाता है इस प्रकार एक साथ चुनाव का प्रभाव राज्यों को राजनीतिक स्वायत्तता पर भी पड़ेगा।
5. पंचायतों, विधानसभाओं और लोकसभा के चुनाव करवाना वास्तव में उतनी सरल प्रक्रिया नहीं है जितनी दिखाई देती है जैसे–जैसे शहर और गांव मतदान के लिए तैयार होंगे कई जटिलताएं होंगी। सुरक्षा, रसद, उपकरण और प्रशासनिक कर्मियों की कमी हो सकती है, मतदान स्थलों पर सतर्कता की कमी से अधिक कठिनाई उत्पन्न हो सकती है।

भारत में एक राष्ट्र एक चुनाव का व्यावहारिक रूप से क्रियान्वयन कैसे होगा?

भारत में विगत कुछ वर्षों में हुई सरकारी कार्रवाईया एक राष्ट्र एक चुनाव सिद्धांत पर आधारित प्रतीत होती हैं जीएसटी व्यवस्था एक राष्ट्र एक कर के सिद्धांत पर आधारित है इसी तरह से एक राष्ट्र एक पाठ्यक्रम का निर्माण नई शिक्षा नीति का हिस्सा है इसी और आगे बढ़ते हुए नीति आयोग में भी एक राष्ट्र एक चुनाव का एक प्रस्तावित मॉडल पेश किया है जो निम्नलिखित है।

प्रासंगिक मुद्दे	प्रस्तावित समाधान
एक साथ चुनाव लागू करने की संभावित तारीख	18वें लोकसभा चुनाव (2024) से शुरू हो सकता है कार्यान्वयन
राज्य विधानसभाओं की शर्तों को कैसे समकालिक करें	सबसे व्यवहार्य समाधान के रूप मे दो चरण के चुनावों का प्रस्ताव रखा। चरण। (लोकसभा + 14 राज्य) मई–जून 2024 में, चरण।। (शेष राज्य) : 2.5 साल बाद अक्टूबर–नवंबर 2026 में कुछ सुझाए गए नियमों के आधार पर विभिन्न राज्य विधानसभाओं के कार्याकाल में एक बार विस्तार या कटौती की आवश्कता होगी/रूपरेखा इसके लिए कुछ सवैधाविक और वैधानिक संशोधन की आवश्कता होगी
क्या विधानसभा/ लोकसभा का कार्यकाल तय किया जाना चाहिए और एक साथ चुनाव में निरंतरता कैसे सुनिश्चित की जाए	निश्चित अवधि प्रस्तावित नहीं है इसके बजाय, इस मामले में चुनाव आयोग की प्रासंगिक सिफारिशों पर विचार किया जा सकता है (नीति आयोग नोट में विवरण)। इसके लिए कुछ संवैधानिक और वैधानिक संशोधन की आवश्कता होगी।

Source: NITI Aayog Note on Simultaneous Elections by Bibek Debroy and Kishore Desai.

निष्कर्ष

राजनीतिक वर्ग नागरिकों को एक ऐसा शासन ढांचा प्रदान करने के लिए बाध्य है जो उसकी आबादी की जरूरतों को पूरा करने के लिए सबसे उत्तम हो क्योंकि बार–बार चुनाव कराने की वर्तमान व्यवस्था के कारण सरकार अपना वह फोकस खो रही है जिसके लिए वह शासन में आती है। इसलिए यह जरूरी है कि ढांचागत बदलाव लाया जाए और एक साथ चुनाव ऐसा संरचनात्मक परिवर्तन है और यह बहुत संभव है क्योंकि हमारा संविधान बदलते

समय और देश की जरूरतों के अनुरूप संशोधन करने के लिए पर्याप्त अनुकूलता प्रदान करता है।

हालांकि एक राष्ट्र एक चुनाव की व्यवस्था को लागू करने में अल्पकालिक दर्द होगा परंतु यह बेहतर प्रशासन और चुनावी सुधारों की एक बड़ी शुरुआत की दिशा में एक उचित कदम होगा एक ऐसा उपाय जो भारतीय राजनीति को फिर से मजबूत कर सकता है इसलिए असली मुद्दे संभावित हित धारकों और राजनीतिक दलों को एक साथ चुनाव के विचार पर मजबूत इच्छाशक्ति के साथ सहमत करना है जब एक बार व्यापक सहमति बन जाती है तो परिचालन पहलू और व्यवहार का कोई मुद्दा नहीं रह जाता है और क्रमिक रूप से सारी चीजें होती चली जाती हैं।

संदर्भ

1. *Prof. Dr. Aashutosh Bairagi, One Nation One Election in India: A contemporary Need Vis – a – vis a matter of more Discussion. International Journal of Law Management and Humanities, ISSN: 2581-5369, vol-5, Issue – 2, 2022, Page No – 1726 – 1736.*
2. *Meenakshi Bansal, The concept of One Nation One Election: An Analysis from India Perspective, Think India (Quarterly Journal) ISSN: 0971 – 126, vol – 22, Issue – 4, oct – Dec – 2019, Page – 3077 – 3084.*
3. *Sandeep, One Nation – One Election: Possibilities and Challenges in India, International Journal for Research Trends and Innovation, ISSN: 2456- 3315, vol – 7, Issue – 12, 2022, Page No – 531 – 536.*
4. *Mishra, Kartika, May 4 (2020) Simultaneous Elections – A Boon For India – www.//blog. Iplladers. In/simultaneous. Elections –boon – India/*
5. *Amit Garg, One Nation One Election – A critical Analysis, https://blog. Ipleaders.in/one – nation – one election/*
6. *Amit Singh, One nation One Election: Constitutional Challenges, legal service India E – Journal https://www.legal serviceindia.com/legal/ article – 1763 – one nation one election – Constitutional – Challenges. html*
7. *Desai, Kishore, Simultaneous Elections (One Nation One Election) Brief note on the "What" the "Why" and the "How" of Simultaneous Elections. Page No – 11 Former OSD – NITI Aayog & Economic Advisory council to the Prime Minister.*
8. *Raja, Vidya. (May, 28- 2018) One Nation One Election: Are Simultaneous Polls a good or Bad Idea for India? https://www.thebetterindia.com/143182/ One Nation One election Simultaneous – Polls good or bad.*

ग्रन्थ–समीक्षा

''परिहास–विजल्पितम्''

समीक्षाकर्त्री

प्रो०(डॉ०) श्रीमती गीता त्रिपाठी
अध्यक्ष संस्कृत विभाग,
गनपत सहाय पी०जी० कॉलेज,
सुल्तानपुर, उ०प्र० – 228001

अर्वाचीन संस्कृत सर्जना की अनेक विधाओं में हास्य व्यंग्य एक नूतन विधा के रूप में प्रतिष्ठित हुई है! हास्य व्यंग्य परक रचनायें स्वल्प संख्या में अभी तक विरचित है। वर्तमान जीवनविधि बहुशः तनाव और अतिव्यस्तता से अतिक्रान्त है। हास्य व्यंग्य के माध्यम से व्यक्ति को जहाँ एक ओर साम्प्रतिक समस्याओं और जीवनानुभवों का संज्ञान सरलतया प्राप्त हो जाता है, वहीं दूसरी ओर हास्य से रोचक मनोरंजन तथा आनन्द प्राप्त कर व्यक्ति तनाव रहित होकर अपना शुभ स्वास्थ्य वर्धन भी करता है। हास्य व्यंग्य के विश्रुत कवि डॉ० प्रशस्य मित्र शास्त्री ने ''परिहास–विजल्पितम्'' शीर्षाङ्कित नवीन कृति का प्रणयन कर संस्कृत व्यंग्य रचना क्षेत्र को अप्रतिम योगदान किया है। कृतिकार डॉ० शास्त्री जी हास्य व्यंग्य के माध्यम से वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं जनजन के व्यवहार प्रकारों की अपनी पैनी दृष्टि से व्यंग्यात्मक किन्तु अतिसूक्ष्म विवेचना किया है। हास्य स्व्यं में एक चिकित्सा के रूप में अनुभव किया जाता रहा है, जो सभी मनुष्य के लिए अपरिहार्य रहा है। कवि की घोषणा है कि–

जानन्ति यो न हसनं व्यसनं विहाय
तस्यास्ति जीवनमिदं नितरां निरर्थम्।

मूल संस्कृत श्लोकों का हिन्दी पद्यानुवाद संवलित उक्त रचना कुल नौ प्रकरणों में विस्तारित है। जिसके उपविषयों के रूप में सुहृत–परिहासाः, आपण–परिहासाः, राजनीति–परिहासाः, वैवाहिक–परिहासाः, दाम्पत्य–परिहासाः, माणवक–परिहासाः, विद्यार्थि–परिहासाः, चिकित्सा–परिहासाः तथा विप्रकीर्ण–परिहासाः संज्ञक प्रकरणों का समावेश है। यह काव्यसंग्रह संस्कृत विद्यानुरागियों, शोधार्थियों एवं हास्य रसज्ञों के लिए नितान्त उपयोगी तथा संग्रहणीय है। इसका प्रथम प्रकाशन, अक्षयवट प्रकाशन, 26 बलरामपुर हाउस, इलाहाबाद–211002 से सन् 2019 में हुआ है। मूल्य चार सौ रूपये मात्र हैं।

प्रणेता
डॉ० प्रशस्य मित्र शास्त्री
पूर्व अध्यक्ष, संस्कृति विभाग
फीरोज गांधी कॉलेज, रायबरेली (उ०प्र०)
ISBN : 978-93-80634-50-0
प्रकाशक – अक्षयवट प्रकाशन, प्रयागराज